क्षितिज

समकालीन लघुकथा लेखन की विशिष्ट पत्रिका

● अंक : 13 ● वर्ष : 2022

लघुकथा समालोचना अंक

- सम्पादन :
  सतीश राठी, दीपक गिरकर
- सम्पादक मंडल :
  वसुधा गाडगिल, अंतरा करवड़े, सुरेश रायकवार
- प्रबंध सम्पादन :
  उमेश कुमार नीमा
- कला सम्पादन :
  संदीप राशिनकर
- परामर्श मंडल :
  सूर्यकांत नागर, ज्योति जैन, पुरुषोत्तम दुबे, अश्विनी कुमार दुबे, चरण सिंह अमी, प्रदीप नवीन
- विधिक सलाहकार :
  सुभाष त्रिवेदी
- क्षेत्रीय सलाहकार :
  उज्जैन : **संतोष सुपेकर** भोपाल : **कांता राय**
  नीमच : **बालकृष्ण नीमा** चेन्नई : **बी.एल.आच्छा**
  अयोध्या : **हनुमानप्रसाद मिश्र** जबलपुर : **पवन जैन**
  छिंदवाड़ा : **पवन शर्मा**
- विशेष सहयोग : **अदिति सिंह भदोरिया, ब्रजेश कानूनगो, दिलीप जैन, दौलतराम आवतानी, जितेन्द्र गुप्ता, किशन कौशल शर्मा, ललित समतानी, नरेन्द्र जैन, निधि जैन, रश्मि चौधरी, राममूरत राही, सीमा व्यास, आर.एस. माथुर, विश्वबंधु नीमा, विनीता शर्मा, यशोधरा भटनागर, चंद्रा सायता**
- सम्पादन/संचालन : **अवैतनिक/अव्यावसायिक**
- लेआउट-डिजाइन : **नितिन पंजाबी** (वी.एम.ग्राफिक्स, इंदौर)
- सहयोग राशि : **रु. 200/-**

- सम्पर्क : क्षितिज, आर-451, महालक्ष्मी नगर, इंदौर-452 010 (म.प्र.)
  ई-मेल : rathisatish1955@gmail.com

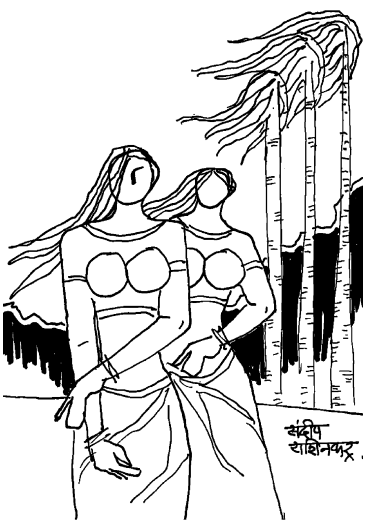

इस अंक में प्रकाशित रचनाओं के लिए लेखक उत्तरदायी है। प्रकाशक या सम्पादक का इनसे सहमत होना अनिवार्य नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र इन्दौर रहेगा।

भूमिका

लघुकथा समालोचना अंक के बहाने

● सतीश राठी

क्षितिज का पिछला अंक संवादात्मक शैली की लघुकथाओं पर प्रकाशित किया गया था। उसके पहले पाठकों के द्वारा पढ़ी गई लघुकथाओं पर पाठकीय समालोचना को शामिल करते हुए क्षितिज का लघुकथा विवेचना अंक निकाला गया था। शैशव काल से ही क्षितिज संस्था ने विभिन्न प्रतियोगिताओं के माध्यम से लघुकथा के कला पक्ष, शिल्प, भाषा, संवाद, शैली आदि पर निरंतर चर्चा की है, लेकिन समालोचना पर केंद्रित करते हुए कोई अंक संभवतः नहीं आ पाया। इसी बात को ध्यान में रखते हुए इस अंक में कुछ समालोचना आलेखों के साथ लघुकथा पर बातचीत की गई है और विभिन्न चर्चा की गई लघुकथाओं को शामिल भी किया गया है। इसके साथ ही क्षितिज ने इस वर्ष नए लेखन को सामने लाने के लिए और उसकी उत्कृष्टता को प्रस्तुत करने के लिए न सिर्फ एक स्तम्भ उत्कृष्ट लघुकथा के नाम से क्षितिज के व्हाट्सएप ग्रुप पर श्री दीपक गिरकर के माध्यम से संचालित कर रखा है, अपितु क्षितिज ने एक लघुकथा प्रतियोगिता का भी आयोजन इस वर्ष किया है, जिसमें मौलिक अप्रकाशित लघुकथाओं को आमंत्रित कर उनमें से श्रेष्ठ लघुकथाओं को चयन कर उन्हें इंदौर के दिवंगत लघुकथाकारों के नाम से स्थापित सम्मान के साथ सम्मानित करने का काम किया है। यह दिवंगत लघुकथाकार सर्वश्री श्यामसुंदर व्यास, निरंजन जमीदार, चंद्रशेखर दुबे, सुरेश शर्मा, विक्रम सोनी, सतीश दुबे, एन उन्नी हैं। इनके अतिरिक्त क्षितिज पत्रिका के कला पक्ष को प्रारंभ से देखने वाले श्री पारस दासोत के नाम पर भी सम्मान प्रदान किया जा रहा है। पिछले दिनों दिवंगत सर्वश्री मधुदीप, रवि प्रभाकर एवं सतीशराज पुष्करणा के नाम पर भी विजेता लघुकथाकारों को सम्मान प्रदान किए जा रहे हैं। इन सम्मानित लघुकथाओं को भी इस अंक में स्थान दिया गया है। इसके परिप्रेक्ष्य में भी हमारा आशय यही है कि लघुकथाओं की उत्कृष्टता सामने आती रहे और उस पर आलोचनात्मक कार्य होता रहे। जब लघुकथा की आलोचना के इतिहास की हम बात करते हैं तो हमारा ध्यान सतीशराज पुष्करणा के द्वारा संपादित 'लघुकथा बहस के चौराहे पर' पुस्तक पर जाता है, जिसमें उन्होंने विस्तार से बहुत सारे लघुकथा आलेखों को शामिल किया था और लघुकथा पर बहुत कुछ व्याकरण सम्मत बातें शामिल की गई थी। उस

कालखंड में बहुत सारी लघु पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन निरंतर जारी था और यह सारी पत्रिकाएँ लघुकथा पर आलोचनात्मक आलेखों का निरंतर प्रकाशन कर रही थी। लघुकथा की आलोचना के लिए अलग से आलोचक तो शायद उस समय उपलब्ध नहीं हो पाते थे, लेकिन लघुकथा लेखकों ने ही समालोचना का दायित्व भी बड़ी आसानी से और बड़े अच्छे तरीके से संभाल लिया था। उस समय दिल्ली के प्रकाशक श्री मधुदीप ने भी 'पड़ाव और पड़ताल' के माध्यम से एक खंड प्रस्तुत किया था, जिसे बाद में उन्होंने एक पुस्तक प्रकाशन सीरीज के माध्यम से प्रस्तुत किया और उनके द्वारा किया गया लगभग 36 खंडों का यह कार्य लघुकथा समालोचना के क्षेत्र में मील के पत्थर के रूप में स्थापित हुआ है। इन लघुकथा खंडों में बहुत सारे लघुकथा लेखकों के द्वारा समालोचनात्मक आलेख लिखे गए हैं। आज के वक्त में भी यदि हम देखें तो बलराम अग्रवाल, अशोक भाटिया, योगराज प्रभाकर, कांता राय, अशोक जैन, उमेश महादोषी, माधव नागदा, जितेंद्र जीतू, सुकेश साहनी, कमल चोपड़ा, बी.एल. आच्छा, भगीरथ, अनिल शूर आजाद, रामनिवास मानव आदि निरंतर कार्य कर रहे हैं। अशोक भाटिया की बहुत सारी पुस्तकें लघुकथा समालोचना पर आ चुकी हैं तथा योगराज प्रभाकर 'लघुकथा कलश' के माध्यम से लघुकथा समालोचना पर विस्तार से कार्य कर रहे हैं। कांता राय ने भी 'लघुकथा वृत्त' अखबार के माध्यम से और विभिन्न प्रकाशनों के माध्यम से लघुकथा की समालोचना पर निरंतर कार्य किया है। एक माह में 15 के लगभग लघुकथा की समालोचनात्मक गोष्ठियों को करना बहुत बड़ा काम होता है और लघुकथा शोध केंद्र में अपनी टीम के साथ कांता राय जी ने इस कार्य को बड़ी सफलता के साथ निर्वहन किया है। पंजाब में भी इस विषय पर बहुत सारा कार्य हुआ है। डॉ. श्याम सुंदर अग्रवाल, डॉ. श्याम सुंदर दीप्ति और उनकी टीम के बहुत सारे लोगों ने न सिर्फ पंजाबी में अपितु हिंदी में भी समालोचना पर महत्वपूर्ण कार्य किया है। समालोचना पर डॉक्टर कमल किशोर गोयनका की भी एक पुस्तक देखने में आई थी, उसके पश्चात उनका कोई काम सामने नहीं आया। कथाकार बलराम ने लघुकथा के प्राचीन समय से लघुकथा की आलोचना के क्षेत्र में और लघुकथाओं को प्रस्तुत करने के क्षेत्र में बहुत काम किया है। भारत की लघुकथाओं पर, विश्व की लघुकथाओं पर और बहुत सारे आलोचना खंडों का प्रकाशन कर उन्होंने लघुकथा की स्थापना करने में अपना महती योगदान प्रदान किया है। विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में लघुकथा को शामिल करने का उनका प्रयास निरंतर जारी है। किसी वक्त में सतीश दुबे और विक्रम सोनी ने भी इस क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया है।

सातवें दशक से जिन साहित्यकारों ने लघुकथा समालोचना के क्षेत्र में काम किया है उनमें से कुछ प्रमुख का नाम उल्लेख इस प्रकार है। सातवें दशक में प्रमुखतः सुरेन्द्र मंथन, सतीश दुबे, पूरन मुद्गल, भगीरथ के नाम हैं। आठवें दशक में भगवान प्रियभाषी, शशि कमलेश, त्रिलोकीनाथ बृजवाल, मोहन राजेश, रमेश बतरा, बलराम, जगदीश कश्यप, बलराम अग्रवाल, कुलदीप जैन, अशोक भाटिया आदि रहे हैं। भगीरथ, अशोक भाटिया, बलराम अग्रवाल, सुकेश साहनी, कमल चोपड़ा, रामेश्वर कांबोज, सूर्यकांत नागर आदि कई ऐसे नाम हैं जो तब से निरंतर लघुकथा समालोचना के कार्य को गंभीरता के साथ करते जा रहे हैं। लघुकथा समालोचना पर बहुत महत्वपूर्ण काम डॉ. रामकुमार घोटड द्वारा किया गया है। उनके द्वारा इस संदर्भ में निरंतर कई किताबों का प्रकाशन भी किया गया है। अविराम साहित्यकी पत्रिका के माध्यम से उमेश महादोषी ने भी लघुकथा की समालोचना पर निरंतर आलेख लिखे हैं और उनके आलेख कई पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित भी हुए हैं। इन पंक्तियों के लेखक ने भी बलराम के द्वारा प्रकाशित की गई पुस्तकों के साथ अन्य कई पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकों में समालोचनात्मक आलेखों को लिखने का काम किया है, जिन पर काफी चर्चा भी हुई है।

डॉ. पुरुषोत्तम दुबे लघुकथा पर निरंतर समालोचनात्मक लेखन का काम करते आ रहे हैं। क्षितिज संस्था के द्वारा उन्हें इस संदर्भ में सम्मानित भी किया गया है। समालोचना कार्य के लिए क्षितिज द्वारा वर्ष 2018 में प्रोफेसर बी.एल. आच्छा को सम्मानित किया गया था। वर्ष 2012 के बाद लघुकथा समालोचना पर उन्होंने बहुत लिखा है। उनका लेखन बहुत श्रम साध्य है तथा विवेचना में सारे बिंदु शामिल कर लेना उनके स्वभाव में हैं। डॉ. जितेंद्र जीतू ने लघुकथा के सौंदर्यशास्त्र पर लिखा है और इसके अतिरिक्त भी लघुकथा की समालोचना पर उनका काफी काम सामने आया है। उन्हें इस वर्ष क्षितिज द्वारा समालोचना के लिए सम्मान प्रदान किया जा रहा है। माधव

नागदा भी इसी परंपरा के लेखक हैं निरंतर आलेख लिखने का काम उनके द्वारा किया जाता रहा है। लघुकथाओं का विश्लेषण करना उनका मनपसंद कार्य है। उन्हें भी क्षितिज संस्था ने इस कार्य के लिए सम्मानित किया है।

क्षितिज ने अपनी परंपरा का निर्वहन करते हुए निरंतर हर दिशा में कार्य किया है। लघुकथा लेखन पर कार्यशाला आयोजित की गई है। लघुकथाओं का मंचन करवाया गया है। लघुकथाओं की पोस्टर प्रदर्शनी लगाई गई है। वर्ष 2018 से निरंतर लघुकथा के लिए कार्य करने वाले लघुकथाकारों का सम्मान किया जा रहा है।

सुरेश चन्द्र गुप्त, डॉ. स्वर्ण किरण, विनय विश्वास, भारतेंदु मिश्र, डॉ. सुलेख चन्द्र शर्मा, सुभाष चन्दर, डॉ. शैलेंद्र कुमार शर्मा, मुकेश शर्मा, प्रो. ऋषभ देव शर्मा, मृत्युंजय उपाध्याय, डॉ. हरनाम शर्मा, सुभाष नीरव, अशोक लव, डॉ. योगेंद्र नाथ शुक्ल, डॉ. मलय पानेरी, श्याम सुंदर दीप्ति, पवन शर्मा, रामेश्वर कम्बोज हिमांशु, सूर्यकांत नागर, डॉ. सुभाष रस्तोगी, कृष्ण कमलेश, निशांत, रामयतन यादव, हरदान हर्ष, हरीश नवल, महेंद्रसिंह महलान, शील कौशिक, पुष्पा जमुआर, रामकुमार आत्रेय, अंतरा करवड़े, हंसराज अरोड़ा, विकेश निझावन, हीरालाल नागर, प्रभुदयाल खट्टर, भगवान प्रियभाषी, शशि राजेश, सुशील राजेश, नीलम कुलश्रेष्ठ, अशोक कुमार खन्ना, सुशीला सितारिया और इनके साथ कई सारे ऐसे नाम हैं जिन्होंने लघुकथा पर छुटपुट अलग-अलग स्थानों पर समीक्षात्मक कार्य किया है। श्री दीपक गिरकर ने लघुकथा समीक्षा पर निरंतर बहुत महत्वपूर्ण कार्य किया है तथा उनके द्वारा की गई समीक्षा को सर्वत्र सराहना प्राप्त हुई है।

लघुकथा पर समालोचनात्मक आलेख लिखने का कार्य बड़ी मेहनत के साथ उज्जैन शहर के श्री सन्तोष सुपेकर के द्वारा भी किया गया है। भोपाल शहर लघुकथा के क्षेत्र में बड़ी मेहनत के साथ कार्य कर रहा है। कांता राय जी के निर्देशन में वहाँ पर कई लोग समालोचनात्मक लेखन का कार्य कर रहे हैं। उनके द्वारा प्रकाशित किए जा रहे समाचार पत्र लघुकथा वृत्त में भी निरंतर समालोचनात्मक आलेख प्रकाशित होते रहते हैं।

प्रस्तुत अंक में बलराम अग्रवाल के द्वारा ऋग्वेद में कथा सूत्र तलाश कर उन सूक्तियों के माध्यम से लघुकथा के बीज तक जाने की कोशिश की गई है। माधव नागदा के द्वारा लघुकथा के शिल्प, भाषा और संवेदना पर विस्तार से बातचीत की गई है। श्री बी.एल. आच्छा के द्वारा लघुकथा की सृजन भूमि खोजते हुए समालोचना पर दृष्टि केंद्रित आलेख प्रस्तुत किया गया है। डॉक्टर पुरुषोत्तम दुबे के द्वारा इंदौर शहर के और क्षितिज से संबद्ध लघुकथा लेखकों की लघुकथाओं पर समालोचनात्मक आलेख प्रस्तुत किया गया है। उन्होंने कुछ लघुकथाओं का चयन कर उनकी भाषा, शिल्प, शैली और सौंदर्य बोध की पड़ताल की है। लॉकडाउन में लिखी गई कोरोना काल की लघुकथाओं पर सन्तोष सुपेकर ने एक संवेदना पूर्ण आलेख प्रस्तुत किया है।

क्योंकि इस पत्रिका का प्रकाशन मालवा क्षेत्र के इंदौर शहर से हो रहा है इसलिए मालवा के लघुकथा परिदृश्य पर मेरा एक आलेख भी इसमें शामिल किया गया है। कुल मिलाकर मध्यप्रदेश से लघुकथा समालोचना पर विस्तार से कुछ कार्य प्रस्तुत करने का यह प्रयास किया गया है। सुधि पाठक ही बता पाएँगे कि यह कितना सफल हुआ है।

अनुक्रमणिका

क्र.	आलेख	लेखक	पृष्ठ
1.	लघुकथा : सृजन भूमि और आलोचना दृष्टि	बी.एल. आच्छा	6
2.	लघुकथा में शिल्प, भाषा और संवेदना	माधव नागदा	17
3.	ऋग्वेद में कथा-सूक्त	बलराम अग्र वाल	33
4.	आपदाकाल और लघुकथाएँ	सन्तोष सुपेकर	46
6.	मालवा का लघुकथा परिदृश्य इंदौर के विशेष संदर्भ में	सतीश राठी	51
7.	भाषा, शिल्प, शैली और सौंदर्य बोध की पड़ताल	डॉ. पुरुषोत्तम दुबे	57
8.	क्षितिज साहित्य संस्था लघुकथा प्रतियोगिता 2022 की पुरस्कृत लघुकथाएँ		84
9.	क्षितिज आयोजन समिति		93

लघुकथाएँ

क्र.	लघुकथा/लेखक	पृष्ठ	क्र.	लघुकथा/लेखक	पृष्ठ
1.	दूध/चित्रा मुद्गल	15	23.	सरनेम/ललित समतानी	75
2.	मैं वही भगीरथ हूँ/शरद जोशी	15	24.	जिस्मों का तिलिस्म/सतीश राठी	75
3.	मृगजल/बलराम	15	25.	नो हॉर्न प्लीज/सीमा व्यास	76
4.	बैकग्राउंड/सतीश राठी	16	26.	अबोध कौन/आशागंगा प्रमोद शिरढोणकर	76
5.	चौराहे पर/पारस दासोत	20	27.	टिकली वाली बंदूक/कोमल वाधवनी 'प्रेरणा'	77
6.	रांग नंबर/मुरलीधर वैष्णव	29	28.	सम्मान/यशोधरा भटनागर	77
7.	षड्यंत्र/पवन शर्मा	68	29.	माँ के सूत्र/विजय जोशी 'शीतांशु'	77
8.	इस बार/सन्तोष सुपेकर	68	30.	बेटी बचाओ/अदितिसिंह भदौरिया	78
9.	संगमरमरी आतिथ्य/बी.एल. आच्छा	69	31.	कलयुग की कैकयी/डॉ. संगीता भारूका	78
10.	लाचार/विनीता शर्मा	69	32.	तफ्तीश जारी है/दीपक गिरकर	79
11.	लिफाफा/ब्रजेश कानूनगो	69	33.	रीत/डॉ. संगीता तोमर	79
12.	परोपकारी उवाच/राम मूरत राही	70	34.	अन्नदान/आर.एस. माथुर	79
13.	पनबेसरी/पवन जैन	70	35.	अवगुंठन/दिव्या शर्मा	79
14.	जाके पैर फटे न बिवाई/ज्योति जैन	71	36.	इंसानी बस्ती/डॉ. वसुधा गाडगिल	80
15.	जानवर/कनक हरलालका	71	37.	केसर की छोरी का दसेरा/सूर्यकांत नागर	80
16.	मजबूरी/विजया त्रिवेदी	72	38.	लेकिन खुद/हनुमानप्रसाद मिश्र	81
17.	सीवन/अंजू निगम	72	39.	क्रेडिट कार्ड/राजनारायण बोहरे	81
18.	खालीपन/राजेन्द्र वामन काटदरे	73	40.	अदला बदली/अनघा जोगलेकर	81
19.	जीवन की पूँजी/सुषमा व्यास 'राजनिधि'	73	41.	स्वामिनी/विजयसिंह चौहान	82
20.	अनाथ वृक्ष/दिलीप जैन	74	42.	वीराने में बहार/डॉ. चंद्रा सायता	82
21.	सुनामी सड़क/चेतना भाटी	74	43.	लहर/अंतरा करवड़े	83
22.	एक्सीडेंट/डॉ. योगेन्द्र नाथ शुक्ल	74			

लघुकथा : सृजन भूमि और आलोचना दृष्टि

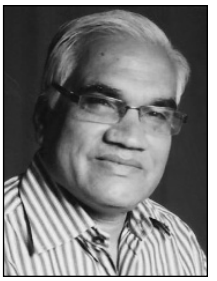

● बी.एल. आच्छा

साहित्य एक व्यापक संज्ञा है और विधाएँ उसकी अभिव्यक्ति का सहज प्रतिबिम्ब। विधाओं की विषयगत या भावगत अनुरूपता होती है। मसलन गीत के लिए जो अंतरंग भाव सघनता की लय चाहिये तो कथा-कुल के लिए गद्य का पठार। पर ऐसा भी नहीं कि कविता में लय ही लय होती हो और गद्य-कुल में भाव सघनत से रिश्ता नाता न हो। इसीलिए आज की कविता में गद्य-अभिव्यक्ति ने भी ताल ठोककर पहचान बनाई है और कथा-साहित्य भी गद्य गीत का लय में संक्रमित हुआ है। यह परिवर्तन जब रचनाओं में घटित होता रहता है तो भी आलोचक की दृष्टि इस बदलाव को परखती है। और जब युग सापेक्ष संवेदन या वैचारिक सम्बोध में भावान्तर आता है तब भी वह पड़ताल का विषय बनती है। तो क्या इस बदलाव को किसी सुनिर्धारित शास्त्र से, फॉर्मेट से, सुनिश्चित मानकों से तौलना चाहिये? स्पष्ट है कि रचना में बदलाव आया है और वह प्रवाह यदि कन्टेन्ट और फॉर्म में भी उभरा है तो मूल्यांकन के मापदण्ड स्थायी नहीं हो सकते। रचना का तापमान अलग तरह का है तो बैरोमीटर भी बदलाव के लिए प्रतिशत है। पर इसका अर्थ यह भी नहीं कि पुराना शास्त्र खारिज हो जाता है और नए को परखने की दृष्टि ही पुराने शास्त्र के हिसाब से बेमानी हो जाती है। कालिदास जब 'पुराणमित्येव न साधुसर्वम्...' की बात करते हुए नए की प्रतिष्ठा भी करते हैं तो तय है कि रचनाधर्मिता में बदलाव आया है, तो कसौटी में भी बदलाव आएगा। आखिर बासी उत्तरों से भी नए सवाल खड़े होते हैं। और साहित्य तो उस रमणीयता का उपासक रहा है जो कहता है- 'क्षणे-क्षणे यवन्नवतामुपैति तदैव रूपं रमणीयतायाः।' कालिदास साहित्य में इसी प्रयोग विज्ञान के उपासक थे और लघुकथा हो या साहित्य की अन्य विधाएँ, ये सभी नवोन्मेषी प्रयोगशीलता की माँग करती है। क्योंकि युग बहुत गतिशील है, तकनीक और विचार में भी; इसलिए साहित्य में यह गतिशीलता और बदलाव दशक-पंचक में उतर आए हैं।

समीक्षा या आलोचना रचनापेक्षी है। शास्त्र तो एक तरह से नौसीखियों के लिए सधी हुई सीढ़ियाँ हैं। पर वे भी इतनी सुगठित है कि न छठी शताब्दी के आचार्य भामद्ध की सर्वथा अनदेखी की जा सकती है, न आचार्य भरत के नाट्यशास्त्र की। हिन्दी में यह बात आचार्य शुक्ल और हजारीप्रसाद द्विवेदी प्रभृति अनेक आलोचकों की परम्परा में पुनराविष्कृत हुई है। वामपंथ में भी और रसवादी आनन्द धारणा में भी। घर बदलाव बहुत आए हैं, मार्क्स, फ्रायड, पूँजीवाद, आधुनिकता, उत्तर आधुनिकता, ग्लोबल से

गुजरते हुए और नई विधाओं के रूपांकन के साथ उनके निरन्तर बदलाव में भी। अब किसी फार्मेट या चौखट से बेधकर लिखना सम्भव नहीं है। यों भी साहित्य हर काल में परम्परा का अतिक्रमण करता है। यदि घनानन्द कहते हैं कि- ''लोग हैं लक्षणी कवित्त बनावत, मोहि तो मोरे कवित्त बनावत।'' लक्षणों के आधार पर निर्मित काव्य व्यक्तित्व एक बात है और स्वानुभूति प्रयोग विज्ञान से निर्मित व्यक्तित्व नितांत अलहदा। इसीलिए शास्त्र को रचनात्मक व्यक्तित्व के विकास की सीढ़ियाँ कहा है। व्यक्तित्व का मूर्ति स्थापन नहीं। श्रेष्ठ रचनाकार पुरानी मूर्तियों को गला भी देता है, नए आविष्करण के लिए। इलियट इसे ट्रेडिशन एण्ड इंडिविजुअल कहते हैं। हम भी जानते हैं कि जब कोई विधा ऑटोमेटिक सी हो जाती है, यहाँ तक कि रचना प्रवाह या वाद भी तो उस पर आघात होता है, नई रचनाधर्मिता अतिक्रमण करती है। पर आलोचक के लिए इन्हीं सोपानों का यानी शास्त्र का ज्ञान जरूरी है और रचनाधर्मिता में आ रहे बदलावों को चीरकर देखने की नई दृष्टि भी। साथ ही इन बदलावों के पैटर्न को समझकर शास्त्रीय दृष्टि को नवनवीन बनाने की। रचना भी बदलती है और शास्त्र भी बदलता है। रचना को समझने के लिए शास भी जरूरी है और रचना के बदलाव को समझने के लिए लोचदार शास्त्रीय दृष्टि की भी।

रचना का अस्तित्व भाषा की सत्ता में होता है। भाव संवेदन की दृष्टि से और बुनावट की दृष्टि से भी। रचनाकार भाषा की अनेक कोटियों का संदर्भित विषय के अनुसार चयन करता है और यह संगठित रूपांकन ही रचना के भीतर तक, उसकी अंतर्वस्तु तक ले जाता है। अलबत्ता संस्कृत काव्य शास्त्र में भाषा को आधारभूत मानते हुए भी रस और ध्वनि की वकालत की है और आत्मवादी तथा देहवादी के तात्विक भेद से अलगाये रखा है। पर रचना की अखण्ड सत्ता कथ्य और रूप के अद्वैत में है, इसलिए मैं भाषा में रची-बसी अंतर्वस्तु तक भाषा के माध्यम से ही जाता हूँ। समूची रचना एक महावाक्य है और त्वचा को फोड़कर निकलने वाला शक्तिमय चूजा या ध्वन्यार्थ भी उसी संरचना से फूटता है। बनावट और बुनावट के भीतर जो ध्वनि है, सन्देश है, संवेदना है, वह भाषा की ही अन्तर्जात है। उसका मीनिंग एरिया बहुत लम्बा हो सकता है, शब्दों के कोशीय या लाक्षणिक अर्थों को छिटकाकर हो सकता है, वह फूटता तो उसी से है।

पुनः शास्त्र पर लौटना चाहूँगा। समीक्षा के दौरान रचना जितना प्रभाव छोड़ती है, उतना ही समीक्षा शास्त्र या आलोचना के मापदण्ड बिन कहे सहयात्री हो जाते हैं। इसका तात्पर्य यह नहीं कि वे उन्हीं पायदानों से गुजरकर सफल होते हैं। बल्कि रचना में नए बदलाव दिखते हैं तो पुराने हूक नहीं मचाते, बल्कि बदलाव को रेखांकित करते हैं, उस बदलाव से रचना में आए नए आस्वाद को तोलते हैं और यदि वह युगीन या व्यक्ति वैशिष्ट्य (आइडोसिंचेली) से अनुप्राणित हैं तो शास्त्र को भी परिमार्जित या सँधित करते हैं। यह रचना की ताकत है, इसीलिए तो रामचरित मानस आचार्य शुक्ल को लोक मंगलवादी उन्मेष देती है, प्रेमचंद को प्रगतिशीलता से जोड़ती है और भाषिक तौर पर नव प्रवर्तनों को पुराने में योजक बनाकर शास्त्र को भी नवनवीन बनाती रहती है। तात्पर्य यही कि शास्त्र और विचारधाराएँ युगीन परिप्रेक्ष्य और प्रयोग विज्ञान के शैलीगत नवाचार समीक्षक के अंतरंग पार्श्व में सक्रिय रहते हैं पर वे रचना के संवेदनात्मक प्रवाह में बाधक नहीं, बल्कि सम्प्रेषणीयता के सतर्क साधक या प्रयत्नशील संवेदी के रूप में बने रहते हैं।

अब सभी विधाओं की अपनी-अपनी विशिष्टताएँ हैं और साहित्य मनीषी किसी एक विधा का ही पारखी बनकर नहीं रह जाता। यों भी कलाएँ अन्तर अनुशासी होती है, संवेदन भी अनेक ज्ञानधाराओं से अन्तर्भूत। और प्रयोगशील रचनाकार समय के संवेदन से अपने भीतर के तर्क को जितना पुष्ट करता है, उतना ही अभिव्यक्ति के नए शिल्पों की तलाश करता है। और करते-करते अन्य विधाओं की विशिष्टता से अपने कथा विन्यास को रूप देने के नएपन तक जाता है, तो जो अन्तः संक्रमण से विशिष्टता आती है, उसे भी पहचानना ही होगा। मसलन लघुकथा का उपदेशात्मक, बोधात्मक रूप अपने नरेटिव में ही होता था, कथाकथन की पद्धति में। जब उसे नाट्य और विजुअल से रचा गया, तो शिल्प के साथ संवेदन की प्रेषणीयता का नया प्रतिमान बना तो लघुकथा जीवन्त हो गई। अभिनय के योग्य तक और अब तो विजुअल माध्यमों में भी प्रभावी। इसलिए रचना को शास्त्र के अनुरूप तोलने के बजाय रचना को चीरकर नए शिल्प संवेदन की पड़ताल करते हुए शास्त्र को भी नजरिये को भी संशोधित और नवनवीन बनाना होगा। पढ़ते समय

रचना कहाँ-कहाँ झटका देती है? कहाँ-कहाँ शब्द अलग ही अर्थ ध्वनित करते हैं? कहाँ मोड़ और यति-गति चौंकाकर नए अर्थ तक ले जाती है? एक संवेदनशील सहयात्री और अर्थविज्ञानी के तौर पर आलोचक हर घुमाव और बदलाव को पकड़ता है। यह जितना सहृदय है, उतना ही तत्वान्वेषी भी।

बात लघुकथा की। कहा गया है कि गद्य कुल की यह सबसे छोटी विधा है। यों उसके उत्स वेद उपनिषद, रामायण-महाभारत, जैन-बौद्ध कथा, पंचतंत्र कथा सरित्सागर उपदेश-बोधकथा में है और अवशेष आज की लघुकथाओं की बुनावट में भी झलक जाते हैं। पर अब इसका आविष्करण नया है। संवेदन और रूपाकार भी। वैचारिक संस्पर्श और बुनावट भी। और यह भी दोनों स्तरों पर प्रयोगधर्मी बना रहेगा। पहली बात आती है कि क्या समीक्षक को आकार की लघुता शब्द संख्या के आधार पर तय करनी चाहिये? मैं शब्द संख्या या आकार में नहीं आँकता? बात इतनी सी है कि जिस सूक्ष्म को, क्षण को, संवेदन को, व्यंग्य को, संदेश को, यथार्थ को रचनाकार लघुकथा में रचना चाहता है, वह यति-गति से गुजरती हुई लघुकथा में कितनी एकाग्रता से उस शिखर तक ले जाती है। अब उसमें अंतःप्रेरणा हो, अन्तर्द्वंद्व हो, मनोविज्ञान हो, समस्या परकता हो, नाटकीय मोड़ हो, चक्रव्यूह हों, छोटे-छोटे समीकरण हों, कल्पना हो, यथार्थ हो, कथा का ताना-बाना हो, कथारस हो, दर्शन हो, अंतर्विरोध हो, बिम्ब हो, प्रतीक हो, विरोधी रंग-योजना हो, मगर वह सब एक देशीय और एक दिशाई हो, सब समेटते हुए त्वरा से अपने शीर्ष संवेदन पर नुकीले स्पर्श से व्यंजित हो जाए। यह स्पर्श-व्यंजना प्रतिक्रिया हो सकती है, विरोध हो सकता है, कोमल का उभार हो सकता है, न्याय की पैरवी में उठा हाथ हो सकता है, विवशता की बॉडी लैंग्वेज हो सकती है। और... और... पर अंतर्गठन तो उत्स से लेकर पूर्णता तक एक दिशा, एक गंतव्य। अब इसे कितने शब्दों में रूपाकृत किया जाए तो शास्त्रीय निर्देश भी साधक है- 'अन्यूनातिरिक्तत्वं मनोहारिणी अवस्थितिः।' न कम, न अतिरिक्त शब्द रचना मनोहारी होती है। तय है कि कथा भी होगी, कथा रस भी, ध्वनियाँ भी, शब्द भी, संवाद भी, कथानकीय मोड़ भी, दृश्य-नाट्य भी, परिवेश भी, चरित्र का ऐकिक संगठन भी, संदेश की दिशा भी। मगर सारा लक्ष्य धावन तो उसी अंतिम बिन्दु के लिए समर्पित है जिसके लिए कथन का रचाव है। इसलिए न प्रासंगिक, न बहुचरित्रीय, न पट्टभूमि। तंतुजाल तो हो लता की तरह, पर उसी में फूल खिलकर मुखर हो जाए। सम्पूर्ण लता की बात नहीं, केवल एक पुष्प के लिए जो तंतुजाल बुना जाता है, बस उसी के प्रतीक के रूप में।

अब कई बार यह भी कहा जाता है कि क्या दो काल और दो कथाएँ समांतर रूप से नहीं चल सकतीं? मेरा मानना है कि हर्ज नहीं है क्योंकि युगांतर को दर्शाने के लिए ऐसा हो सकता है, पर समांतर योजना का उद्देश्य भी एक बिंदु पर जाकर विस्फोट करना है। उदाहरण के लिए भृंग तुपकरी की लघुकथा 'बादशाह बाबर का नया जन्म' में बाबर की शहंशाही सल्तनत और राजेश की बेबसी विरोधी रंग योजना में समांतर कथानक रचते हैं, पर दोनों ही विवशता के शिखर पर माइक्रो हो जाते हैं। या अशोक वर्मा की 'खाते बोलते हैं' के कालान्तर के तीन परिदृश्य, पर मार तो अंतिम परिदृश्य के 'राम भरोसे' के व्यंग्य और सामाजिक-आर्थिक स्थिति पर ही है। इसे काल दोष मानने की जरूरत भी नहीं। लघुकथा चाहे आतिशबाजी में तीर की तरह आकाश में नुकीले क्षण पर विस्फोट कर अपने रंग बिखराए या चक्री की तरह घुमावदार हो जमीनी वृत्त में ही बिन्दु विशेष को जगमगा दे। पर उसका वृत्त समूचे परिदृश्य या चरित्र को प्रकाशी बनाने का नहीं है। 'क्षण' को सीमित अर्थ में लेना ठीक नहीं, उसके साथ वह अनुभूत चक्र भी है, जो एक दिशा में ही अपनी अणु व्यंजना पर संकेन्द्रित होता है। लघुकथा एकरेखीय नहीं है, वह मनःस्थितियों का संघर्ष भी है, विरोध की तल्खी भी है, तटस्थता की चुप्पी की भीतरी व्यथा भी है, समाज शास्त्र का छोटा सा एकांश भी है, चरित्र की माइक्रो झलक भी है, और... और...। इतना जरूर है कि सारा कथा विन्यास अपने व्यंजक शीर्ष के लिए समर्पित हो। लघुकथा न बोन्साई है, न कहानी का लघु संस्करण, इस सूक्ष्म, इस क्षण, इस शीर्ष, इस अणु, इस मेक्रो की संघनित अभिव्यक्ति का पूर्ण बिम्ब उभरकर आ जाए और वह कहानी में परिवर्तित होने की संभावनाओं को भी यह जतलाकर समाप्त कर दे कि इससे व्यंजना का घनत्व बिखर कर अपनी क्षमता को खो देगा। तय है कि ऐसे बुनावट लघुकथा को संक्षिप्त आकार ही देगी, क्योंकि यह सौ मीटर की दौड़ है मैराथन नहीं। तलवार, कटार और चाकू तीन अलग-अलग हथियार हैं, उसी तरह

आज गद्य कुल की सबसे छोटे आकार की लघुकथा अब विधा रूप में स्थापित है, शब्दों की संख्या के आधार पर नहीं, स्वरूप की संभावित पहचान के आधार पर। यह पहचान लक्षणों पर आधारित नहीं, लक्षणों की सिद्ध करते हुए नवोन्मेषी हो। और यह स्वरूप समय और बदलाव के साथ बदलेगा, स्थिर नहीं रह सकता। नहीं कहा जा सकता 'इदमित्थम्'। अब भाषा विज्ञान को ही लीजिये। जनता में व्याकरण की एक अन्तर्निहित व्यवस्था (लेंग्वेज ऑफ कॉम्पीटेंस) होती है और एक नई संभावनाओं (लेंग्वेज ऑफ परफॉर्मेन्स)। इसी तरह से विधा के आधारभूत लक्षण नई संभावनाओं का सदैव अतिक्रमण करते हैं, नया स्वरूप देते हैं। कहना यह भी चाहिये कि कई बार कहानी, उपन्यास में ये क्षण बड़े कैनवास या घटनाक्रम में नहीं आ पाते। लघुकथा ऐसे अहसासी क्षणों, संवेदनाओं, व्यंग्यों, अनुभूतियों को सहज ही उठाकर क्षण को चरितार्थ कर देती है।

यों कथा साहित्य की समीक्षा के लिए एडगर एलेन पो ने छह तत्वों का निर्देश दिया था और आधारभूत सोपान के रूप में किताबी दुनिया में मौजूद हैं- कथानक, पात्र, संवाद, भाषा-शैली, देश-काल और उद्देश्य। ये सभी आज भी कथा साहित्य की हर विधा में मौजूद हैं, मगर तत्वों के विन्यास से न कथा बनती है, न सफलता का प्रतिमान बनती है। बदलाव यहाँ तक हुआ है कि कहीं परिवेश और पात्र के मनोविज्ञान से ही कथा बन जाती है। घटनाचक्र या कथानक तो नई कहानी में 'कथानक के ह्रास' की विशिष्टता में बदल गया था। अलबत्ता कथा तत्व का नियोजन लघुकथा में लात्याचक्र को भी गढ़ता है, कुतूहल की सृष्टि करता है, पात्रों की मनस्थितियों को उभारता है, आरोह-अवरोह या घात-प्रतिघात से तर्क की दिशा गढ़ता है, संदेश या शीर्ष की अभिव्यक्ति के लिए मुकम्मल सोपान रचता है, कथा-रस से पाठक को बाँधे रखता है, एक जीवंत जैविक संरचना के रूप में मनोमय अनुभव को रचता है, कथाचक्र में परिवेश और मनोविज्ञान को भी गूँथता है, पर हर लघुकथा अपने तत्व के लिए नया स्वरूप, नया बिम्ब गढ़ती हुई आती है। प्रयोग के तौर पर ऐसी भी लघुकथाएँ देखी जा सकती हैं, जिनमें वैसा पारंपरिक कथानक नहीं है। मसलन अशोक भाटिया की लघुकथा 'स्त्री कुछ नहीं करती' और 'मेरी अस्तित्व' में। फिर भी इनमें क्रियात्मकता पूरा बिम्ब बनाती है। इस प्रायोगिकता की सार्थकता की नाप यही है कि वर्णनात्मक क्रियाशीलता में कोई चरित्र, कोई संदेश, कोई विवशता, कोई विडम्बना कथानक की तरह ही उसे वहन करने में सक्षम हो पाई है या नहीं।

कथानक संरचना का संस्कृत काव्यशास्त्र में एक रूढ़ प्रतिमान था और वह नाटक में भी- आरंभ, यत्न, प्राप्त्याशा, नियतात्रि और फलागम। दरअसल इसमें भी कथा चक्र की दिशा तो है, पर यह शास्त्रीय प्रतिमान इसलिए काबिज नहीं रहा क्योंकि फलवादी सुखांत के स्थान पर यथार्थवादी और अक्सर विवशताओं का दुखांत जमाने के सोच में प्रतिमान बन गया। तय है कि जो आदर्शवाद हिन्दी लघुकथा की विकास यात्रा में अयोध्याप्रसाद गोयलीय या कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर में था, वह समय सापेक्ष होकर यथार्थ, विडम्बना, विसंगति, विवशता, विरोध से गुजरता हुआ कभी तनी हुई मुट्ठियों का कथा चक्र बन गया या अन्तर्विरोधों-अन्तर्द्वन्दों में पाठकीय स्पर्श बन गया। यह बात इसलिए कहना जरूरी हुआ कि किस तरह से समय, नजरिया और नवोन्मेषी संभावनाएँ शास्त्र का अभिमुखीकरण चाहते हैं और ओरिएंटेशन के अभाव में सिर्फ पुराने साहित्य तक सिकुड़ कर रह जाते हैं। बावजूद इसके कि वे अपने समय के सुचिन्तित प्रतिमान थे। हिन्दी में यह बात आदर्श और यथार्थ की कथा-रचना के द्वंद्व और बदलाव में देखी जा सकती है। पर यथार्थ के बावजूद मन के रसायनों का भावांतरण, संवेदनात्मक तरलता, स्पर्शित अंत, यहाँ तक कि प्रचलित शब्द सकारात्मकता भी आदर्श का ही भावतरल द्रवणांक है और बेहतर इंसानी दुनिया का आंतरिक स्वप्न सर्जक में अंतहीन होता है।

अब कथानक संरचना के रूप भी बदले हैं। कभी जो वर्णनात्मक था, वह फ्लैशबैक में भी प्रयोगी बना। कभी जो घटना प्रधान था, वह फेन्टेसी शिल्प का कथानक बन गया। कभी जो सीमित काल में लघुकथा के रचाव को लेकर चलता था, वह शरद जोशी की लघुकथा 'मैं वही भगीरथ हूँ' में अतीत में छलांग मारकर वर्तमान के क्षण पर मुखर हो गया। कभी चित्रा मुद्गल की लघुकथा 'दूध' में संवादी कथानक रचाकर मुखर हुआ तो चैतन्य त्रिवेदी की 'उल्लास' में वर्णनात्मक शिल्प में भी कथाचक्र रच गया। अब क्या वर्णनात्मक शिल्प को नितांत पुराना बासी कहें और संवादी कथानक को प्रयोगशीलता?

प्रतिमान यही है कि दोनों लघुकथाओं में अपनी तरह की गत्यात्मकता है, अपने शीर्ष संकेत की ओर ले जाने की अपनी राह है। अशोक जैन की 'जिन्दा मैं' तो एकांकी का संवादी दृश्य भर है, और मधुदीप की 'हिस्से का दूध' तो दो दृश्यों का रूपांतर। इससे अलग सुकेश साहनी की लघुकथा है 'आधी दुनिया'। पुरुष के एकतरफा संवाद पत्नी को छिड़कते हुए। लगता है कि हर संवाद एक दृश्य बुनता है, गजल के शेर की तरह और अंत में आधी दुनिया का दर्द बयाँ कर जाता है, पतित्व के अंदाज से। इसलिए कथानक की परंपरित धारणा को तोड़कर भी लघुकथा बड़े यथार्थ को रच सकती है, बल्कि कई लघुकथाओं को एक लघुकथा में बुन सकती है। इन सभी उदाहरणों को सामने रखने का एक ही उद्देश्य है कि संरचना में कथानक के बदलाव को भी अनदेखा न किया जाए। यथार्थ आज का केन्द्रीय विमर्श है पर यथार्थ भी कथाचक्र में अन्तस्तनावों को, अन्तर्विरोधों को इस तरह बुना गया हो ऐसे नदी के बहाव में भँवर पड़ते हैं, उलझाते हैं और धीरे से रास्ता निकालकर नदी को फिर बहता कर देते हैं। हाल में जो अल्प शब्द संख्या वाली लघुकथाएँ लिखी जा रही हैं, वे एक नकारात्मक संवाद पर एक सकारात्मक संवाद को चस्पा करके एक भावपरक स्पर्श दे जाती है और उसी क्षण समाप्त भी। पर जब अन्तर्विरोधों, विसंगत परिदृश्यों, जीवन की कुलबुलाहटों से अंतड़ियों को हिलाते हुए। रचना तभी सावयियक बनती है, इंटीग्रेटेड होकर जीवंत इकाई। यही रचना की जैविकता भी है और उसके टिकने का प्रतिमान भी। कथानक के सन्दर्भ में इतना कहना औचित्यपूर्ण है कि अंतर्वस्तु के अनुरूप सहज लघु आकार, कथानकीय प्रवाह में अन्तस्तनाव और आकर्षण, लक्ष्य समावेशी संवेदन, परिदृश्य का समानुपाती समावेश, चरित्र या संदेश का ताना-बाना और शीर्ष तक पहुँचने के शैलीगत भाषागत प्रयोग जरूरी हैं। यह तय है कि यथार्थ अपने समय को रचना में इतिहास बद्ध करता है और लेखक का संवेदन मूल्य परकता के विवेक से ही लघुकथा को असरदार बनाता है।

अभी पुराने समीक्षा तत्वों की राह पर चलकर ही बात की जाए। इन्हीं में जो सृजन के स्तर पर बदलाव आया है, उसे रेखांकित करते हुए नए प्रस्थान की बात करना उचित होगा। लघुकथा में पात्र संवेदन की संप्रेषणीयता के कारक हैं और स्वयं उस संवेदन के सम्मूर्त रूप भी। संस्कृत समीक्षा में चार प्रकार के पात्र थे- 'धीरोदात्त, धीरप्रशांत, धीरललित और धीरोद्धत'। अब ये पात्र जब संस्कृत नाटकों में ही आए तो कालिदास के शाकुंतल और शूद्रक के मृच्छकटिकम् में भी अंतर आ गया। और जब से आधुनिक कथा साहित्य का सृजन हुआ जो जयशंकर प्रसाद की 'गुंडा' कहानी का नायक ही नायकत्व के झंडे गाड़ गया। यानी धीरोद्धत ही धीरोदात्त सा बन गया। और तब से तो कथा साहित्य के पात्रों में जमीनी-आकाशी अंतर आया है। शिखर धूल चाट गए और किसान, मजदूर, मजलूम झंडा गाड़ गए। श्रेष्ठता के सामाजिक अधिमान वाले सारे पात्र जब कथा साहित्य से जुड़ गए हैं तो साधारण आदमी के सारे मनोराग, सारी दुर्बलताएँ, सारी शक्तिमत्ता, सारे संघर्ष, सारे सोच, परिवार, समाज और सत्ता में उसकी केन्द्रीयता, उसकी वैयक्तिक अस्मिता और सामाजिक स्वतंत्रता, विवशता और मानवीयता जैसे अनेक अक्स कथा साहित्य में उतर आए। कभी उच्च-मध्य-निम्न वर्गीय अवधारणाओं और संघर्षों के साथ, कभी अवचेतन की कुंठाएँ, कभी राजनीतिक-सामाजिक प्रतिरोध, कभी विवश दैन्य की चीख तो कभी संकल्पों की हुंकार। और इन अक्सों के भी कई भीतरी अक्स हैं। और कहना न होगा कि ये अक्स, ये संवेदन, ये परिदृश्य, ये मनोराग, ये अनुभूतियाँ इतना पार्श्वों के साथ संजीता हैं जिन्हें लघुकथा के कलेवर में ही संघनित अभिव्यक्ति मिल सकती है। आखिर सूरज का अपना आकाश है और जुगनू के लिए रात के अंधेरे के परिदृश्य में क्षणिक मगर रेखांकन योग्य चमक। हिन्दी लघुकथा जुगनू की इस चमक में अपने समय के उजले-अंधेरे अक्सों को इन पात्रों के माध्यम से व्यक्त कर रही है। अब इन पात्रों का शास्त्रीय दृष्टि से वर्गीकरण संगत नहीं है, न ही उसकी सार्थकता। सवाल इतना ही है कि वह पात्र भी कितना स्मरणीय बन जाता है।

ये चरित्र लेखक की तयशुदा मानसिकता के उत्पाद हैं, या किसी वैचारिक हलचल, आदर्श-यथार्थ की टकराहट, परिवर्तन की आकांक्षा, पीढ़ियों के टकराव, यथास्थिति और संवेदनशीलता के द्वंद्व के नए रचाव की सूक्ष्मता, युगबोध, नक्काल आधुनिकता पर प्रहार, मुरदा आस्थाओं का प्रतिकार, किसी सूक्ष्म भाव रसायन की मानवीय अर्थवत्ता या तलस्पर्शी फलसफों से इस तरह सने हों कि लघुकथा के सूक्ष्म आकार में भी चरित्र और कथ्य

ऐकमेक हो जाएँ। पर इससे लघुकथा की अन्विति प्रभावित न हो। कभी भी लघुकथा में चरित्र के दो केन्द्रक बन जाते हैं। कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर की 'इंजीनियर की कोठी' में केन्द्र तो इंजीनियर है, पर माली का चरित्र भी उतना ही प्रभावी है। इससे चारित्र का केन्द्र स्खलित होता है। इसके बजाय प्रसाद का 'गूदड़ सांई' एक संपूर्ण चरित्र बन जाता है, अविस्मरणीय।

लघुकथा में संवाद सपाटपन, सहजबयानी और वर्णनात्मक ठंडेपन पर प्रहार करते हैं, अपनी जीवंतता, संवेदनीयता और कहन के भीतरी प्रेरकों से। कभी-कभी तो लघुकथा का चरमांत कथन अपने में लघुकथा की पूरी ताकत दिखाता है। कभी इनमें प्रहार, कभी छुअन भरी संवेदनीयता, कभी प्रतिकार की प्रतिकार, कभी दर्शन की गहराई, कहीं प्रतिबोध, कहीं व्यथा, कहीं क्रियात्मक संवेग, कहीं भीतरी कुंठा, कहीं मनोवेग, कहीं दोहरापन, इस तरह व्यक्त होते हैं कि सारे संवाद चरित्र के आत्म संघर्ष को नुकीले अंत तक पहुँचा देते हैं। इनमें कहीं गद्य गीतों का मार्मिक गुम्फन, कभी व्यंग्य की मार, कभी खुली चुनौती, कभी आत्मव्यथा आदि संवेग इस तरह बुन दिये जाते हैं बल्कि ये संवाद खुद होकर लघुकथाकार के मानस पर इस तरह छा जाते हैं कि शब्दों में भाव-तरंगें झंकृत हो जाती हैं।

भाषा-शैली के तेवर इन लघुकथाओं को संदेश और आस्वाद की दृष्टि से, चेतना और कलात्मक स्थापत्य की दृष्टि से असरदार बनाते हैं। आधुनिक लघुकथाओं में तो बिम्ब, प्रतीक, सांकेतिकता, मिथक, विरोधी रंगों का संयोजन या कंट्रास्ट, व्यंग्य, आंचलिकता, शब्दलय और अर्थलय, अन्योक्ति, काव्यात्मक स्पर्श, खड़ूखड़ाते शब्दों की आग, कभी सम्मूर्तन कभी अमूर्तन, कभी चित्रात्मकता, कभी सांगीतिक प्रभाव, कभी संस्मरणात्मक या रेखाक्रियात्मक भाषा, कभी देशी-विदेशी शब्दों की कोड मिक्सिंग से लघुकथा में विनस की चालक शक्ति को नियोजित किया जाता है कि लघुकथा का अंत अपने पैनेपन में एक खास तरह की चुभन बन जाता है। पर यह सब रचना की अंतर्वस्तु की प्रेषणीयता पर निर्भर करता है। शब्दों, ध्वनियों, वाक्य योजना के प्रवाह, विराम चिह्नों की सार्थकता या अर्थ व्यंजना में सहकारिता, अर्थ की सांकेतिकता आदि का चयन लेखकीय क्षमता का प्रतिमान बन जाता है। फिर शैलीगत प्रयोग को लघुकथा में निरंतर हो रहे हैं। कथा कथन की शैली से लेकर पंचतंत्रीय, शैली तक संवादात्मक शैली से आत्मकथा या डायरी शैली तक, मिथकीय प्रयोगों से लेकर कालांतरों के परिवर्तन तक।

जहाँ तक परिवेश या केनवास का सवाल है, लघुकथाकार शब्दों की मितव्ययिता के साथ परिवेश के नियोजन में सार्थक मितव्ययिता का ही परिचय देता है। प्रकृति का इतना ही अंश तो लघुकथा की मनःस्थिति का पोषक हो। घर-परिवार का उतना ही नाट्य दृश्य, जो लघुकथा के भीतरी तनाव और संदेश का नियोजक हो। एक तरह से सृजन और कतरन एकसाथ चलते हैं, सर्जक के भीतर के आलोचक की तरह। बड़ी बात यह है कि प्रकृति, जीवन या समाज के ये सादृश्य तभी सकारक होते हैं, जब वे लघुकथा की भीतरी जरूरत या अनिवार्य हिस्सा बन जाते हैं। यथार्थ भी कला भी, परिवेश भी संवेदना भी, चित्र भी मनःस्थिति भी।

पर बात उस चरमांत की है, जिसे पुरानी भाषा में उद्देश्य कहा जाता है। और ये सारे तत्व, सारे रचाव, सारी यति-गतियाँ, सारे चरित्र विन्यास, शैलीगत विन्यास इसी पैनी, भाव संवेदी, अर्थवत्ता से जुड़े हैं। लघुकथा ही अंतःप्रेरणा से लेकर उसकी व्यंजना तक। सारे कथा-विन्यास का वात्याचक्र, वैचारिक संवेदन का मर्म, माइक्रोस्कोपिक चित्रण का ऊर्जाबिन्दु, व्यंग्य की मार, संघर्ष के चरमान्त की चेतना, संवेदना का तर्क, चुभन का एन्द्रिय मनस्तात्विक उद्वेलन, यथार्थ का साक्षात्कार, जड़ता पर कौंध भरी चेतना, पतनशील मूल्यों से मुठभेड़ करता विवेक, अन्तर्विरोधों की सूक्ष्म पकड़, लेखकीय प्रवेश से रहित उसका आंतरिक मनस्ताप वाला व्यक्तित्व, इस उद्देश्य में विशिष्ट छाप छोड़ जाते हैं। गेहूँ की बाली का कद छोटा ही होता है, पर सूखने के बाद उसका नुकीला सिरा कितना चुभनदार होता है। इस चुभन में लघुकथा का अंतरंग जितना छुपा होता है, उतना ही पाठक के भीतर का प्रभावी संवेदन भी।

पर ये छह तत्व तो सीढ़ियाँ हैं, दरवाजे हैं। न जाने कितनी खिड़कियाँ और वातायन हैं, जिनसे कोई कौंध अपनी गमक के साथ प्रविष्ट हो जाती है और रचनाकार के भीतरी रसायनों से संश्लिष्ट होकर रूपाकृत हो जाती है। खासकर लघुकथा के लिए इनका कंडेंसिंग या संघनन बहुत छोटे आकार में बड़ा संदेश देने की जद्दोजहद करता है तो कितना काटना-पीटना, तराशना, संप्रेषी तत्वों में

रचाना, एक गहरी तन्मयता और समावेशी कला की माँग करता है। शीर्ष संवेदन की संप्रेषणीयता से सिद्धि के लिए भाषा के तमाम घटक यदि यथार्थ के नुकीले अक्स तक जाएँ, भावतरलता में रूपांतरित करें, नए तर्क से पाठक की चौखट को खटखटाएँ, नए शिल्प के प्रभावक बनें, पुराने शिल्प में नई संवेदना के संवाहक हों तो लघुकथा पाठक की पूँजी बन जाती है। कोई तर्क, कोई संवेदना, यथार्थ का कोई सिरा तीर की तरह राह चीरता हुआ पाठक तक पहुँच जाए, और उसके हृदय-मस्तिष्क में टन्न बजा दे।

ये सारी बातें पुरानी भी हैं और बहुत कुछ नई भी, बल्कि अभिव्यक्ति में प्रयोगी भी। पर कुछ अच्छी लघुकथाओं के आधार पर कहूँगा कि 'सावयविक अंतर्ग्रंथन' (ऑर्गेनिक यूनिटी) जरूरी है बुनावट में। यह संवेदन और भाषिक विन्यास की बुनी हुई मित्रता है, उसके नाट्य और विजुअल रूप में। कई बार इनके भीतर यथार्थ का पठार और गद्य गीत की भावुकता मैत्री करते हुए गड्डमड्ड हो जाते हैं। जो प्रतीक या चरित्र उभरते हैं, वे संपूर्णता में खुद को विकसित नहीं कर पाते, पर मूल संघर्ष और उसकी वांछित परिणति के निर्णायक बन जाते हैं। लेखक पात्रों को अपने तोता रटंत संवादों से नहीं लादता, बल्कि नेपथ्य में ही संवेदना का अंग बन जाता है।

और इस सबके लिए शिल्प की चालक शक्ति ही कारगर है, बिना किसी नक्काशी के, बिना जड़ाऊ शिल्प की। शिल्प की सार्थकता संवेदनात्मक चरमान्त के साथ पाठकीय प्रवेश में है। इसीलिए बहुत ज्यादा अमूर्तन या सपाटपन से पाठक दरवाजे पर ही चित्त हो जाएगा। चाहे झनझनाए, तरल कर दे, उदात्त बनाए, तर्क खड़ा करे, यथार्थ के किसी कोने को शीर्ष बनाए, नई मर्यादा गढ़े, पुराने को खंडित करे, विरोध की तनी हुई मुट्ठी बने, विसंगति के खिलाफ प्रतिपक्ष या प्रतिरोध बने, पर समकाल की वैचारिकी से भरीपूरी हो और रचाव में अन्तस्तंतुओं से इतनी गहरी बुनी हो कि उसके किसी हिस्से को काटना या बदलना नामुमकिन हो जाए।

लघुकथा की वस्तुपरक (ऑब्जेक्टिव) पड़ताल के अतिरिक्त एक पक्ष और है, मूल्यांकन का। तब नए बिन्दु उभरते हैं- रचना का यथार्थ और जीवन का यथार्थ। कई लोग इसकी सीधी तुलना करते हैं तो कई रचना के यथार्थ को विशिष्ट मानते हैं। इसलिए भी इसमें कलात्मक संप्रेषण के साथ रचनाकार की सृजन भूमि का मनस्तत्व या वैचारिकी भी संश्लिष्ट होती है। कई बार कल्पना और कला तत्व उसे स्थूल यथार्थ की अपेक्षा संवेदनीय यथार्थ में इस तरह विन्यस्त कर देते हैं कि जीवन की धड़ूकन ही विशिष्ट हो जाती है। पर इनमें जो मूल्यगत प्रतिमान होते हैं, उन्हें आलोचक विचारधारा, अपनी आलोचना दृष्टि और पूर्वाग्रहों से परखथा है तो विवाद भी होते हैं। देखना तो यह भी चाहिये कि जिस उद्देश्य को लेकर चला है, वह रचना से संप्रेषित होता है या संदेश और रचना के विन्यास में कोई खोट है। मल्यगत प्रतिमान सब्जेक्टिव या विचारधाराओं की प्रतिबद्धता लिए हों तो परिणाम भी वस्तुनिष्ठ नहीं हो सकते। असल में तीन चरण हो सकते हैं- रचना के भीतर दो-तीन बार अन्तर्यात्रा, रचना की भाषा से रचना का सूक्ष्म विश्लेषण, सूक्ष्म विश्लेषण के आधार पर रचना की मूल्यगत पड़ताल और जीवन सापेक्ष्यता। इससे रचना केन्द्र में रहेगी और मूल्य प्रतिमान रचनापेक्षी।

इस लम्बे विमर्श में विमर्शों की भी अपनी भूमिका है क्योंकि वे समकालीनता का चर्चित पक्ष होते हैं। व्यापक तौर पर ये वैचारिक विवेक के पक्षधर हैं जो सामाजिक रूप से मानव नियति को समता और बेहतर जीवन तक ले जाते हैं, चाहे जेण्डर समता हो, वर्गीय विषमता का संघर्ष हो, तकनीक और जीवन का पक्ष हो, पर्यावरण और जैविक संतुलन का पक्ष हो। पर इन सबसे साक्षात्कार लेखक की वैचारिकी का हिस्सा है। यह हिस्सा सृजनात्मक बनकर रचना में आए न कि विचारधारा के साधन के रूप में। विमर्शों से रचना का कथ्य लदा न हो, बल्कि विमर्शं पात्रों की चेतना और कथ्य का सहज पक्ष बने। यह भी कि रचनाएँ विमर्शी को नए कोण दें, संवेदना के नए अक्स दें और विमर्श इस सृजनात्मकता से अधिक समृद्ध हों।

इतना सब कहने के बावजूद 'इदमित्थम्' तो नहीं हो पाता। बात तभी सार्थक लगती है जब रचना के सारे भाषिक तत्वों से गुजरा जाए। मुक्तिबोध इस रूप में संगत लगते हैं कि रचनाकार भाषा के सिंह द्वार से बाहर आता है तो आलोचक भाषा के सिंह द्वार से रचना में प्रवेश करता है। कुछ लोग आपत्ति भी लेते हैं कि चारित्र, कल्पना, फेन्टेसी जैसे तत्व तो भाषा के अंग नहीं हैं। पर यह भी सच है कि ये भी भाषा में ही गढ़े गए होते हैं, भाषा से ही व्यक्त होते हैं। इसलिए कुछ लघुकथाओं को

आधार बनाकर उनका विश्लेषण भी संगत होगा।

'मैं वही भगीरथ हूँ' शरद जोशी की चर्चित लघुकथा है। कैसे एक फेन्टेसी और समकाल आधे-आधे मिलकर मारक वक्रोक्ति के साथ सांस्कृतिक मूल्यों और बाजार-मूल्यों को आमने-सामने ला देते हैं। भगीरथ का मिथक बुद्धि के प्रक्षपास्त्र से दिव्य पुरुष के रूप में उभर आता है, आज की ठेकेदार संस्कृति की प्रोजेक्ट लीला के अर्थशास्त्र तक। हजारों साल का काल और आकाश मार्ग को चीरता स्पेस एक झटके में इन चंद पंक्तियों में इस लाभलोभ की संस्कृति के साथ विरोधी रंगों का योजना को व्यंग्य में बदल देता है। जरा शब्द चयन पर ध्यान दें 'वही भगीरथ' में वही सार्वनामिक विशेषण हजारों साल पुराने भगीरथ तक ले जाता है, पर आगे मेरे ऑफिस में चार भट भगीरथ हैं, मैं भट और उनका चतुर्मुखी गणित, नए भगीरथ की चतुर लाभवादी प्रोजेक्ट योजना को सामने लाता है। यही तो शब्द चयन का सौन्दर्य है। गंगा स्नान, हरिद्वार, दिव्य पुरुष के समान्तर ठेकेदार और प्रोजेक्ट जैसे शब्दों का फ्यूजन इस तरह होता है कि गंगा अवतरण की पवित्र कथा और चरित्र आधुनिक काल की ठेका और प्रोजेक्ट संस्कृति में शिफ्ट होकर गहरी मार कर जाते हैं।

यों इसके गठन, नाटकीय मोड़, दृश्यमान नाट्यपरकता इस तरह सुगठित हैं जैसे नाटक के दृश्य बदलते जाते हैं, पुरातन युग से आज के युग की गंगा में ठेलते हुए। और संवाद ही कितना पैना है। पुरखों के तारण की मुक्ति की भावसाध्य पावनता और ठेकेदारी की महाजेब भरने के लिए संसारबद्धता का पीढ़ियों का भविष्यफल। मिथकीय आध्यात्म और पूँजी की पकड़ का बाजार। कितना बड़ा युगान्तर है, आदर्श और यथार्थ का, मुक्ति और भोग का, त्याग और संग्रह का, लोक और व्यक्ति का। और वह भी सांस्कृतिक गंगा के पावन तट पर।

अब कथा तत्व, कथा गति के मोड़, उनकी मिथकीयता और यथार्थ परकता, दो विरोधी मूल्यों, प्रतिमानों, युगीन आचारों की बुनावट में कंट्रास्ट। न उपदेश, न सुधारक नैतिकता का संदेश, न आरोपित कथन, न लेखकीय प्रवेश। पर शब्द चयन का, कथा संरचना का, संवादों का ऐसा असर है कि लंबी कहानी तो क्या उपन्यास भी ऐसी तीखी चुभन को व्यक्त नहीं कर सकते। इसीलिए लघु शब्द को हीनता के अर्थ में नहीं लेना चाहिये, उसकी लघु आकार वाली मारक शक्ति या व्यंजना में लेना चाहिये। दिव्य पुरुष की तत्समता और प्रोजेक्ट का विदेशी शब्द, पुरखों और पीढ़ियों में अतीतराग और भविष्य का मोह, ये अर्थ व्यंजनाएँ शब्द चयन और कथा संरचना के कारण ही संभव हो पाई हैं।

चित्रा मुद्गल की लघुकथा 'दूध' पुरुष सत्ता वाले समाज की व्यवस्था में नई नारी का तेजस्वी स्वर है। मर्दवादी संस्कार हजारों बरसों से नारी सत्ता में ऐसे गहरे पैठे हुए हैं कि इसकी नींव को हिलाती यह रचना नारी पर ही प्रहार करती है। और इस प्रहारक द्वंद्व में माँ-बेटी का ही रिश्ता है। सामाजिक-पारिवारिक संस्कारों में यह मर्दवाद नेपथ्य में नहीं, मातृसत्ता का संस्कार है, जो अपनी ही जात की अनदेखी कर बेटे को पुष्ट करती है, नारी को प्रगति और खानपान तक के कोनों से वंचित कर। यहीं लेखिका रिएक्ट करती है, मगर सीधे नहीं। असल में मर्दवादी संस्कारों में पगी माँ का लड़की से यह सवाल कितना संवादी पैनापन लिए हुए है अपनी ही बेटी, अपने ही रक्त मांस को लेकर विभेदवादी माँ लड़की को दूध पीने के लिए टोकती है- ''नहीं दिया तो कौन तुझे लठैत बनना है, जो लाठी को तेल पिलाऊँ?'' यानी संघर्ष से निपटने के लिए मर्द की ताकत का पोषण और घर में सिमटी औरतें मर्द के भरोसे। यों भी 'भर्ता' पति का ही पर्याय है। मगर इसी मातृ-संवाद पर चोट करता पुत्री-संवाद भारी है- ''तो मेरे हिस्से का छातियों का दूध भी क्या तूने घर के मर्दों को पिला दिया था?'' 'छातियों' शब्द की ताकत और चयन की लक्षित करना होगा। यह सीधा तीर माँ-बेटी की जैविकता पर है, जो अपने ही हाड़-मांस में जेंडर विभेद की सांस्कारिक खाई का व्यंजक है। लड़के के लिए खुला आकाश, बेटी के लिए घर की दीवारें। बेटे के लिए सर्वग्रासी पोषण और बेटी के लिए अनसोची वंचना।

शब्द चयन और संवाद, सांस्कारिक जड़ता और उभरता तेजस्वी नारी स्वर, जेंडर विभेद पर बारूदी प्रहार करते संवाद- मैं जनमी तो दूध उतरा था तुम्हारी छातियों में? जैविकता में यह दूध तो बेटे-बेटी दोनों के लिए उतरता है, पर यह चोट माँ के उस कथन पर है- 'दूध घर के मर्द पीते हैं, क्योंकि वे मर्द हैं'। माँ ही अपनी प्रतिकृति बेटी को दूध के प्रतीक के सारे हकों से, पोषण से, अस्मिता से वंचित कर देती है।

यह कसावट कथानक में है, संवादी तल्खियों में है,

नारी-पात्रों के द्वंद्व में है। और इन पात्रों में जो गुस्सैल बॉडी लैंग्वेज या ऐन्द्रिय भाषा तेवर दिखाती है, वह नाट्य और विज़ुअल बनकर पाठक को चीरती है। माँ के क्रोध में 'कमीनी' की गाली तक पहुँचना, मुहावरों की जड़बद्ध सांस्कारिकता में लाठी को तेल पिलाना, लड़की के तेजस्वी तर्क का माँ की छातियों की दूध की हिस्सेदारी तक पहुँचना और घात-प्रतिघात में बदलाव के नए परिदृश्य तक पाठक को ले आना इस लघुकथा की शक्ति है। 'दूध' की प्रतीकात्मकता में जेंडर विभेद पर प्रहार।

बलराम की लघुकथा 'मृगजल' गँवई परिवार के सपनों और शहराती होते इन गँवई शिक्षार्थियों के फैशनग्रस्त यथार्थ का आईना है। गँवई परिवार के सभी सदस्यों के गाढ़े पसीने में उगता एक सपना, जो शिक्षा से सारे दारिद्रय को धो देगा, पर 'मृगजल' के प्रतीक में यह स्वप्निल आकांक्षा धोखा बनकर रह जाती है। गँवई और शहराती परिवेश की बुनावट में उगता यह चरित्र यथार्थ के हर कोण को, मृगजल के धोखे को कितने सचेत भाषा विन्यास से प्रभावी बनाता है- 'अधेड़ का काला चेहरा... लाल-लाल गाढ़ा खून... जैसे आम की डाल में लसा लाल-लाल गोंद।' ये सब कितने पोटोग्राफिक है, कौशल जनित सा दृश्य है। और दो परिवेश विरोधी रंगों में आमने-सामने 'खून-पसीने की गाढ़ी कमाई और फिल्म फैशनबाजी की फिजूलखर्ची'। बैल सरीखी मेहनतकशी में शिक्षार्थी को बड़ा आदमी बनाने का सपना और बेटे का इस पसीने की कमाई को उड़ा देने का अफसोस विहीन चरित्र। गँवई पिता के घर में सबकी खुशफहमी और शिक्षार्थी पुत्र की शहराती सभ्यता में नासमझी। यह छद्म न केवल लघुकथा के शीर्षक में, बल्कि पूरी लघुकथा के विन्यास में व्यंजक बना है।

यों कहने को तो यह वर्णनात्मक शिल्प की ही लघुकथा है। पर इसमें दृश्य नियोजन, घटना में मोड़ और दृश्यात्मकता है। संगत उपमानों का माकूल नियोजन है। सरल वाक्यों की प्रवाही अर्थ व्यंजना है। एक कंट्रास्ट जो विरोधी परिदृश्यों को, चरित्रों को, मानसिकताओं की इस तरह बुनता है, जो मृगजल जैसा छद्म बनकर रह जाता है। मनोदशाओं का, आकांक्षाओं का गँवई चरित्र और संवेदनहीन अनदेखी का शिक्षित चारित्र। इसीलिए जिस संवेदन बिन्दु में मनोविज्ञान, समाज शास्त्र, पारिवारिकता, शहराती प्रभाव इस तरह चिपट जाते हैं और वे आम की डाल में लसा लाल-लाल गोंद की तरह सादृश्यों में व्यंजित होते हैं तो वैचारिक उद्वेलन भी मंचा जाते हैं। यही जब कथा विन्यास में हर मोड़ पर पाठक को चौंकाते हैं, व्यथाओं के स्पर्श से तो यह छद्म पुरअसर बन जाता है।

सतीश राठी की पंचतंत्रीय शैली की लघुकथा 'बैकग्राउंड' अपने प्रयोगी शिल्प में विशिष्ट बन गई है। मानवेतर पात्रों में मानवीय प्रवृत्तियों, मनोविकारों, आचार-व्यवहारों, छलना-प्रपंचों, दाँव-पेंचों का आरोपण भारतीय कथा साहित्य की लम्बी परंपरा है। इसी में राजनीति, प्रशासन, सामाजिक यथार्थ ही नहीं, उन सकारक मनोभावों का भी उपदेशन हुआ है जिसमें कई बार ये मानवेतर पात्र भी आदर्श बन जाता हैं। इस लघुकथा में आज की राजनीति और दाँवपेंचों में लोकतंत्र की उभरती युक्तियाँ कितनी असरदार हैं। किसी बड़े खूँटे से बँधकर छोटा आदमी भी कितनी आँख दिखाने का साहस जुटा लेता है कि बड़े आदमी को सरेंडर होने की मुद्रा में आ जाना पड़ता है।

बिल्ली और चूहे की जन्मजात शत्रुता है बल्कि बिल्ली की खूँखार आँखों की चमक से सहमा और प्राणों के संकट में पड़ा चूहा सिवाय भक्षण के पात्र अलावा कुछ कर ही नहीं सकता। लेकिन लघुकथा में इस चूहे की बॉडी लैंग्वेज और संवादों की निर्भीक बेफिक्री चौंकाती है। लोक कथाओं में बिल्ली मौसी है, मगर चूहे के लिए भक्षिणी। बिल्ली की गुर्राहट और दाँतों से चबा देने वाली मुद्रा के बावजूद चूहे की युक्तिपूर्ण साहसिक मुद्रा टकराहट का माद्दा रखती है। यही कि जैसे चूहे पर बिल्ली भारी है या कि उसका भोजन। इसी तरह टॉमी कुत्ता बिल्ली का दुश्मन। राजनीति का यही सबब है कि चूहे जैसा कमजोर कुत्ते जैसे बली से गठबंधन कर लेता है तो बिल्ली जैसी शक्तियाँ चुनौती योग्य बन जाती हैं। या कि खूँटे के बल पर कूदा जा सकता है। यही शीर्षक की प्रयोजनीयता व्यंजक बन जाती है। बैकग्राउंड में टॉमी राजा के साथ चूहे का चित्र बिल्ली की गुर्राहट और दाँतों को बेमन समझौते में बदल देती है।

सारे संवाद और मानवी दुनिया के उपकरण कितने सकारक बन जाते हैं दीवार पर लगा चित्र और फोन का नंबर चूहे की अदायगी को कितना बेलाग और निष्कंटक बना देते हैं। लघुकथाकार ने युक्ति से टॉमी की गिरफ्त से बची बिल्ली का वाकया नियोजित कर अपनी कलात्मकता

का परिचय दिया है। कितना छोटा सा कथानक, कितना घटनाचक्र, दृश्यों का नाटकीय बदलाव, पिछली स्मृति, दीवार पर टॉमी के साथ चित्र और बेखौफ मुद्रा में बिल्ली की आँख में आँख डालकर बिल्ली में भय का अहसास। राजनीति, प्रशासन और जीवन के सामान्य व्यवहारों में कार्य साधक ये दाँवपेंची कूटनीति मानवेतर पात्रों के माध्यम से अधिक व्यंजक बन पड़ी है। पात्रों के नाम चयन, संवादों का चुटीलापन, विडम्बना की अग्र प्रस्तुति, शब्दों की ध्वन्यात्मकता, शब्दों का अर्थगर्भी चयन, शब्दों की मितव्ययिता और मानवेतर के रूप में यह लघुकथा समकालीन व्यवहारों की चतुराई को यथार्थ और व्यंजक बना देती है।

दूध

● **चित्रा मुद्गल**

दूध घर के मर्द पीते हैं। क्योंकि वे मर्द हैं।

उसका काम है दूध के गुनगुने गिलास को सावधानी पूर्वक उन तक पहुँचाना। पहुँचाते हुए वह हर रोज दूध के सौंधे गिलास को सूँघती है। पके दूध की गन्ध उसे बौरा देती है।

एक रोज माँ और दादी घर पर नहीं होती तो वह चटपट कोठरी खोलकर दुधहड़ी से अपने लिए दूध का गिलास भरती है और घूँट भरने को जैसे ही गिलास होंठों के पास ले जाती है, घर के भिड़े किवाड़ भड़ाक से खुल उठते हैं। उसके होंठों तक पहुँचा गिलास हाथ से छूट जाता है और दुधहड़ी पर जा गिरता है। मिट्टी की दुधहड़ी के दो टुकड़े हो जाते हैं। कोठरी के गोबरलिपे कच्चे फर्श पर गुलाबी दूध चारों ओर फैल जाता है। निकट आई भौंचक्क माँ को देख वह थर-थर काँपती पश्चाताप व्यक्त करती माँफी माँगती सी कहती है- ''मैं... मैं...।''

''दूध पी रही थी कमीनी?''

''हाँ...।''

''माँग नहीं सकती थी?''

''माँगा था, तुमने कभी दिया नहीं।''

''नहीं दिया तो कौन तुझे लठैत बनना है जो लाठी को तेल पिलाऊँ?''

''एक बात पूछूँ माँ?'' आँसू भीगी उसकी आवाज अचानक ढीठ हो आई।

''पूछ।''

''मैं जनमी तो दूध उतरा था तुम्हारी छातियों में?''

''हाँ... खूब। पर.. पर तू कहना क्या चाहती है?''

''तो मेरे हिस्से का छातियों का दूध भी क्या तुमने घर के मर्दों को पिला दिया था?''

मैं वही भगीरथ हूँ

● **शरद जोशी**

मेरे मोहल्ले के एक ठेकेदार महोदय अपनी माता को गंगा स्नान कराने हरिद्वार ले गए। गंगा के सामने एक धर्मशाला में ठहरे। शाम हुई। सोचा, किनारे तक टहल आएँ। वे आए और गंगा किनारे खड़े हो गए। तभी उन्होंने देखा कि एक दिव्य पुरुष वहीं खड़ा एकटक गंगा को निहार रहा है। ठेकेदार महोदय उस दिव्य व्यक्तित्व से बड़े प्रभावित हुए। पास गए और पूछने लगे- ''आपका शुभ नाम?''

''मेरा नाम भगीरथ है।'' उस दिव्य पुरुष ने कहा।

''मेरे स्टाफ में ही चार भट भगीरथ हैं। जरा अपना विस्तार से परिचय दीजिये।''

''मैं वही भगीरथ हूँ जो वर्षों पूर्व इस गंगा को यहाँ लाया था। उसे लाने के बाद ही मेरे पुरखे तर सके।''

''वाह वा, कितना बड़ा प्रोजेक्ट रहा होगा। अगर ऐसा प्रोजेक्ट मिल जाए तो पुरखे क्या, पीढ़ियाँ तर जाएँ।''

मृगजल

● **बलराम**

सर्दी ने कानों को सुन्न सा कर दिया। मफलर न लाने की भूल का अहसास मुझे कचोटकर रह गया। सूट के बावजूद सर्दी चुभती सी रही। शाम को अलाव पर तापने बैठे तो मुझे इसी गाँव के अपने क्लास फेलो किशन की याद आ गई। मैंने अपने ससुर से पूछा, ''किशन का घर किधर है?''

''वो सामने वाला घरु वोही क्यार तो आय।''

''उसके घर में कौन-कौन है?''

''महरारी बापु, भाई-बहिनी सबय तौ हैं। दुई भाई आऊर बापु उइ द्याखव आवत है।''

ससुर के इशारे पर मेरी नजरें उधर चली गईं। वे आकर अलाव में अपने हाथ सेंकने लगे तो मेरा ध्यान उन पर केंद्रित हो गया। अलाव की उठती लपटों की रोशनी में अधेड़ का काला चेहरा चमक उठा। उसका रंग जन्मजात काला है या समय और धूप के प्रभाव से, मैं

तय नहीं कर सका। कड़ाके की सर्दी में भी वृद्ध के शरीर पर केवल बनियान और लुंगी भर थी। पैरों में लम्बी-लम्बी बिवाइयाँ, जिनमें लाल-लाल गाढ़ा खून यूँ लसा था, जैसे आम की डाल में लसा लाल-लाल गोंद। किशन और उसका यह बाप! तुलना की तो भीतर ही भीतर कहीं कुछ दरक सा गया।

कहाँ शहरी ठाठ-बाट में रहने वाला किशन और कहाँ उसका यह अधेड़ बाप। किशन के पास इतना पैसा कहाँ से आता है, मैं सोचने लगा। बी.ए. में हम दोनों ने एकसाथ दाखिला लिया था। आज में एम.ए. फाइनल में हूँ और किशन बी.ए. में। बी.ए. में उसका यह चौथा साल है। दो साल में प्रीवियस, दूसरा साल फाइनल में।

किशन के दोनों भाई भी जैसे के तैसे। शरीर पर जांघिया और बनियान भर। किशन की पढ़ाई के कारण इन दोनों की पढ़ाई बंद है। ये दोनों दूसरों के खेतों में मजदूरी करते हैं। बाप कई घरों के ढोर-डंगर चराता है। माँ और बहनें भी मजदूरी करती हैं। किशन को पैसे मिलने के यही स्रोत हैं। उन तीनों के चले जाने पर ससुर ने बताया था।

पढ़ाई के बहाने घर वालों के खून-पसीने की गाढ़ी कमाई को किशन फिल्म और फैशन में किस तरह फूँक रहा है, उन्हें नहीं मालूम। उन्हें तो सिर्फ इतना मालूम है कि किशन डिग्री कॉलेज में पढ़ रहा है और पढ़-लिख कर प्रोफेसर, वकील या डिप्टी कलेक्टर बनेगा। और तब उनकी सारी गरीबी छूमंतर हो जाएगी, वे चैन और आराम की जिंदगी जी सकेंगे। किशन ने उनको यही बताया है और उन्हें विश्वास भी है कि एक न एक दिन किशन बड़ा आदमी अवश्य बनेगा। यही सोचकर सब-के-सब बैल की तरह कमाए जा रहे हैं, और किशन...।

बैकग्राउंड

● **सतीश राठी**

बिल्ली को अपने सामने पाकर चूहा तनिक भी नहीं घबराया, वरन उससे प्रश्न कर बैठा, ''कहो मौसी! क्या चाहती हो?''

बिल्ली चौंकी, प्रकट में गुर्राई, और दांत दर्शाते हुए बोली, ''जो क्रम चला आ रहा है, उसी को निभाने आई हूँ। आज तुम मेरा भोजन बनोगे।''

''जरा ठहरो मौसी! यह सामने दीवार पर लगी सुंदर सी तस्वीर देख रही हो... राजा टॉमी के साथ, मेरा कितना सुंदर चित्र है। क्या तुम चाहोगी कि मैं उसे तुम्हारे बारे में फोन करूं?''- इठलाकर आँखें मटकाते हुए चूहा बोला।

बिल्ली की आँखों में तुरंत एक पुराना वाकिया कौंध गया, जब वह टॉमी की गिरफ्त से बहुत मुश्किल से छूट पाई थी। फिर वही खतरा वह मोल लेना नहीं चाहती थी।

गर्दन झुकाकर वह वहां से तुरंत दूर खिसक गई।

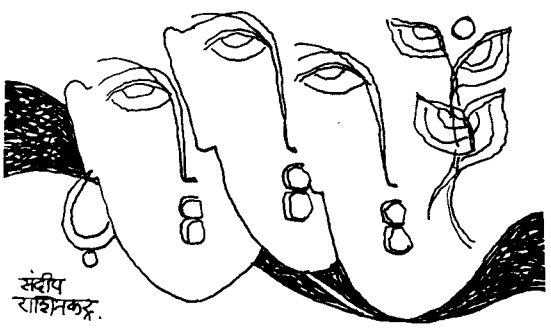

लघुकथा में शिल्प, भाषा और संवेदना

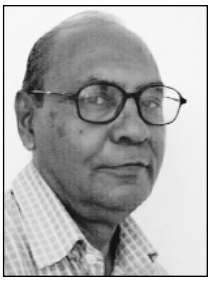

● माधव नागदा

गोपाल राय के अनुसार, 'किसी साहित्यिक कृति के शिल्प का विवेचन करने का अर्थ उस कौशल का उद्‌घाटन करना है, जिससे उसके रूप या आकार की निर्मिति हुई है।' मार्क शोरर कहते हैं, 'जब हम शिल्प की बात करते हैं तब हम लगभग हर चीज की बात करते हैं, क्योंकि शिल्प ही वह साधन है जिसके माध्यम से लेखक का अनुभव, जो कि उसकी विषय-वस्तु है, उसे अपनी ओर ध्यान देने को विवश करता है। शिल्प वह एकमात्र साधन है जिसके द्वारा लेखक अपने विषय को खोजता है, उसकी छानबीन करता है, उसका विकास करता है जिसके माध्यम से वह उसके अर्थ को संप्रेषित कर सके, और अंततः उसका मूल्यांकन करता है।'

सीधी सपाट भाषा में बात करें तो शिल्प यानि गढ़न, अंदाजे बयाँ, कहन पद्धति, रचना विधान, रचनाकार द्वारा स्वयं को तलाशने की बेचैनी। लघुकथा के संदर्भ में हम कह सकते हैं कि इस बेचैनी के चलते ही लघुकथाकार प्रस्तुति के ऐसे नये-नये ढंग आविष्कृत करता है जिनके द्वारा वह पाठकों के दिलोदिमाग तक अपनी राह बना सके। वैसे शिल्प लघुकथाकार का आंतरिक लोकतन्त्र है जिसके अंतर्गत उसे यह निर्णय करने की स्वतन्त्रता प्राप्त है कि किसी कथ्य विशेष के लिए कौनसी कहन पद्धति अपनायी जाय। कई बार यह देखा गया है कि समान कथ्य के लिए दो अलग-अलग रचनाकार सर्वथा भिन्न शिल्प की बुनावट करते हैं। यहाँ कोई नियम-कायदे, कोई शास्त्र काम नहीं देते। दूसरी ओर कई बार ऐसा भी होता है कि कथ्य अपने साथ रूप भी लेकर आता है। यह रचनाकार के अंतस की एक विस्मयकारी घटना है। जब अवचेतन में कोई कथ्य उमगता है तो इसके साथ ही प्रस्तुति का एक अमूर्त खाका भी चमक उठता है। यह स्वस्फूर्त शिल्प है। परंतु जब यह परिघटना नहीं होती है, तब लघुकथाकार को अपना मार्ग स्वयं तलाशना पड़ता है।

एक लघुकथाकार के लिए रूप की तलाश बहुत टेढ़ा काम है। वह उपन्यासकार या कहानीकार की तरह निश्चिंत होकर कल्पना के घोड़े नहीं दौड़ा सकता। वह इस प्रकार का एक भी वाक्य, एक भी शब्द, एक भी दृश्य, एक भी चित्रण, एक भी संवाद, एक भी हाव-भाव समाविष्ट नहीं कर सकता जो लघुकथा की कसावट को लुंजपुंज कर दे। यहाँ तक कि उसे एक कवि की भाँति इस बात के प्रति भी सचेत रहना पड़ता है कि कहाँ अर्द्ध विराम आयेगा, कहाँ पूर्ण विराम और किस स्थान पर प्रश्नवाचक व विस्मयादिबोधक चिह्न लगाये जाएँगे। उसे यह भी ध्यान रखना होता है कि कहाँ पैराग्राफ बदलना है

और कि उसकी लंबाई कितनी रखनी होगी। इस तरह लघुकथा को उस मंज़िल पर पहुँचाना होता है जहाँ यदि एक शब्द भी निकाल दिया जाय तो लगे कि इमारत ढह जायेगी। सब कुछ बहुत कसा हुआ, सुगठित, मितव्ययता के साथ।

लघुकथा के तीन अंग होते हैं; क्या (कथ्य), कैसे (शिल्प) और क्यों (लक्ष्य, दृष्टिकोण या विचार)। शिल्प कथ्य और लक्ष्य के मध्य एक सेतु का कार्य करता है। शिल्प जितना आकर्षक होगा पाठकों की आवाजाही भी उतनी ही अधिक होगी। इस सेतुबंध के लिए लघुकथाकार कई-कई शैलियों का सहारा लेता है यथा वर्णनात्मक, संवादात्मक, प्रतीकात्मक, व्यंग्यात्मक, आत्मकथात्मक, रेखाचित्रात्मक आदि। कुछ लघुकथाकार पत्र शैली, डायरी शैली, नाटक शैली, रिपोर्ताज शैली का भी प्रयोग करते हैं, यद्यपि इस तरह के उदाहरण कम ही हैं। अनेक लघुकथाओं में जातक कथा, लोककथा, फैंटेसी, फ्लैश बैक, पौराणिक आख्यान के कथा शिल्प भी प्रयुक्त हुए हैं जिनके माध्यम से समसामयिक परिदृश्य का खूबसूरती से उद्घाटन हो सका है। भगीरथ परिहार शिल्प यानी तकनीक और शैली के अंतर को स्पष्ट करते हुए कहते हैं, 'तकनीक और शैली क्या है? अपने विचारों को अभिव्यक्त करने की योजना ही तो है। तकनीक जहाँ पर रचना की आंतरिक बुनावट पर ध्यान केन्द्रित करती है, वहाँ शैली अभिव्यक्ति की विशिष्टता पर केन्द्रित होती है। तकनीक व शैली का संबंध लेखक के रचना कौशल और कथा की आत्यंतिक जरूरतों पर निर्भर करता है।'

लघुकथाकार के रचना कौशल का अनुमान उसके द्वारा दिए गये शीर्षक से ही हो जाता है। शीर्षक न केवल ध्यानाकर्षक व उत्सुकता जगाने वाला बल्कि लघुकथा के केंद्रीय विचार का संवाहक भी होना चाहिए। बलराम अग्रवाल की एक लघुकथा का शीर्षक है 'आखिरी उसूल'। इस शीर्षक से एक जिज्ञासा उत्पन्न होती है जो लघुकथा को पूरा पढ़ने के लिए प्रेरित करती है। इसी प्रकार निम्न शीर्षक भी बहुत कुछ कह जाते हैं, अभी बहुत कुछ शेष है(सूर्यकांत नागर), कलेजा बंदर का(सतीश राठी), कैसी बदनामी(रेणु चन्द्रा), रामदीन का चिराग(गोविंद शर्मा), अयोध्या में खाता बही(हरिशंकर परसाई), उंगली के पोरों पर उतरे आँसू(पारस दासोत), भ्रम के बाज़ार में(संतोष सुपेकर), अनंत में अम्मा हँसती है(मुकेश वर्मा), कपों की कहानी(अशोक भाटिया) आदि। जाहिर है इनमें से कुछ शीर्षक काव्यात्मक हैं, कुछ व्यंग्यात्मक तो कुछ कथात्मक हैं।

लघुकथा का आरंभ और अंत भी शिल्प का एक अहम हिस्सा है जिसे नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता। लघुकथाकार इन दो बिन्दुओं को लेकर जितना ऊहापोह में रहता है उतना मध्य को लेकर नहीं। प्रभावी आरंभ और सटीक समापन अलग कौशल की अपेक्षा रखते हैं। आरंभ के लिए प्रेमचंद का यह कथन लघुकथा के लिए भी उतना ही प्रासंगिक है जितना कहानी के लिए, 'कहानी वह ध्रुपद की तान है जिसमें गायक महफिल शुरू होते ही अपनी सम्पूर्ण प्रतिभा दिखा देता है, एक क्षण में चित्त को इतने माधुर्य से परिपूरित कर देता है , जितना रात भर गाना सुनने से भी नहीं हो सकता।'

लघुकथा का आरंभ चाहे संवाद से हो, चाहे वर्णन से या फिर चरित्र-चित्रण से; परंतु कुछ ऐसे हो कि इसमें रचनाकार का सम्पूर्ण रचना-कौशल दिखाई दे; 'ध्रुपद की तान' की तरह। कहानीकार किरण सिंह कहती हैं, 'कथा की पहली पंक्ति आसमान की चील होती है जो झपट्टा मार कर सुनने आए शिकार को दबोच ले और अपने साथ ले उड़े।' सुकेश साहनी अपनी लघुकथा 'बिरादरी' का आरंभ यों करते हैं;

''बाबू।'' मैं कार से उतरा ही था कि अपने बचपन का सम्बोधन सुनकर चौंक पड़ा। किसी पुराने परिचित से सामना होने की आशंका मात्र से मेरे कान गर्म हो उठे...।'

यह आरंभ एक साथ कई बातों की ओर संकेत कर देता है। यह कि कथानायक बड़ा आदमी बन गया है। वह अपने बचपन से पीछा छुड़ाना चाहता है। यानी एक किस्म का झूठा बड़प्पन उसके भीतर घर कर गया है। पाठक देखना चाहेगा कि इस अहंकार का क्या हश्र होता है ; खण्ड-खण्ड होता है कि और भी परवान चढ़ता है।

जोगिंदर पाल अपनी लघुकथा 'प्रेत' का आरंभ इस वाक्य से करते हैं-मैं भूतों में पूरा विश्वास रखता हूँ। अब इस आरंभ को देखकर कौन पाठक लघुकथा को पूरा पढे बिना छोड़ देगा? यह आरंभ 'चील के झपट्टा मारने' की तरह ही है। पूरी लघुकथा इस प्रकार है-

मैं भूतों में पूरा विश्वास रखता हूँ।

क्या हुआ कि मैं कई साल बाद अपने पुराने शहर

औरंगाबाद दक्खिन लौटा और सबसे पहले अपने पुराने मित्र रमैया से मिलने गया।

दूसरे दिन जब मैंने अपने एक और मित्र अकबर को बताया कि कल सारी शाम मैंने रमैया के साथ बिताई तो वह बोला, ''किन्तु उसे मरे तो पूरे बारह बरस हो गए हैं।''

मैं आश्चर्य से स्तब्ध उसे ताकने लगा, ''मगर मैंने तो तीन घंटे उससे बातें कीं, फिर वह कौन था?''

''अपना भूत !'' उसने उत्तर दिया, ''आइंदा हरगिज मत जाओ।''

''मगर यार वह तो हूबहू वही था।''

''भूत भी हूबहू वही होते हैं।'' उसने कहा, ''सुनो, मैं तुम्हें सारा किस्सा सुनाता हूँ। कई वर्ष पहले गबन के एक केस में जब उसे नौकरी से निकाल दिया गया तो उसने आत्महत्या कर ली।''

''आत्महत्या कर ली?''

''हाँ, आगे की सुनो। फिर कुछ प्रभावशाली लोगों ने उसके मुर्दे पर दया करके उसे टूरिस्ट गाइड का लाइसेन्स दे दिया और मुर्दा चलने-फिरने के योग्य हो गया।''

''मगर वह तो बहुत ठाठ से जी रहा है।''

''भूतों का क्या, जैसे चाहें जी लें। एक बार किसी विदेशी पर्यटक ने उसे बढ़िया औरत लाने को कहा। उसकी मौत तो हो चुकी थी। उसने सोचा होगा कि पत्नी और बच्चे तो बचे रहें, इसलिए वह अपनी पत्नी को बना-सँवारकर रात के अंधेरे में विदेशी पर्यटक के होटल में ले गया।''

''मेरी समझ में कुछ नहीं आया।''

''इसीलिए तो समझा रहा हूँ। एक बार मर-खप गए, तो फिर जैसे भी चले। वह आज भी बराबर अपना धंधा चलाए जा रहा है। पत्नी बूढ़ी होने में आ रही है, मगर बेटी भी तो जवान निकल आई है ...।''

''किन्तु, वह तो बड़ा अच्छा आदमी था अकबर...।''

''जब तक आदमी था, तब तक। भूत तो बस भूत होते हैं।''

तो लघुकथा का अंत आते-आते यह ज्ञात होता है कि लेखक किस भूत की बात कर रहा है। अर्थात वह आदमी जो अपनी आदमियत छोड़ बैठा है।

आगाज़ बता देता है कि अंजाम क्या होगा। मतलब, आरंभ देखकर अंत का अनुमान लगाया जा सकता है। परंतु पाठक के मन-मस्तिष्क पर वे लघुकथाएँ सदा के लिए अंकित हो जाती हैं जिनका समापन उसकी कल्पना के विपरीत बिन्दु पर जाकर होता है। जरूरी नहीं कि ऐसा अंत चमत्कारिक हो, प्रतीकात्मक या प्रश्नाकुल कर देने वाला हो। बल्कि सहज भी हो सकता है। उदाहरण के रूप में हम रामेश्वर कामबोज 'हिमांशु' की 'ऊंचाई' लघुकथा ले सकते हैं। इसका आरंभ इस तरह होता है-

पिताजी के अचानक आ धमकने से पत्नी तमतमा उठी- ''लगता है बूढ़े को पैसों की जरूरत आ पड़ी है, वरना यहाँ कौन आने वाला था ! अपने पेट का गड्ढा भरता नहीं, घरवालों का कहाँ से भरेंगे?'' मैं नज़रें झुकाकर दूसरी ओर देखने लगा।'

इस आरंभ को देखकर पाठक अनुमान लगाता है कि पिताजी यहाँ बस एक-दो दिन के ही मेहमान हैं। बहू के पटकों-झटकों से अपमानित व बेटे की उपेक्षा का शिकार होकर बेरंग ही गाँव लौट जायेंगे। परंतु लघुकथाकार बड़ी कुशलतापूर्वक कहानी को अलग ही अंज़ाम पर पहुँचाता है। पिताजी घर की हालत देखकर कुछ माँगने की बजाय सौ-सौ के दस नोट बेटे को थमा देते हैं।

लघुकथा के मध्य भाग पर काम करते हुए सदैव यह खतरा रहता है कि अनावश्य विस्तार न हो जाए, लघुकथा अपने शिल्प का अतिक्रमण करते हुए कहानी के क्षेत्र में प्रवेश न कर जाए, लफ़्फ़ाज़ी का शिकार न हो जाए, रूप के बोझ तले दबकर कराह न उठे। मध्य भाग रीढ़ की हड्डी है। लघुकथा की रीढ़ नाजुक होती है, इस पर कहानी की तरह अधिक बोझ वांछित नहीं है। इसीलिए निष्णात लघुकथाकार ऊपर वर्णित शैलियों के दायरे में रहते हुए भी संक्षिप्तता, सांकेतिकता व कलात्मकता का संतुलन बनाए रखता है। कभी-कभी तो वह रूढ़ कथा शैलियों के पार जाकर बिलकुल मौलिक कथा पद्धति आविष्कृत कर लेता है जो मील का पत्थर सिद्ध होती हैं। गुलशन बालानी की लघुकथा 'गुप्त सूचना' का शिल्प देखते ही बनता है। यहाँ कथ्य केवल तीन फोन कॉल में सिमटा हुआ है। प्रथम फोन किया जाता है दारोगाजी को यह बताने के लिए कि सेठ ज्वालाप्रसाद के गोदाम में दो नंबर का माल पड़ा है। दूसरा फोन सेठ को दारोगा करता है कि आपके

गोदाम में छापा पड़ने वाला है। तीसरा फोन पुनः दारोगा को किया जाता है। परंतु यह फोन सेठ करता है। इन तीन फोन संवादों से दारोगा व सेठ का चरित्र तार-तार हो जाता है। लघुकथा सिर्फ आठ पंक्तियों की है-

''हैलो दारोगाजी, एक गुप्त सूचना है। सेठ ज्वाला प्रसाद के हरीनगर वाले मकान में नंबर दो का माल भरा पड़ा है, छापा मारकर पकड़ लो, साला ब्लैक करता है।''

''हैलो सेठजी। एक गुप्त सूचना है, अपना गोदाम नंबर चार खाली करवा लो, अब से तीन घंटे बाद छापा मारने के ऑर्डर हो गए हैं।''

''हैलो दारोगाजी। आपने गुप्त सूचना देकर मेरी इज्जत बचाली, आज रात गप-शप करने आप हमारे गरीबखाने पर तशरीफ ले आएँ, शराब और शबाब दोनों का इंतजाम है...आपकी गुप्त सूचना की फीस अलग होगी।''

कुशल लघुकथा शिल्पी अधिक विस्तार में न जाकर केवल कुछ संवाद, पात्रों के हाव-भाव या प्रतीक से ही अपनी बात कह देता है। उसे अलग से चरित्र या परिवेश चित्रण की आवश्यकता नहीं पड़ती। आनंद बिल्थरे की संवाद शैली में रचित लघुकथा 'पक्की रिपोर्ट' के आरंभिक कुछ संवादों से ही परिवेश के साथ-साथ पात्रों के चरित्र साकार हो उठते हैं। लघुकथा इस प्रकार है-

''हजूर, रिपोर्ट लिखानी है।''

''अबे, काहे की रिपोर्ट? कच्ची लिखूँ या पक्की?''

''मैं कच्ची-पक्की क्या जानूं सरकार। गई रात डाकू मेरी जवान बेटी को उठाकर ले गए।''

''अबे, तो हम क्या करें? तू ने पहले रिपोर्ट क्यों नहीं लिखाई कि तेरी जवान बेटी भी है?''

''कुछ उपाय करो हजूर।''

''कैसा उपाय? क्या तेरी लौंडिया हमारी जेब में रखी है?''

''हजूर, माई बाप, मेरी बिटिया नादान है।''

''अबे, अब काहे की नादान रही। तेरी लौंडिया तो दूसरी फूलन बनेगी, फूलन।''

''जात-बिरादरी में मेरी नाक कट जाएगी।''

''साले, नाक की इतनी ही चिंता थी तो उसे थाने में क्यों नहीं जमा करवा दिया?''

''साहब, डाकू लोग मेरी दूसरी बिटिया को भी उठाने की धमकी दे रहे हैं।''

''अच्छा, तो तेरे दूसरी लौंडिया भी है? अरे बैठ, बैठ जा। कितनी बड़ी है तेरी छुकरिया?''

''ऐसी ही कोई तेरह-चौदह बरस की हजूर।''

''अच्छा, अच्छा जा। तेरी पक्की रिपोर्ट लिख ली है। कल हम तफतीश को आएँगे।''

...सुनते हैं, दूसरे दिन उसकी दूसरी बिटिया भी उठा ली गई।

ज़ाहिर है कि संवाद थाने में दारोगा व गरीब नादान व्यक्ति के मध्य है। दारोगा काइयाँ है, वह येन-केन-प्रकारेण गरीब लाचार व्यक्ति को टरकाना चाहता है। संवाद, विधा के अनुरूप चुटीले और संक्षिप्त हैं। यहाँ पुलसिया मानसिकता और कार्य-प्रणाली केवल संवादों के माध्यम से ही अच्छी तरह उजागर हो रही है। संवाद शैली में पारस दासोत ने प्रचुर लघुकथाएँ लिखी हैं जो उनके संग्रह 'मेरी अलंकारिक लघुकथाएँ' में संकलित हैं। इनकी लघुकथाओं में आये संवाद टटके, संक्षिप्त और मारक हैं। एक लघुकथा प्रस्तुत है-

चौराहे पर

पारस दासोत

''मदारी, चौराहे पर तमाशा दिखा रहा था।''

''बंदरिया, चोली पहन रही थी।''

''पापा...और जमूरा?''

''जमूरा! बेटे, जमूरा अपनी कमीज उतार रहा था।''

'वॉक आउट' (संतोष सुपेकर) में टोपियों और जूतों की दो विरोधाभासी स्थितियों को लेकर टोपियाँ अर्थात बड़बोले राजनेताओं पर जबर्दस्त कटाक्ष किया गया है। यह लघुकथा निर्जीव वस्तुओं के मानवीयकरण की अच्छी मिसाल है। इस शिल्प का उपयोग यों तो कई लघुकथाकारों ने किया है परंतु यहाँ जिस सधे हुए अंदाज में अपनी बात कही गई है वह उद्धरणीय बन पड़ी है -

टोपियों और जूतों की एक सभा जारी थी। टोपियाँ जूतों पर हँस रहीं थीं। लगातार उन पर फब्तियाँ कस रहीं थीं, व्यंग्य कर रहीं थीं-कहाँ टोपी और कहाँ जूते? कहाँ ताज और कहाँ तख्त? जूतों की क्या औकात जो टोपियों की ओर नज़र उठाकर भी देख सकें...क्या मजाल उनकी जो टोपियों से तुलना की बात भी कर सकें....

तल्खियों भरी टिप्पणियाँ जब गले गले तक आने

लगीं तो जूतों से रहा न गया। उन्होंने आपस मे निर्णय किया और सभा मे कुछ चित्र सामने रख दिये।इन चित्रों में विभिन्न वर्गों के टोपी वाले, अपने -अपने आकाओं के जूतों पर सिर रख रहे थे, उनके जूते साफ कर रहे थे, कुछ अपने -अपने बॉस को जूते पहना रहे थे। इन्ही प्रयासों में कइयों की टोपियाँ उनके बॉस के जूतों पर गिरीं जा रही थीं।

देखकर टोपियों की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई, उनकी बोलती बंद हो गई। घोर लज्जा का अनुभव करते हुए सभी टोपियाँ सभा छोड़कर जाने लगीं...

जूतों ने मन ही मन फ्लेटरीकल्चर ('चापलूसी संस्कृति') का धन्यवाद किया।

अशोक भाटिया ने 'तीसरा चित्र' में शिल्प का एक सुंदर प्रयोग किया है जिसमें वृद्ध पिता अपने कलाकार पुत्र को तीन चित्र बानाने के लिए कहता है। पुत्र उच्च, मध्य व निम्न वर्ग के तीन चित्र बनाता है। तीसरा अर्थात निम्न वर्ग का चित्र सिर्फ पेंसिल से बनाया जाता है। पूछने पर पुत्र कहता है कि यहाँ तक आते-आते सारे रंग समाप्त हो गए थे। यह लघुकथा संकेत रूप में बहुत बड़ी बात कह जाती है। घनश्याम अग्रवाल ने अपनी लघुकथा 'सरकारी गणित' में सर्वथा मौलिक प्रयोग आजमाया है। यहाँ सरकारी कार्यालयों में व्याप्त भ्रष्टाचार को टेबल नंबर 1 से 6 पर रखी फाइलों के माध्यम से बड़ी खूबसूरती से बेनकाब किया गया है। इस लघुकथा में कोई कथा नहीं है और न ही कोई पात्र। फाइलें ही पात्र हैं और उनमें कैद रिपोर्ट ही कथा।

शिल्प की दृष्टि से निम्न लघुकथाएँ भी उल्लेखनीय हैं; मधुदीप की 'समय का पहिया घूम रहा है' (नाटक शैली), गोविंद शर्मा की 'दो बूँदें', 'अंगूर खट्टे हैं' (प्रतीकात्मक), अशोक भाटिया की 'समय की जंजीरें' (इतिहास का पात्र के रूप में आना), श्यामसुंदर दीप्ति की 'मूर्तियाँ' (दृश्यात्मक), पारस दासोत की 'आदमी' (संवाद शैली), सुरेश तन्मय की 'एकलव्य' (पौराणिक), हरिशंकर परसाई की 'जाति' (वर्णनात्मक), जसवीर चावला की 'कौआ' (जातक कथा), घनश्याम अग्रवाल की 'आज़ादी की दुम' (व्यंग्यात्मक), उपेंद्रनाथ अश्क की 'गिलट' (फैंटेसी), कुमार नरेंद्र की 'व्यापारी' (फ्लैश बैक) आदि।

दरअसल शिल्प का उपयोग जमूरे की डुगडुगी के रूप में नहीं होना चाहिए। शिल्प मकबरे के ऊपर की नक्काशी नहीं बल्कि उस भवन की वास्तुकला का उत्कृष्ट नमूना होता है जिसमें ज़िंदगी की हलचल निवास करती है। यहाँ विचारों की गरमाहट, मानवीय संवेदनाओं की खुशबू, लोकजीवन के संघर्ष, रिश्तों के बनते-बिगड़ते समीकरण और समाज की धड़कनें आबाद रहती हैं। इन सबके बिना खालिस शिल्प का कोई अर्थ नहीं। डॉ.विद्या भूषण के अनुसार, 'कथ्य शिल्प की नोक पर चढ़कर ही पाठक के मर्म को भेद पाता है। किन्तु जहाँ शिल्प की नोक कृत्रिम और खुरदरी होती है वहाँ वह पाठक के मर्म को न भेदकर स्वयं रचना को ही भेद जाती है।'

शिल्प का कार्य है लघुकथा को अधिक से अधिक संप्रेषणीय बनाना ताकि इसमें समाहित युगीनबोध ठीक उसी रूप में पाठकों तक पहुँच सके जिस रूप में लघुकथाकार चाहता है। इसमें भाषा, शैली, भाव, संवेदनाएँ, बिम्ब, प्रतीक, पात्रों की मनःस्थिति, संघर्ष चेतना, अंतर्विरोध, शब्दों की मितव्ययता, चरित्र चित्रण(यदि लघुकथा में गुंजाइश हो), एकान्विति, परिवेश आदि सभी कुछ आ जाता है।

भाषा

भाषा किसी रचना का प्राण तत्व है। कई सुप्रसिद्ध साहित्यकारों की अनाम कृतियों को पढ़कर हम बता सकते हैं कि यह प्रेमचंद, जैनेन्द्र , वृन्दावनलाल वर्मा, हरिशंकर परसाई या विष्णु प्रभाकर की है। यह कहानी और उपन्यास विधाओं की उपलब्धि है। लघुकथा भी शनैःशनैः इस मुकाम की ओर बढ़ती जा रही है। विक्रम सोनी, पृथ्वीराज अरोड़ा, डॉ.सतीश दुबे, सतीशराज पुष्करणा, बलराम अग्रवाल, सतीश राठी, अशोक जैन, रामकुमार आत्रेय, अशोक वर्मा, श्यामसुंदर अग्रवाल, श्यामसुंदर 'दीप्ति', अशोक भाटिया, जसबीर चावला, कमल चोपड़ा, कुमार नरेंद्र, मधुदीप, पवन शर्मा, रामायतन यादव, मुकेश वर्मा, मधुकांत, भगीरथ, रामकुमार आत्रेय, डॉ. रामकुमार घोटड़, रामयतन यादव, प्रबोध कुमार गोविल, सुकेश साहनी, रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु', सुभाष नीरव, योगराज प्रभाकर, संतोष सुपेकर, चित्रा मुद्गल, आभा सिंह, नीरज सुधांशु, विभा रश्मि, शोभा रस्तोगी, संध्या तिवारी, कांता राय, दीपक मशाल, अनघा जोगलेकर, चंद्रेशकुमार

छतलानी आदि कथाकार अपनी लघुकथा भाषा को साधने में काफी हद तक सफल हुए हैं। चैतन्य त्रिवेदी, रघुनन्दन त्रिवेदी, पारस दासोत जैसे लघुकथाकार भाषा को लेकर अलग से पहचाने जा सकते हैं। वस्तुतः भाषा के दो पैर होते हैं; कथ्य और शैली। ये दोनों पैर जितने मजबूत होंगे भाषा उतनी ही सरपट भागेगी। भाषा कथ्य के अनुरूप अपना चोला बदलती है और शैली के अनुसार श्रृंगार करती है। भाषा लेखक की उँगलियों के निशान हैं। जब लेखक किसी रचना पर काम करता है तो कई चीज़ें एक साथ इकट्ठा होकर घनीभूत रूप लेने लगती हैं। लेखक के भाषाई संस्कार, उसका अनुभव संसार, अनुभूति की गहराई, परिवेश, पात्र और उनकी मनःस्थिति सहित कई बातें हैं जो रचना प्रक्रिया का हिस्सा बनकर किसी न किसी रूप में विधागत भाषा को प्रभावित करती हैं। इसी कारण किसी भी विधा के लिए भाषा का सवाल बहुत पेचीदा है। लघुकथा के लिए तो और भी अधिक क्योंकि यहाँ लघुकथाकार के हाथ बंधे होते हैं। उसे सीमित शब्दों में वह प्रभाव उत्पन्न करना होता है जो कहानी और उपन्यास जैसी विधाएँ सैकड़ों शब्द खर्च करके उत्पन्न कर पाती हैं। सुप्रसिद्ध कवि स्व.कुंवर नारायण का यह कथन गौर करने लायक है, 'भाषा का मामला ज़िंदगी की तरह उलझा हुआ है। इसका ऐसा कोई समाधान निकाल लेना संभव नहीं लगता जो सर्वमान्य हो। जीवन की तरह भाषा की उलझनों को भी स्वीकार करके ही उसे लिखना-पढना पड़ता है।'

भाषा का सवाल पेचीदा इसलिए भी है कि एक ही लेखक की भिन्न-भिन्न रचनाओं में भाषा के रूप बदल जाते हैं। यह होता है कथ्य की माँग के कारण। वस्तुतः भाषा लेखक की क्रीड़ास्थली न होकर कथ्य की कर्मभूमि होती है।

तात्पर्य यह है कि लघुकथा या किसी भी विधा को भाषा के नियमों में कैद करना संभव नहीं है। रसूल हमजातोव तो और आगे बढ़ते हुए कहते हैं, 'मैं ऐसी पुस्तक लिखना चाहता हूँ जिसमें भाषा व्याकरण के अधीन न होकर व्याकरण भाषा के आधीन हो।' अर्थात वे व्याकरण से भी अधिक भाषा को महत्त्व देते हैं। प्रत्येक अनुभव समृद्ध कथाकार ऐसा करता है। कई अच्छी लघुकथाएँ पढ़ते हुए हमने देखा है कि जरूरत के अनुसार लघुकथाकारों ने शास्त्र का अतिक्रमण करते हुए भाषा के ऐसे तिलिस्म रचे हैं कि लघुकथा की संप्रेषणीयता और प्रभावशीलता दोनों में वृद्धि हुई है। दो उदहारण देखिए-

'क्या हम यह ज़मीन साथ ले जायेंगे या फिर अपने हिस्से का आसमान? और उसके देखते ही देखते आसमान एक विशाल घेवर में बदल गया।' (घेवरःकिरण अग्रवाल)

इसी संदर्भ में प्रस्तुत है आनंद हर्षुल की लघुकथा 'खंडहर का देखना'-

वह बहुत अच्छा घड़ीसाज है। उसके स्पर्श से समय बहता है। वह घड़ी को छूता है और समय नदी हो जाता है ...समय झरना हो जाता है...पर एक घड़ी, वह आज तक ठीक नहीं कर पाया है-घर की घड़ी। अब घड़ीसाज बूढ़ा हो चुका है। दोनों एक दूसरे को देखते हैं-जैसे एक खंडहर दूसरे खंडहर को देखता है।

शास्त्र के अतिक्रमण का अर्थ यह नहीं है कि भाषा की अराजकता हो। नए लघुकथाकारों को ऐसे प्रयोग बहुत सावचेती से करने चाहिए। जरा सी असावधानी होने से अर्थ विचलन की पूरी संभावना रहती है।

लघुकथा के लिए एक-एक शब्द कीमती है इसलिए पर्याप्त सोच समझकर लिखा जाना चाहिए। लिखते हुए हमारे मन में एक ही अर्थ ध्वनि के लिए कई तत्सम, तद्भव और पर्यायवाची शब्द गूँजेंगे। इनमें से सर्वाधिक सटीक, सर्वाधिक अर्थवान शब्द हमें चुनना है। हमारे दो आँखें और दो कान हैं, मगर ज़बान एक है। इसका मतलब यह है कि एक भी शब्द दुनिया के सम्मुख रखने से पूर्व हमें दो आँखों से अच्छी तरह देख लेना चाहिए, दो कानों से अच्छी तरह सुन लेना चाहिए। लेकिन ध्यान रहे कि शब्द क्लिष्ट न हों, वाक्य जटिल न हों। हमें अपनी विद्वत्ता प्रदर्शित नहीं करनी है बल्कि पाठकों के साथ तादात्म्य स्थापित करना है।

लघुकथाकार को भाषा पर विचार करते समय रसूल हमजातोव की इस बात को जरूर याद रखना चाहिए, 'लेखक के लिए भाषा वैसी ही है जैसे किसान के लिए खेत में फसल। हर बाली में बहुत से दाने होते हैं और इतनी अधिक बालियाँ होती हैं कि गिनना मुश्किल।...दानों को भूसे, घास-फूस से अलग करना जरूरी होता है। किसान सबसे अच्छे दानों को बीज के रूप में इस्तेमाल करने के लिए रख लेता है। भाषा पर काम करने वाला लेखक सबसे अधिक तो किसान जैसा होता है।'

भाषा पर काम करने वाला लेखक कुम्भकार की

तरह भी होता है। मेरे पड़ोस में एक वृद्ध कुम्हार सवाबा रहता था। सुबह पाँच बजे से ही उसकी थप-थप आरम्भ हो जाती। मैं उसके पास बैठकर बर्तन बनाने की प्रक्रिया को ध्यान से देखता। माटी रौंधना, चाक पर नमूने उतारना, थाप-थाप कर घड़े का रूप देना और फिर आवाँ पकाना। सुबह जब आवाँ खुलता तो बरतनों की रंगत ही निराली होती। सवाबा उन्हें उंगली के टकोरों से बजा-बजाकर परखता। मैं स्वयं की सवाबा से तुलना करता-

'मुझे सीखना है अभी भी/ यह हुनर/ यही-/ शब्दों को तपाने का/ तपाकर पकाने का/ पकाकर उनसे/ सवाबा के बरतनों की तरह/ खनकदार/ ठनकार/ निकलने का/ जिस पल/ यह हुनर फल जाएगा/ मुझमें और सवाबा में/ कोई फर्क नहीं रह जाएगा/ इसीलिए/ कभी-कभी/ सोचता हूँ/ माटी का कवि है सवाबा/ और मैं/ शब्दों का कुम्भकार'

तो लघुकथाकार को शब्दों का कुम्भकार बनना पड़ेगा, तभी उसकी लघुकथा से पके बरतन की तरह खनकदार ठनकार निकलेगी जो पाठकों को मुग्ध कर देगी। ऐसे पके शब्द अनुभूति की गहराई से निकलते हैं। अनुभव से प्राप्त शब्द तो कच्ची मिट्टी से बनी आकृति की तरह होते हैं। जो लेखक अनुभव को अनुभूति में ढाल सकता है वही भाषा का कारीगर है। डॉ.अशोक भाटिया इस बात को यों कहते हैं, 'एक बोलचाल की भाषा होती है। उसे रचनात्मक या साहित्यिक भाषा में इस प्रकार ढाला-तराशा जाता है कि भाषा में मूल संवेदना, स्वाभाविकता, ज़िंदगी की धड़कन सुरक्षित रहे।'

प्रत्येक लघुकथाकार चाहता है कि उसकी लघुकथा संप्रेषणीय हो। अर्थात जो कुछ भी वह कहना चाहता है वह पाठक के मन-मस्तिष्क में हूबहू उतर जाय। अलग से व्याख्या की आवश्यकता न पड़े। जो कहना है वह रचना स्वयं कहे। इसके लिए प्रायः लेखक अलंकारविहीन, सपाट, सरल, सहज व लोकजीवन से जुडी भाषा का प्रयोग करते हैं। डॉ.शमीम शर्मा लघुकथा की भाषा पर विचार करते हुए कहती हैं, 'लघुकथा की भाषा संस्कृतनिष्ठ, क्लिष्ट या शास्त्रीय अथवा अत्यधिक बौद्धिक नहीं है। इसमें सहजता, रोचकता, चुस्ती, बेधकता, पैनापन, प्रभावोत्पादकता, संप्रेषणीयता, सांकेतिकता का आधिक्य होता है।' इस सहज भाषा के निम्न उदाहरण देखिये-

1. 'सीढियाँ चढ़ते ही वह दिखाई पड़ती। गोरा रंग, घने काले बाल, तीखी ऊंची नाक। कुल मिलाकर बेहद आकर्षक चेहरा। जबसे दिवाकर ने इस पी.सी.ओ. में आना शुरू किया था, उसके दिन बेहद अच्छे गुजर रहे थे। जिन्दगी से लगाव-सा महसूस होने लगा था।' (खूबसूरत लडकी : प्रतिभा श्रीवास्तव)

'सुननेवाला खौफ, अफ़सोस और आक्रोश से भर जाता। कुत्ते-भेड़िये हो गए हैं लोग! घोर कलजुग! अनर्थ! कुछ ही देर में बात मोहल्ले भर में फ़ैल गई थी। पुलिस कार्रवाई करने से पहले मीडिया वाले भी आ पहुँचे थे। भीड़ मुरारी मास्टर के घर के बाहर जमा थी।' (खौफ : कमल चोपड़ा)

2. मैंने जैसे ही भीड़ भरे चौराहे से बायीं ओर जाने के लिए मोटर साइकिल आगे बढ़ाई ही थी कि तभी मेरे सामने अचानक एक हृष्ट-पुष्ट अनजान नवयुवक बाएँ हाथ में एक फ़ाइल और दस-बीस-पचास के कुछ नोट दायें हाथ की मुट्ठी में दबाए हुए मेरे सामने आ खड़ा हुआ।' (धोखाधड़ी : प्रभात दुबे)

'बासु के बाएँ हिस्से की तीसरी सीट पर बैठे सत्येन्द्र का ध्यान दाएँ कंधे से बाईं ओर को लटकाए शोल्डर-बैग तथा तीन-चार फीट का डंडा थामे वृद्ध को सहारा देकर चढ़ते अधेड़ व्यक्ति की ओर गया जो टिकट पर सीट का नंबर देखकर उसके निकट पहुँच गया।' (थके पाँवों का सफ़र : डॉ.सतीश दुबे)

सादगीपूर्ण भाषा का प्रयोग करते हुए अलग-अलग कथाकार अपनी लघुकथाओं में अलग-अलग प्रभाव उत्पन्न करते हैं। कई बार उनका प्रयोग संप्रेषणीयता में वृद्धि करता है तो कहीं-कहीं असावधानीवश बाधक भी बन जाता है। ऊपर प्रथम उद्धरण की दोनों लघुकथाओं में छोटे-छोटे वाक्यों की रचना की गयी है जिससे ये सुग्राह्य बन पड़ी हैं। जबकि द्वितीय उद्धरण के दोनों अवतरण में लगभग एक पैराग्राफ जितने लम्बे वाक्य हैं। इस हद तक लम्बे वाक्यों से गुजरते हुए पाठक के साथ ही लेखक को भी कितना दायें-बाएँ होना पड़ता है यह हम अच्छी तरह समझ सकते हैं। इसलिए लघुकथा के विद्वानों ने यों ही नहीं कहा है कि वाक्य छोटे-छोटे हों, शब्दों में मितव्ययता बरती जाय वगैरह-वगैरह। ऊपर उल्लिखित प्रतिभा श्रीवास्तव की लघुकथा 'खूबसूरत लड़की' का सौंदर्य देखने के लिए पूरी लघुकथा यहाँ प्रस्तुत है-

सीढियाँ चढ़ते ही वह दिखाई पड़ती। गोरा रंग, घने

काले बाल, तीखी ऊंची नाक। कुल मिलाकर बेहद आकर्षक चेहरा। जबसे दिवाकर ने इस पी.सी.ओ. में आना शुरू किया था, उसके दिन बेहद अच्छे गुजर रहे थे। जिन्दगी से लगाव-सा महसूस होने लगा था। उसे शिद्दत से महसूस हो रहा था कि इस लड़की से दोस्ती करनी चाहिए। वह लगातार वहाँ आता रहा। दिवाकर की कोशिश धीरे-धीरे सफल हो रही थी।

''आपका नाम क्या है?'' दिवाकर ने कुछ रुक-रुककर पूछा।

''दामिनी...!'' कहकर जब उसने बड़ी-बड़ी आँखें ऊपर उठाईं तो दिवाकर उन आँखों की गहराई में देखता रह गया।

''आपका नाम...?'' वह पूछ रही थी।

''जी... दिवाकर...!'' वह बुरी तरह हकला गया था। दामिनी के गुलाबी होठों पर हल्की मुस्कराहट थी। क्रमशः दोनों की दोस्ती गहरी होती गई। दामिनी हमेशा हँसकर दिवाकर का स्वागत करती। बहुत सारी बातें भी करती।

पी.सी.ओ. बंद होने का समय था। दिवाकर बड़ी तेजी से अंदर दाखिल हुआ। दामिनी सामने बैठी थी। वही गुलाबी मुस्कान चेहरे पर थी।

''आओ, दिवाकर।'' दामिनी का स्वर हवा में लहरा गया।

''आज तुमने देर कर दी। पी.सी.ओ. तो बंद होने वाला है।''

''दामिनी।'' दिवाकर सीधे अपनी बात पर आ गया, मैं आज तुमसे कुछ जरूरी बातें करना चाहता हूँ।''

''कहो दिवाकर।'' दामिनी ने शांत स्वर में कहा।

''दामिनी, मैं तुम्हारे साथ जिंदगी का सफर तय करना चाहता हूँ...। क्या तुम मेरा साथ दोगी?'' दिवाकर ने जल्दी से अपनी बात पूरी की। वह कशमकश में था। दामिनी हौले से मुस्कराई और उसने दिवाकर की आँखों में झाँकर कहा, ''दिवाकर, तुम मेरे साथ जिंदगी का सफर तय करना चाहते हो...तुम मुझे कितना जानते हो...जिंदगी तो बहुत बड़ी बात है... दिवाकर, तुम मेरे साथ सड़क तक भी नहीं चल सकते।'' दामिनी की आँखें लाल हो रही थीं।

''क्यों दामिनी?'' वह बौखला-सा गया। जवाब में दामिनी ने नीचे झुककर मेज के नीचे रखी बैसाखियाँ उठाईं और बाँहों के नीचे रखकर आहिस्ता से पी.सी.ओ. के बाहर निकल गई। दिवाकर उसे देखता रह गया, अवाक्।

लघुकथा में बिम्ब, प्रतीक, रूपक, लोकोक्तियों, मुहावरों के महत्त्व को नज़रंदाज़ नहीं किया जा सकता है। ये वे उपादान हैं जो लघुकथा की लघुता के अनुकूल हैं क्योंकि इनसे शब्दों की फिजूलखर्ची से बचा जा सकता है। साथ ही भाषा पर्याप्त सर्जनात्मक बन पड़ती है, उसका सौष्ठव बढ़ जाता है। युवा आलोचक जितेन्द्र 'जीतू' कहते हैं, 'लघुकथा में, विशेष तौर पर, लघु होने की वजह से भाषा की सांकेतिकता का अतिरिक्त महत्त्व है। सांकेतिकता रचनाकार को अनावश्यक विवरणों से बचाती है, रचना में खूबसूरती लाती है। सांकेतिक भाषा के उपादानों में प्रतीक, बिम्ब, रूपक, अलंकार का अपना महत्त्व है।'

इसका अर्थ यह नहीं है कि आप मुहावरों की भीड़ जमा कर दें, या बिम्ब व प्रतीक की भरमार लगा दें, या लोकोक्तियों का लोक ही रच दें। हमें लघुकथा को छोटी-सी पार्टी में आयी उस प्रदर्शनप्रिय स्त्री की तरह नहीं बनाना है जो गहनों से लकदक है और जिसके श्रृंगार तले स्वाभाविक सौन्दर्य दबकर रह गया है। आप मुहावरे की महज़ एक बिंदी लगा दें, सौन्दर्य दस गुना बढ़ जाएगा। प्रतीक के कर्णफूल पहना दें या गले में बिम्ब का हार डाल दें। बस यह सादगीपूर्ण श्रृंगार ही भाषा को आभा मंडित कर देगा। यहाँ हम फिर से दागिस्तानी साहित्यकार रसूल हमजातोव की इस बात को रेखांकित कर सकते हैं, 'शोरबे को मजेदार बनाने के लिए जिस तरह उसमें तरह-तरह के सुगन्धित पत्ते या मसाले डाले जाते हैं, उसी तरह अपनी नीरस फीकी कहानियों में मैं कहीं-कहीं एकाध कहावत या मुहावरा डाल देता हूँ।'

भाषा को सृजनात्मक ऊंचाइयों पर पहुँचाने वाले दो नाम लघुकथा विधा के आकाश पर अलग ही चमकते हुए दिखाई देते हैं। इनमें से एक है चैतन्य त्रिवेदी और दूसरे स्व.रघुनन्दन त्रिवेदी। इनके यहाँ बिम्ब व प्रतीक का रचाव देखने लायक है। रघुनन्दन की 'नामुमकिन' लघुकथा में आया यह वाक्य प्रयोग देखिये, 'उसके जोर देने पर मैं समझ गया वह आकाश में उड़ते हुए पंछी की तरह बिना कोई पद चिह्न छोड़े मेरी ज़िंदगी में से होकर गुज़र जाना चाहती थी।' इसी लघुकथा (हालाँकि इसे डॉ.सत्यनारायण ने कहानी की संज्ञा दी है। परन्तु 800 शब्दों की इस कथा की एकान्विति इतनी सघन है कि यह स्वतः लघुकथा की श्रेणी में आ विराजती है) से एक और

उदहारण प्रस्तुत है-

'मुझे आश्चर्य हुआ कि उसके चेहरे पर तमतमाहट के बजाय अब वही शुरुआती दिनों वाली मासूम-सी मुस्कुराहट फ़ैली हुई थी जो मुझे फूल और चाँद और ओस और आकाश वाली भाषा बोलने के लिए उकसाती थी।'

रघुनन्दन को पढ़ते हुए लगता है कि वे लघुकथा के आकाश पर भाषा का इन्द्रधनुष रचने वाले कुशल चितेरे हैं। उनकी 'स्मृतियों में पिता' श्रंखला की लघुकथाएँ पढ़ते हुए हम चकित रह जाते हैं। इतनी मुलायम, इतनी संस्पर्शी, इतनी मीठी भाषा रचना किसी रचनाकार के लिए कैसे संभव है ! आप भी देखिये-

''अकेले थे तब कठोर थे। जो कमाते खर्च हो जाता। कुछ बचता भी नहीं था। कोई चिंता भी नहीं थी। खाते-पीते और तानकर सो जाते थे। देखा जाय तो मजे में थे, पर कुछ अधूरा-सा भी था तो सही। एक किस्म का अनमनापन। जीने का जैसे कोई मतलब नहीं। दरअसल कुछ होना था। कुछ इस तरह कि जैसे कोई सख्त और खट्टी-सी चीज़ किसी नरम और मीठी-सी चीज़ में तब्दील होना चाहे, मसलन आम या बेर तो वह क्या करे?'' पिता कह रहे थे।

किस्से की शुरुआत दिलचस्प थी। मैं और भाई और बहन उत्सुक सुन रहे थे। माँ सिर्फ मुस्कुरा रही थी।

मुस्कुराती हुई माँ का चेहरा एकदम बहन से मिलता-जुलता था। वैसे ही जैसे कुछ उदास, कुछ गंभीर होकर बहन अपने चेहरे को माँ जैसा कर लिया करती थी।

अगर पिता को कहीं बाहर जाना होता तो वे माँ की उस मीठी-सी मुस्कुराहट को जरूर अपने साथ ले जाते। पर यह दिसंबर की सुबह थी। पिता को कहीं जाना नहीं था। वे फुरसत में थे। हमारे बीच अंगीठी पड़ी थी। अंगीठी पर चाय उबल रही थी। माँ की मुस्कुराहट को हमने चाय में घुल जाने दिया।

फिर जो पिता ने कहा, सब मुझे याद है। वे कह रहे थे- उन्होंने शादी की, घर बसाया, बाद में हम आए और यों उनकी सारी कठोरता जाती रही। (स्मृतियों में पिता-एक)

चैतन्य त्रिवेदी की लघुकथाओं में भी भाषा का खिलंदड़ापन हमें कहीं गहरे तक आलोड़ित कर देता है-

'पता नहीं उस राज्य का रिवाज ही कुछ विचित्र था। वहाँ दुश्मन राज करते थे। जो दुश्मन नहीं है किसी का , राज कार्य के सर्वथा अयोग्य समझा जाता। वहाँ अक्ल के दुश्मन राज करते। जो क़ानून का दुश्मन होता वह क़ानून की हिफाजत का काम देखता। गरीबों का दुश्मन गरीबी हटाने का काम देखता था। कुछ धर्म के दुश्मन थे। वे बड़े धार्मिक माने जाते थे। समाज के दुश्मन समाज सुधारक।' (अपना दुश्मन)

लेखक ने अपनी बात कहने के लिए जो दुश्मन का बिम्ब सृजित किया है वह लघुकथा को कलात्मक ऊंचाइयों पर पहुँचाता है। साथ ही पाठक को यह समझने में कोई कठिनाई नहीं आती है कि यहाँ किस राष्ट्र की ओर इशारा किया गया है। जहाँ रघुनन्दन त्रिवेदी की भाषा हमें संवेदनात्मक रूप से गहरे छू जाती है वहीं चैतन्य त्रिवेदी की लघुकथा में उपस्थित व्यंग्य की महीन धार हमारे अंतस को छलनी कर देती है।

इधर कई लघुकथाकारों ने अपनी भाषा में मौलिक प्रयोग कर सर्जनात्मकता को बचाने की सार्थक पहल की है। कुछ उदहारण दृष्टव्य हैं-

'दोनों को याद आते हैं तरुणाई के वे गज़ब दिन, जब इच्छाओं को चश्मे नहीं लगे थे... देहों के खुलते अग्निकुंड में कैसे छम-छम-छपाक किया करती थीं वे सखी' (वासना : राजकुमार गौतम)

'सीट पर सामान टिकाते-टिकाते मैं स्मृतियों की पगडंडियों पर निकल चुका था।' (मैं नहीं जानती : कमलेश भारतीय)

'पहली बार उसकी हथेली और कलसा दोनों एक साथ भरे थे, पर आँखें बुझी-बुझी थीं।' (तुलसा का कलसा : घनश्याम अग्रवाल)

'सुर्ख जोड़े में टंके सलमे-सितारे मुझे ऐसे लगे जैसे दादी की हसरतें मुस्करा रही हों।' (दर्द के रिश्ते : प्रतापसिंह सोढी)

'मैंने उस नोट की रीढ़ को छुआ, उसकी नसें टटोलीं। उनमें दौड़ता हुआ लाल और नीला खून देखा।' (नोट : अवधेश कुमार)

'ज़िंदगी किसी मजदूर के हाथों-सी कठोर होती है, भूखे बच्चे के पेट-सी खाली, माँ की आँखों-सी सूनी, कपड़ों-सी फटी-मैली, दिख रहे बदन-सी नंगी और बेबस होती है, जिसे ठेले की तरह खींचा जाता है।' (ज़िंदगी : अशोक भाटिया)

'वो वचना जो धनसिंह के घर काम करता है, बता

रहा था कि इस टोपी वाले ने धनसिंह को पट्टी पढाई कि भेड़ की ऊन मुड़ने के लिए ही होती है।' (जब से वह आया : कमल चोपड़ा)

'वृद्ध पिता ने विचलित होते हुए कम्पित स्वर में कहा, 'मन की इस आग को पानी मत बना बेटे। ठंडी आग ठुकराई जाती है, पूजी नहीं जाती। (ठंडी आग : श्यामसुंदर व्यास)

स्थितियों की विद्रूपता को रेखांकित करने के लिए कई बार भाषा में व्यंग्य का पुट बड़ा कारगर होता है। व्यंग्य की तासीर ऐसी है कि पाठक तिलमिलाकर रह जाता है। हरिशंकर परसाई और शरद जोशी ने अपनी लघुकथाओं में व्यंग्यात्मक भाषा का खूब प्रयोग किया है। आरम्भ में कुछ लघुकथाकारों ने भाषा के इस मारक तत्व का इस्तेमाल अपेक्षाकृत प्रचुरता से किया था मगर धीरे-धीरे ऐसे तीखे तेवर गायब होते चले गए। फिर भी शंकर पुणताम्बेकर, घनश्याम अग्रवाल और संतोष सुपेकर जैसे लघुकथाकारों ने इस चीज को बचाए रखा। कुछ उदहारण प्रस्तुत हैं-

'बच्चे से नतीजा सुनते ही स्कूल इन्स्पेक्टर जीप से स्कूल की ओर दौड़ा और हेड मास्टर के कमरे में पहुँचते ही दहाड़ा, 'ए मास्टर के बच्चे, भूल गया कि मेरा बच्चा तेरे स्कूल में पढता है।' (चुनाव : शंकर पुणताम्बेकर)

'भारत सरकार ने गंगी की उंगली पर एक काला टीका लगाते हुए इस फ्रीडम फाइटर को परिवार सहित ठाकुर के कुएँ के कुछ करीब कर दिया।' (आज़ादी की प्यास : घनश्याम अग्रवाल)

'पहली बार पक्ष-विपक्ष ने बिना किसी शोर-शराबे के पूरी फिल्म देखी। फिल्म समाप्त होने पर दोनों ने न केवल एक साथ तालियाँ बजाई, एक साथ चाय भी पी और फिर वे एक साथ सोचने भी लगे।' (गाँधी की भ्रूण हत्या : घनश्याम अग्रवाल)

'चुनावों के दौरान 'लोकतंत्र अपने देश में घूमने आया। रास्ते में उसका सामना एक औरत से हुआ। विशालकाय, काला शरीर, बड़े-बड़े सफ़ेद दाँत, लाल-लाल आँखें, सर पर साठ-सत्तर सफ़ेद बाल। देखकर डर गया लोकतंत्र ..।' (हाइटेक सैर : संतोष सुपेकर)

सतीश दुबे की 'हमारे आगे हिन्दुस्तान', रूप सिंह चंदेल की 'गरीब बौद्धिक', 'कुर्सी संवाद', 'अंतर', शशिकांत सिंह शशि की 'पालतू कौए' तथा विनोद दवे की 'इंसानियत मरी नहीं' लघुकथाओं की भाषा में घुले व्यंग्य का कटु-तिक्त स्वाद भी याद रह जाता है।

कुछ लघुकथाकारों ने अपनी रचनाओं में आंचलिक भाषा का सटीक प्रयोग किया है। वस्तुतः जहाँ पात्रानुकूल भाषा का सवाल आता है वहाँ एकरसता से बचने के लिए और लघुकथा को विश्वसनीयता प्रदान करने के लिए आंचलिक भाषा और मुहावरे का प्रयोग जरूरी है। इस सन्दर्भ में लघुकथा के सिद्धांतकार भगीरथ का कहना है, 'लघुकथा की भाषा निर्विवाद जनभाषा ही रही है। पात्र एवं परिवेश के अनुरूप भाषा, रचना में सौन्दर्य की सृष्टि करती है। अतः भाषा में आंचलिकता आना स्वाभाविक है। अंचल के मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ जनता के अनुभवों का निचोड़ होती हैं और लघुकथा के लिए उपयोगी हैं क्योंकि शब्दों की मितव्ययता से रचना में कसाव भी आ जाता है।' हाँ, यह जरूर है कि आंचलिकता के फेर में लघुकथा अपठनीय न हो जाय। इस दृष्टि से भगीरथ की 'फूली' एक आदर्श लघुकथा है। पति भानिया पर बार-बार वीरजी के आने की परेशानी को फूली जिन शब्दों में व्यक्त करती है उसके स्थानापन्न कोई दूसरे शब्द हो ही नहीं सकते-

'सुबह पैली काम के टैम कांई भांड्यो है। हे वीरजी ! मैं थारा हाथ जोडूँ, क्यूं म्हारे पीछे लगो हो।'

चाँद मुंगेरी की 'ठाकुर-हँसुआ-भात' में आंचलिक संवादों के माध्यम से दारिद्र्यजन्य बेबसी का रेशा-रेशा उधेड़कर रख दिया गया है-

'अम्मा, आज दू दिन बाद तू हमका खिलैयवेड़ भी तो रोटी-यूं भी मडुआ की?'

'अरे करमजला, अब ही साल भर पहले जब बड़का ठाकुर मारा रहा तो तू हुनका मरण भोज में भात खाया कि नहीं ...बोल?' पूरी लघुकथा इस प्रकार है-

ठाकुर-हंसुआ-भात

-अम्मा! भूख लगी है हमका भात देय दो अम्मा.

-थोडा वखत और रुक बबुआ। बाप गेल हौह्य माडुआ पिसाबे खातिर मिल...हूनका औवते ही तोहका रोटी बना दे वौह्य

माँ के आश्वसन भरे शब्द भी बबुआ को आश्वस्त

न कर सके...वह तुनक कर बोला-रोटी! मडुआ की? अम्मा आज दू दिन के बाद तू हमका खिलेयवेड़ भी तो रोटी-यू भी मडुआ की?

-तब तोहका और का चाहीं खीरे पुडी?

माँ खीज कर बोली . माँ के क्रोध को पचाकर बबुआ ने खुशामदी स्वर में कहा-अम्मा हमको भात दे दो अम्मा.बहुत जी चाहे भात खावेह्य ला .

-अरे करमजला अब ही साल भर पहले जब बड़का ठाकुर मारा रहा तो तू हुनका मरण-भोज में भात खाया कि नहीं ....बोल?

-हाँ! खाया रहा.!. लेकिन अम्मा का ई दूसरा ठाकुर नहीं मरेगा?

-मरेगा कैसे? बड़का को चोर मारा रहा...हिनका कौन..मारेगा?

माँ के प्रश्न को सुन बबुआ की पकड़ हंसुआ पर सख्त हो गई...अब उसके समक्ष था सिर्फ-

ठाकुर ...हंसुआ....भात.

ठाकुर ...हंसुआ....भात

◆

आंचलिक भाषा के प्रभावी प्रयोग की दृष्टि से विक्रम सोनी की 'जूते की बात', बलराम की 'बहू का सवाल', चित्रा मुद्गल की 'गरीब की माँ', 'बोहनी', संजीव की 'आतंक पूजा', सिमर सदोष की 'बढ़ता हुआ जहर' आदि लघुकथाएँ भी उल्लेखनीय हैं।

संवादों में पात्रानुकूल भाषा का उपयोग बहुत मायने रखता है। आवश्यक नहीं कि पात्र की भाषा आंचलिक ही हो, हाँ उसके परिवेश से जुडी जरूर होगी। एक टपोरी, मवाली, माफिया, तस्कर, पुलिसकर्मी, किसान, विद्यार्थी, उद्योगपति, राजनेता, भ्रष्टाचारी, ईमानदार, अनपढ़, विद्वान , ग्रामीण, शहरी सभी को भाषा के लिहाज से हम एक ही लाठी से नहीं हाँक सकते। जब ये बोलेंगे तो इनका पूरा परिवेश बोलेगा। जिस पेशे से पात्र जुडा हुआ है वह शब्दावली भी उसके संवादों में जरूर आयेगी, चाहे उसकी भाषा अंगरेजी ही क्यों न हो, जैसे-

'मिस्टर गौड़ ! इट्स अवर वर्क, नोट योर्स। आपका काम है-हमारे आदेश को फोलो करना, अंडरस्टैंड !' (ऐलान-ए-बगावत : मधुदीप)

सामाजिक बदलाव के साथ भाषा में भी परिवर्तन आता है। सोशल मीडिया के इस दौर में हम यह बात आसानी से देख सकते हैं। 'फेसबुक की एक पोस्ट' (भगीरथ), 'कसौटी' (सुकेश साहनी), प्रेम ब्लॉग(सतीश दुबे), आदि लघुकथाओं में रचनाकारों ने इस बदलती हुई भाषा को पकड़ने की सफल कोशिश की है। भगीरथ की लघुकथा का अंश देखिये-

'फेसबुक की न्यूज़फीड पर एक फ्रेंड ने एक युवती का फोटो पोस्ट किया। जींस और टॉप पहने, एक हाथ में सुलगती सिगरेट और दूसरे हाथ में थमी बोतल ओठों से लगाकर सुरापान करती हुई। कुछ ही मिनटों में 312 बार लाइक बटन दब गया, पचास लोगों ने शेयर किया, चालीस लोगों ने कमेन्ट किये।'

सुकेश सहनी अपनी लघुकथा 'खेल : रेनड्रॉप के चैटरूम से' सोशल मीडिया की भाषा को इस तरह वर्चुअल संवादों में ढालते हैं-

'मायसेल्फ : टेल मी एवरीथिंग अबाउट दिस, हम इस स्टोरी को अपनी पार्टी की वेबसाइट के मुख्य पृष्ठ पर डालेंगे।

रेनड्रॉप : वाट इस द नेम ऑफ़ योअर पार्टी?

मायसेल्फ : सेकुलर 2002 डॉट कॉम

कहने का तात्पर्य है कि बदलते समय की नब्ज को पहचानने वाला लघुकथाकार भाषाई शुद्धतावाद से बचता है। शुद्धतावाद के फेर में समय उससे आगे निकल जाएगा और वह सामाजिक परिवर्तनों का सही मूल्यांकन करने से वंचित रह जाएगा। रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' ठीक ही कहते हैं, 'हम दुनिया से अलग नहीं हैं। लाठी लेकर बहती नदी को नहीं रोकी जा सकती। भाषा में आये बदलावों को महसूस ही नहीं, स्वीकार करना पड़ेगा। चैटरूम में फेरीवाले की या सब्जी मंडी की भाषा नहीं चलेगी और सब्जी मंडी में विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की भाषा या विवाह संस्कार की पारम्परिक शब्दावली की भाषा नहीं चलेगी। हमें कथ्य के अनुरूप अवसर, आवश्यकता और परिस्थिति को समझना होगा।'

संवेदना

रूस में खेले गए फीफा विश्वकप के क्वार्टर फ़ाइनल मैच की एक घटना है। फ्रांस और उरुग्वे के बीच मुकाबला था। फ्रांस का खिलाड़ी एंटोनी ग्रीजमेन गोल दागता है। फ्रांस के सभी खिलाड़ी खुशी से उछल पड़ते

हैं। स्टेडियम में बैठे फ्रांसीसी दर्शक भी। एंटोनी उनके लिए हीरो थे। लेकिन एंटोनी हाथ बाँधे चुपचाप खड़े रहते हैं। न वे उछले, न कूदे, न नाचे और न ही हाथ लहराते हुए मैदान का चक्कर काटा। बाद में उन्होंने जश्न न मनाने का कारण बताया। उन्होंने बताया कि उरुग्वे के एक कोच ने उन्हें फुटबाल खेल की बारीकियां बतायी थीं, अपने पहले गुरु को सम्मान प्रदान करने के लिए मैंने जश्न नहीं मनाया।

यह नैतिकता का एक विरल उदहारण है, उच्च मानवीय मूल्य है जिसके चलते एक खिलाड़ी जोश में भी होश नहीं खोता है। यही योग है जिसके लिए गीता में कहा है, 'सिद्धय सिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते।'

हमारे देश के हालात पर नज़र डालिए। अखबारों की शीर्ष पंक्तियाँ सब बता देंगी। हत्या, बलात्कार, लूट-पाट, धोखाधड़ी, ऑनर किलिंग, भीड़तंत्र की खबरों से अखबारों के मुख पृष्ठ अटे पड़े हैं। इन ख़बरों को पढ़-पढ़कर हमारी संवेदनाएं भोथरी हो गयी हैं। पहले अगर किसी एक की भी हत्या की खबर पढ़ लेते तो मन बेचैन हो जाता, बलात्कार की खबर पर हम आक्रोश से भर उठते, दुर्घटना में इक्का-दुक्का किसी के मर जाने पर दिल उदासियों से घिर जाता। आज यह सब थोक में हो रहा है और हमें कुछ महसूस ही नहीं होता। मासूम बच्चियों के साथ बलात्कार हो रहे हैं और यह देखा जा रहा है कि बलात्कारी की जात क्या है या उसकी राजनीतिक प्रतिबद्धताएं किसकी तरफ हैं। इतना पतन ! इसीलिए 'सियाही' लघुकथा(बलराम अग्रवाल) का पात्र अपनी अम्मा से कहता है कि वह रोटियाँ अखबार में लपेटकर न दे बल्कि फटे-पुराने अंगोछे में से ही सही, टुकड़ा निकालकर उसमें बाँधा करे। वह दुखी स्वर में कहता है, ''खाने को बैठते ही निगाह रोटियों पर बाद में जाती है अम्मा, ख़बरों पर पहले जाती है ...इतनी गंदी-गंदी ख़बरें सामने आती हैं कि खाने से मन ही उचट जाता है।'' यह पात्र गरीब, मेहनतकश वर्ग से आता है, शायद इसीलिए इसकी संवेदनाएं अभी तक सान पर हैं।

ऐसी बात नहीं है कि देश-दुनिया में कुछ अच्छा घटित होता ही न हो। परन्तु अखबारों की बिक्री और चैनलों की टी.आर.पी. 'गंदी' ख़बरों से ही बढ़ती है। अच्छी ख़बरें तो उन्हें मजबूरी में देनी पड़ती हैं , जब सारी दुनिया के अखबार देते हों; जैसे कि थाईलैंड की गुफा में फंसे किशोर खिलाडियों को बचाने का साहसिक कारनामा। इसलिए अखबारों-खबरिया चैनलों से हम ज्यादा संवेदनशीलता की उम्मीद नहीं कर सकते। यह बात जरूर है कि कोरोना संकट के इस दुरूह समय में डॉक्टरों, नर्सिंग स्टाफ, सफाईकर्मियों, पुलिस, सोनू सूद जैसे लोगों की संवेदनशीलता पर चैनलों ने अच्छी कवरेज दी है जिससे लोगों में इस बात का विश्वास जगा है कि मानवीय संवेदनाएँ अभी तक पूरी तरह भोथरी नहीं हुई हैं। ये साहित्यकार ही हैं जिनका मन अतिसंवेदनशील होता है और जो बार-बार उनकी रचनाओं में प्रकट होता है। आज चूंकि लघुकथा सर्वाधिक पढी जाने वाली विधा है इसलिए इसके रचयिताओं का दायित्व और भी बढ़ जाता है। रामविनय शर्मा कहते हैं, 'मनुष्य में छिपी मानवता का दर्शन कराकर पाठक को संवेदनशील बनाना ही महान कृतियों का आत्यंतिक लक्ष्य होता है।' इसी बात को आलोचक चंचल चौहान यों कहते हैं, 'साहित्य का काम उन तमाम अच्छी बातों को इस ढंग से रखना होता है कि ये बातें पाठक के हृदय को छूती हुई उसके भावों का परिष्कार करे। इन अच्छी बातों को हम मानवीय मूल्य भी कहते हैं। जैसे मनुष्य मनुष्य के बीच प्रेम, सद्भाव, उत्पीडित-दलित के प्रति सहानुभूति, अत्याचार के खिलाफ गुस्सा, समाज की बुराइयों के खिलाफ संघर्ष करने की भावना, समाज को बेहतर बनाने की ललक।'

तो आइये हम कतिपय ऐसी लघुकथाओं की शिनाख्त करते हैं जो मनुष्य मनुष्य के बीच करुणा, प्रेम, सहानुभूति, सहयोग, सौहार्द की बात करतीं हों, जो पाठकों में संवेदनशीलता जगाकर उन्हें और अच्छा इंसान बनने की प्रेरणा देती हों, जो हिंसा, बलात्कार, भय, भ्रष्टाचार, झूठ, ईर्ष्या, फरेब से मुक्त समाज का सपना जगाती हों।

सतीशराज पुष्करणा की लघुकथा 'मन का साँप' का कथानायक, जिसकी पत्नी पीहर है और जिसके कमरे में युवा नौकरानी सो रही है, भटकते मन पर विवेक का अंकुश लगाते हुए नौकरानी को जगाकर दूसरे कमरे में भेज देता है। आज जबकि मासूम बच्चियों के साथ दरिन्दगी करने से भी लोग नहीं चूक रहे हैं, 'मन का साँप' बहुत बड़ा सन्देश दे जाती है। रूप देवगुण की 'जगमगाहट' भी मनुष्य मनुष्य में विश्वास जगाने वाली खूबसूरत कथा है। बॉस लोगों की आदतों से परेशान लड़की तय करती है कि अगर नया बॉस कुछ ऐसी-वैसी

हरकत करेगा तो चुप नहीं रहेगी बल्कि सामना करेगी। एक दिन बॉस उसे किसी काम से रिकॉर्ड रूम में बुलाता है। लड़की आशंकित सी पहुँचती है। काम करते हुए लाइटें चली जाती हैं। वह सिहर उठती है, अब तो अनर्थ होने वाला ही है। परन्तु जब बॉस कहता है कि तुम्हें अँधेरे से डर लगता होगा जाओ, तुम बाहर चली जाओ, तो लड़की की आँखों में विश्वास के सितारे झिलमिला उठते हैं।

बलात्कार जैसे जघन्य अपराध को लेकर लिखी गई विनीता राहुरकर की लघुकथा 'सजा तो अब शुरू हुई है' बलात्कार मुक्त भारत की एक नई परिकल्पना प्रस्तुत करती है। मासूम बच्ची से दुष्कर्म करने वाला दरिंदा अपने प्रभाव का इस्तेमाल कर बाइज्जत बरी हो जाता है। जब वह खुशी-खुशी घर पहुँचता है तो वहाँ का नज़ारा ही बदला हुआ पाता है। बीवी बच्चे सामान बाँधकर जाने की तैयारी में हैं। बारह वर्षीय बेटी उसे देखकर सहम जाती है। जब वह बेटी को पुचकारने आगे बढ़ता है तो पत्नी कठोरतापूर्वक मना कर देती है। कहती है, ' तुम बाप नहीं बलात्कारी हो। अगर बाप होते तो किसी भी बेटी का बलात्कार नहीं कर सकते थे। बाप कभी किसी बेटी का बलात्कार नहीं कर सकता और जो बलात्कारी है वह कभी किसी का बाप हो ही नहीं सकता।' उसे लगता है कि वह क़ानून से चाहे बच गया, परन्तु सजा तो अब शुरू हुई है। आज के सन्दर्भ में जबकि बलात्कारियों को जाति, सम्प्रदाय या राजनीतिक प्रतिबद्धताओं के चश्मे से देखा जाने लगा है, संवेदनाएं पीड़िता की अपेक्षा पीड़क पर शिफ्ट होने लगीं हैं, यह लघुकथा और भी अधिक प्रासंगिक हो जाती है।

घर से भागी हुई लड़की के प्रति समाज का नजरिया कैसा होता है, किसी से छिपा नहीं है। 'रांग नंबर' (मुरलीधर वैष्णव) की भागी हुई लडकी जब पिता को फोन लगाती है तो उधर से हैलो सुनते ही गिड़गिड़ाने लगती है, माफी माँगती है, घर आने की मंशा प्रकट करती है। इस पर उसे सुनने को मिलता है, 'बेटी, तुम कहाँ हो? तुम जल्दी ही घर लौट आओ। मैंने तुम्हारी सब गलतियाँ माफ़ कर दीं हैं।' ये उसके पिता नहीं थे बल्कि पिता से मिलती-जुलती आवाज़ वाले एक अधेड़ सज्जन थे। गलती से फोन उनके लग गया था। ये सज्जन फोन काट देने या बुरा-भला कहने की बजाय पछतावे की आग में झुलस रही एक भटकी हुई लड़की को सांत्वना के बोल बोलते हैं जिसकी कि वह बराबर हकदार है। यही तो इंसानियत है। कथा इस प्रकार है-

रांग नंबर

मुरलीधर वैष्णव

''पापा प्लीज ... फोन नहीं रखना, मैं जानती हूँ, मैंने आपका विश्वास तोड़ा। मैं बहुत पछता रही हूँ कि घर से भागकर मुंबई आ गई...मैं यहाँ बहुत परेशान हूँ, पापा।... मैं तुरंत घर लौटना चाहती हूँ। पापा प्लीज...! एक बार... सिर्फ एक बार कह दीजिए कि आपने मुझे माफ कर दिया।'' उसने फोन पर हैलो सुनते ही गिड़गिड़ाना शुरू कर दिया था।

''बेटी तुम कहाँ हो? तुम जल्दी ही घर लौट आओ। मैंने तुम्हारी सब गलतियाँ माफ कर दीं...।'' कहकर उस आदमी ने फोन रख दिया।

◆

पचास वर्षीय वह कुँवारा प्रौढ़ सोचने लगा कि उसकी तो शादी ही नहीं हुई, यह बेटी कहाँ से आ गई? लेकिन वह तत्काल समझ गया था कि किसी भटकी हुई लड़की ने उसके यहाँ रांग नंबर डायल कर दिया था। बहरहाल, उसे इस बात की खुशी थी कि उसकी आवाज उस लड़की के पिता से मिलती-जुलती थी और उसने उसे 'रांग नंबर' कहने की बजाय ठीक जवाब दिया था।

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' की बहुचर्चित लघुकथा 'ऊंचाई' के पिता को जिस ऊंचाई पर खड़े दिखाया गया है वह न केवल रिश्तों में मिठास घोलने वाला है बल्कि लघुकथा को संवेदनात्मक दृष्टि से यादगार बना देता है।

आज आपसी रिश्तों में जिस कदर कड़वाहट फैलती जा रही है उसमें पुनः मिठास भरने की चिंता कई लघुकथाओं में देखी जा सकती है। 'चोरी' (रामयतन यादव) में नन्हें बच्चे की मासूम लीलाएं देख वह सब कुछ भूलकर दुश्मन(भाई) के बच्चे को उठाकर बेतहाशा प्यार करने लगता है। राधारानी की 'दीवार' लघुकथा में भी दोनों भाइयों के मध्य मनमुटाव की दीवार खड़ी है। जब भूकंप आता है तो छोटे भाई से रहा नहीं जाता और वह 'भइया, भइया' पुकारते हुए घर के अन्दर दौड़ता है और खाट पर बीमार पड़े बड़े भाई को उठाकर तेजी से बाहर ले आता है। तभी दीवारें भरभराकर गिर जाती हैं मानो दोनों भाइयों के दिलों के मध्य उठी दीवार ढह गयी हो। इसी तरह कुणाल शर्मा की लघुकथा 'अपने-अपने' में नन्हीं पिंकी मनमुटाव वाले दो परिवारों के मध्य सेतु

बनती है। 'परिधि' (वाणी दवे) का दूकानदार रामदयाल अधेडावस्था में भी अपने वृद्ध पिता से हिसाब-किताब चेक करवाता है और पिता हमेशा की भाँति गलतियाँ ढूंढकर उन पर लाल निशान लगा देते हैं। पत्नी खीजते हुए कहती है कि जबसे ब्याह कर आई हूँ पिताजी ने कभी आपकी तारीफ़ नहीं की। कभी शाबाशी नहीं दी।' इस पर रामदयाल जो बात कहते हैं वह सीधे दिल में उतर जाती है- दरअसल इन लाल घेरों को देखकर मुझे संतुष्टि मिलती है ...ये लाल गोले हैं तो लगता है मैं चारों ओर से सुरक्षित हूँ क्योंकि मुझे पता है जिनके पास कोई गलती ढूंढकर लाल गोले बनाने वाला नहीं है, उनका जीवन कितना बिखरा हुआ और अधूरा है। 'सपूत' (पूर्णिमा मित्रा) अमीर और गरीब के भावनात्मक और वैचारिक विरोधाभासों पर प्रकाश डालने वाली मर्मस्पर्शी लघुकथा है। कार ड्राइवर बहादुर मालकिन से कुछ अग्रिम राशि तथा तीन दिन की छुट्टी माँगता है ताकि गाँव जाकर आपनी बीमार माँ को ला सके। इस पर मालकिन अपने वर्ग चरित्र के अनुसार समझाती है कि वह इन पचड़ों में न पड़े। अमीर बनने के लिए इमोशनल नहीं हुआ जाता। अपने साहब को ही देख लो, इसी शहर में उनकी बूढ़ी माँ है , मगर उन्हें कभी परेशान होते देखा है? इस पर बहादुर जो जवाब देता है उससे संवेदनहीन अभिजात संस्कृति की चूलें हिल जाती हैं, 'नहीं बनना मुझे साब जैसा बड़ा आदमी। मैं अमीर कपूत की बजाय गरीब सपूत बनना ज्यादा ठीक समझता हूँ।' इधर 'सदुपयोग' (ऊषालाल) की बेटी विवाह के पश्चात् जब पीहर आती है तो यहाँ की खस्ता हालत देखकर शगुन में मिले रुपये माँ को सौंप देती है। 'छत्रछाया' (रामकुमार घोटड़) में पिता की मृत्यु के पश्चात् खाली जगह पर जहाँ पिता ने कभी पेड़ लगाया था, उसे काटने की बजाय बेटा बगल में एक और पेड़ लगाकर माँ की भावनाओं का आदर करता है। 'माँ का कमरा' (श्याम सुन्दर अग्रवाल) का बेटा माँ को शहर लाता है और उसे रहने के लिए सामान्य सी खोली न देकर सर्व सुविधायुक्त कमरा मुहैया करवाता है। यह देख माँ सुखद आश्चर्य से भर जाती है। 'कुंदन' (पवन शर्मा) की पत्नी पुश्तैनी मकान को बचाने की चिन्ता में पति को रात भर करवटें बदलते देख अपने गहने बेच देने का प्रस्ताव रखती है; गहने जो स्त्रियों को बहुत प्रिय होते हैं , यहाँ परिवार की खुशी के सम्मुख कोई मायने नहीं रखते।

कुछ लघुकथाओं में संवेदनाओं का विस्तार रिश्तों की सीमा को पार कर जाता है। अर्थात यहाँ कथाकार की नज़र व्यापक मानवीय मूल्यों पर है जो कि श्लाघनीय है। 'अपने पराए' (कीर्ति गाँधी) में वृद्ध पिता को घर में ठिठुरता छोड़कर बेटा-बहू गरीबों की बस्ती में कम्बल बाँटने जाते हैं। बाबूजी की हालत देखकर घर का पुराना नौकर उनके बेटे के कमरे से मुलायम रजाई लाकर ओढ़ा देता है। बाबूजी सुकून से भर उठते हैं। उन्हें लगता है कि रामू पराया होकर भी कितना अपना है। कमल कपूर की लघुकथा 'दुपट्टे बदले थे उन्होंने' में विदा के समय जब माँ वीरा को पता चलता है कि बेटी को देने के लिए खरीदी गईं चूड़ियाँ चोरी हो गईं हैं तो वह हताश हो जाती है। ऐसे में उसकी सहेली तत्काल अपने हाथ की चूड़ियाँ उतारकर दे देती है। इस लघुकथा से हमें पंजाब की एक ऐसी प्रथा का ज्ञान होता है जो समाज में उच्च मानवीय मूल्य स्थापित करती है। इस प्रथा के अनुसार जो सहेलियाँ दुपट्टे बदलती हैं वे ज़िन्दगी भर दुःख-सुख में एक दूसरे का साथ निभाती हैं।

कविता मुखर की 'कशमकश' में संवेदनाओं का विस्तार पशु तक होता है। जब से यह ज्ञात हुआ है कि पालतू जानवरों को खाना खिलाने से वे मनुष्य की सारी बलाएं अपने ऊपर ले लेते हैं, कथानायिका बहुत बेचैन है क्योंकि वह रोज एक मासूम बछड़े को रोटी देती है और नहीं चाहती है कि उसकी बलाएं उस निरीह और निर्दोष जानवर को लगे। रामकुमार आत्रेय की 'ज़िद' लघुकथा में एक चिड़िया बार-बार पंखे पर अपना घोसला बना लेती है। पति गिराने लगता है तो पत्नी रोक देती है, कहती है,-इसकी ज़िद घर बनाने के लिए है। हमें इसका सम्मान करना चाहिए।' के.पी.सक्सेना दूसरे की लघुकथा 'मंदबुद्धि' में बालदिवस पर मंदबुद्धि बालकों के लिए आयोजित एक दौड़ का दृश्य है। दौड़ पूरे जोश के साथ चल रही है कि सबसे आगे रहने वाला बच्चा गिर पड़ता है। उसके ऐन पीछे वाला बच्चा खुशी से आगे नहीं निकल जाता वरन रुककर उसे उठा लेता है, धूल साफ़ करता है। पीछे रहने वाले बच्चे भी आ जाते हैं। गिरे हुए बच्चे को रोता देख वे भी रुक जाते हैं। लेखक कहना चाहता है कि बच्चे चाहे मंदबुद्धि हों मगर मानवीय संवेदनाओं में कहीं आगे हैं। प्रकाश तातेड़ की लघुकथा 'सहानुभूति' में बूट पालिश करने वाले गरीब लड़कों के परस्पर सहयोग

की अच्छी मिसाल दी गयी है।

लघुकथाओं के संसार में से ऐसी और भी रचनाओं के उदाहरण दिए जा सकते हैं जिनमें किसी न किसी रूप में मानवीय संवदनाओं की अभिव्यक्ति हुई हो। संक्षेप में बात करें तो अखिलेश पालरिया की 'क़द' में बहन की निगाहों में उपेक्षित गरीब छोटे भाई का क़द एकाएक तब बढ़ जाता है जब वह बहन के गुर्दे ख़राब होने की बात सुनकर बेहिचक अपना एक गुर्दा दान कर देता है। 'लाश का फोटो' (नरेन्द्रकुमार गौड़) में फोटोग्राफर नैतिकतावश लाश का फोटो खींचने के पैसे नहीं लेता। 'सोच' (आरती बंसल) में अपने यहाँ पति द्वारा अनाथ बच्ची की परवरिश करने के प्रस्ताव को बर्दाश्त न कर सकने वाली कॉलेज प्रवक्ता नीलिमा यह देखकर हैरान रह जाती है कि साधारण चाय वाला अपने गाँव के ऐसे लड़के को पालने की जिम्मेदारी उठा रहा है जिसके माँ-बाप हादसे के शिकार हो चुके हैं। जब ससुराल में बहू को नया नाम देने की बात चलती है(पहचानःसुरेश तन्मय) तब ननद एतराज जताती है। कहती है, भाभी अपना सब कुछ छोड़कर यहाँ केवल नाम भर लेकर आयी है, उसे भी आप लोग छीन रहे हो। 'सूर्योदय पश्चिम में' (माणक तुलसीराम गौड़) के शर्मा दम्पति वृद्धाश्रम जाकर किसी वृद्ध स्त्री-पुरुष को गोद लेने की गुज़ारिश करते हैं ताकि उनके जीवन में जो माँ-बाप का अभाव है उसकी पूर्ति हो सके। 'पहला संगीत' (अखिल रायजादा) में जब कथानायक भिखारी बच्चे का जन्मदिन जानकर अपने नए गिटार से 'हैप्पी बर्थ डे टू यू' की धुन निकालता है तो ट्रेन के सहयात्री आश्चर्य में पड़ जाते हैं। परन्तु इस धुन पर बच्चे को नाचता हुआ देखना संगीतकार के लिए संसार की सबसे बड़ी खुशी है। इसी प्रकार 'भूख' (अशोक भाटिया) में अन्य यात्रियों की तरह पैसे दान न करके कथानायक भिखारी को अपने पास बैठाकर खाना खिलाता है। सहयात्री हँसते हैं परन्तु भिखारी इस आत्मीयता से तृप्त होकर कहता है, 'आज तक मुझे इतना किसी ने नहीं दिया।' 'फुहार' (कमल चोपड़ा) में दंगाइयों के पाँव उस वक्त थम जाते हैं जब स्कूल से लौटे मासूम मुस्लिम बच्चे को कान पकड़कर बार-बार सॉरी बोलते देख पंडितजी उसे उठाकर गले लगा लेते हैं। सुबह इस बच्चे की गेंद से सूर्य को अर्घ्य देते हुए पंडित जी का लोटा गिर गया था। अब बच्चा कह रहा है कि जब आप पूजा कर रहे होंगे तब मैं गेंद नहीं खेलूंगा, और पंडित जी कह रहे हैं कि जब तू गेंद खेलेगा उस वक्त मैं अर्घ्य नहीं दूंगा। इस लघुकथा को पढ़कर किसका मन नहीं भीगेगा भला। काश! वास्तव में ऐसा हो पाता। 'असमय मौत' (सदाशिव कौतुक) के बुजुर्ग से अपने बेटों की करतूत सुनने पर सहयात्री महिला इतनी द्रवित हो जाती है कि वह उन्हें अपने घर ले जाने को तैयार हो जाती है, कहती है मैं आपकी बेटी समान हूँ। आप मुझे अपनी बेटी ही समझिए। 'रिश्तों की नींव' (जगदीश राय कुलरिया) में कम उम्र के कामगार लड़के के हाथों जब कीमती शीशा टूट जाता है तो वह मालिक के कोप की कल्पना कर बेहद डर जाता है। परन्तु मालिक डाँटने-डपटने की बजाय उससे सहानुभूति से पेश आता है और हाथ से निकल रहे खून को देखकर उसे डॉक्टर के पास ले जाता है। 'बाबू' (संध्या तिवारी) भेदभाव की शिकार हो रही बच्ची पिंकी के अंतस का रेशा-रेशा उधेड़कर सामने रख देती है, फलतः माँ को अपनी गलती का एहसास होता है और वह उसे पुराने नाम बाबू से पुकारते हुए सीने से लगा लेती है। 'जीने का सलीका' (सुधीर द्विवेदी) में निराशा में डूबे मिहिर को ऊपरी तौर पर अल्हड़ और हँसमुख किन्तु भीतर से दुखी कामवाली लडकी जीने का सलीका सिखा जाती है। 'बात बहुत छोटी सी थी' (मधुदीप) में माँ को उपेक्षा की दृष्टि से देखने वाला छोटा भाई बड़े भाई के एक छोटे से दृष्टांत से परिवर्तित होकर माँ के पाँव छू लेता है। 'गाँधीगीरी' (मुन्नूलाल) का बड़ा भाई छोटे को प्रताड़ित करता रहता है परन्तु छोटा विरोध करने की बजाय चुप रहता है। इस पर भी बड़ा तंज कसता है कि तेरी गाँधीगीरी मेरे सामने नहीं चलेगी। यह सुनकर छोटा कहता है-मैं क्या जानूं गाँधीगीरी। दरअसल माँ ने कहा था न कि बड़े भाई से उज्र न करना कभी, वह बाप के सामान होता है।' यह सुनकर बड़ा भाई पानी-पानी हो जाता है। इधर 'आदतें' (वसुधा गाडगिल) की भटकी हुई बहू सास का मातृवत व्यवहार देखकर संभल जाती है।

बलराम अग्रवाल की 'गो-भोजन कथा', सतीश दुबे की 'लास्ट लेसन', 'बर्थ डे गिफ्ट', कमल चोपड़ा की 'बाँह-बेली', भूपिंदर सिंह की 'रोटी का टुकड़ा', प्रताप सिंह सोढ़ी की 'दर्द का रिश्ता', प्रबोध कुमार गोविल की 'माँ' जैसी बहुचर्चित लघुकथाएँ संवेदनाओं से लबरेज हैं जिनका जिक्र यहाँ बहुत जरूरी है। कुछ और लघुकथाओं

का यहाँ पर केवल नामोल्लेख किया जा रहा है जिनमें किसी न किसी रूप में संवेदनात्मक छुअन या मानवीय मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता के दर्शन होते हैं। 'अपने-अपने' (कुणाल शर्मा), 'पश्चाताप' (चंद्रेशकुमार छतलानी), 'खाली हाथ' (सीमा जैन), 'जीत' (विभा रश्मि), 'असली निबंध' (वीरेन्द्र कुमार भारद्वाज), 'आत्म संतुष्टि' (अंजना गर्ग), 'विवादग्रस्त(सतीश राठी), 'पापा जब बच्चे थे' (अशोक भाटिया), 'सेहरा' (कुमार नरेंद्र), 'सपने, स्वर और ध्वनियाँ' (अमृत लाल मदान), 'ढहती दीवारें' (शशि बंसल), 'खून का रिश्ता' (राधेश्याम भारतीय), 'कड़ी' (पुष्प जमुआर), 'बुनियाद' (नीरज सुधांशु), 'ममता' (ज्योत्सना सिंह), 'आँसुओं की भाषा' (चन्द्रदत्त शर्मा), 'वारिस' (आशा खत्री लता), 'साहसिक क़दम' (मिथिलेशकुमारी मिश्र), 'पिता, पत्नी और पुत्र' (अशोक वर्मा), 'लौटते हुए' (अशोक जैन), 'टीस ऐसी भी' (रामदेव धुरंधर), बावड़ी का दुःख (कृष्णकुमार आशु) आदि।

यह बात देखी गई है कि शिल्प कितना ही सुघड़ हो, भाषा कितनी ही प्रांजल हो, यदि लघुकथा में मानवीय संवेदनाएँ नहीं हैं तो वह अपेक्षित प्रभाव नहीं छोड़ पाती है। एक सार्थक लघुकथा में कथ्य, भाषा, शिल्प और संवेदना का कलात्मक संतुलन आवश्यक है। ऐसी ही लघुकथाएँ आगे चलकर कालजयी सिद्ध होतीं हैं।

संपर्क : (लालमादड़ी) 313301 (राज)
मो. 9829588494

ଌ

हमारे कला संपादक : संदीप राशिनकर

- जन्म : 7 मई 1958, इंदौर
- शिक्षा : बी.ई. (सिविल)
- जाने माने चित्रकार, लेखक और समीक्षक।
- कई अखिल भारतीय कला प्रदर्शनियों में चित्रों का चयन और प्रदर्शन। लंदन, मुंबई, गोवा, इंदौर, नीमच आदि शहरों में एकल चित्र प्रदर्शनियों का आयोजन।
- राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं में हजारों चित्रों / रेखांकनों का प्रकाशन।
- भारतीय ज्ञानपीठ सहित अनेक प्रतिष्ठित प्रकाशनों की पुस्तकों के सैकड़ों आवरण।
- भित्ति चित्रों (म्यूरल्स) के क्षेत्र में अनेक स्थानों/प्रतिष्ठानों पर भव्य म्यूरल्स का सृजन एवं अभिनव प्रयोगों से इस शैली में प्रतिष्ठित कार्य।
- स्वयं द्वारा नव अविष्कृत शैली ब्रास/स्टील वेंचर में सृजित अनेक कलाकृतियाँ देश-विदेश के कला प्रेमियों के संग्रह में संग्रहित।
- 'केनवास पर शब्द' और जीवन संगिनी श्रीति के साथ संयुक्त काव्य कृति 'कुछ मेरी कुछ तुम्हारी' प्रकाशित होकर देश भर में चर्चित व पुरस्कृत।
- कविताओं के अलावा निरंतर कला-संस्कृति विषयों और समीक्षाओं का लेखन/प्रकाशन।
- 'जीवन गौरव' के अलावा देश भर में कई प्रतिष्ठित सम्मानों से सम्मानित।
- संपर्क : 11-बी, मेनरोड, राजेंद्रनगर, इंदौर-452012 (म.प्र.)
- मो. 9425314422, 8085359770
- email :rashinkar_sandip@yahoo.com ● web. http://www.sandiprashinkar.com

ऋग्वेद में कथा-सूक्त

(प्रमुखतः दशम् मंडल पर केंद्रित)

● बलराम अग्रवाल

प्राचीन काल से ही कथा कहने सुनने का जीवन में महत्वपूर्ण स्थान रहा है। जब मनुष्य ने गुफाओं की दीवारों पर अंकन करना भी नहीं सीखा था संभवतः तभी से आंगिक संकेतों द्वारा कथा कहकर वह अपने साथियों के समक्ष मन के भाव प्रकट करता, उनका मनोरंजन और ज्ञानवर्द्धन करता आया होगा।

कथा-कहानी कहने-सुनने का चलन दिनभर के कामकाज से निवृत्त होकर आम तौर पर रात में सोने के लिए जाने से पहले का समय रहा है।

ऋग्वेद को विश्व की पहली लिखित पुस्तक होने का गौरव प्राप्त है। इसे 'अपौरुषेय' कहा जाता है, जिसका अर्थ विशेषतः श्रद्धालु जन यह लगाते हैं कि इसे किसी पुरुष अर्थात् व्यक्ति ने नहीं लिखा, यह ईश्वर प्रदत्त है। इस बारे में मेरा अपना मत थोड़ा भिन्न है। मेरी दृष्टि में 'पौरुषेय' का अर्थ यहाँ पर 'प्रयत्न करके' लिखे जाने से है। जो रचनाएँ आज के सभ्य (!) और शिक्षित समाज में विद्वत-वर्ग द्वारा सप्रयास लिखी जा रही हैं वे सब की सब 'पौरुषेय' हैं क्योंकि उनकी रचना के पीछे कोई न कोई पुरुषार्थ कार्य कर रहा है।

ऋग्वेद में कथा-सूक्तों की खोज और प्रस्तुति का उद्देश्य निःसंदेह लघुकथा के उद्भव और विकास के प्रथम सोपान पर पाँव रखना है। तात्पर्य यह कि इस विधा के वेदकालीन अस्तित्व और इतिहास पर सम्यक् दृष्टि डालना है। अब, जबकि अधिकतर लघुकथा-विद्वानों ने यह मान और स्वीकार लिया है, कि 1971 से पहले 'लघुकथा' का कोई सार्थक अथवा सोद्देश अस्तित्व नहीं था इसलिए उससे पूर्व के इतिहास में हाथ-पाँव मारना व्यर्थ है, हम क्यों आर्ष कथा साहित्य और पुरातन कथा-इतिहास में सिर खपा रहे हैं? कारण एक नहीं, कई हैं। उनमें प्रमुख कारण को मैं टी. एस. एलियट की इन पंक्तियों को उद्धृत करके व्यक्त करना चाहूँगा–

नो पोएट, नो आर्टिस्ट ऑव एनी आर्ट, हैज़ हिज कंपलीट मीनिंग अलोन। हिज सिग्नीफिकेन्स, हिज अप्रिशिएसन इज़ द अप्रिशिएसन ऑव हिज रिलेशन टु द डैड पोएट्स एंड आर्टिस्ट्स। यू कैन नॉट वैल्यू हिम अलोन। यू मस्ट सेट हिम फॉर कॉन्ट्रास्ट एंड कॉम्पेरीज़न अमंग द डैड। आई मीन दिस एज़ अ प्रिंसीपल ऑव एस्थैटिक्स, नॉट मिअर्ली हिस्टॉरिकल क्रिटिसिज्म।

आपाधापी के ऐसे युग में, जब इतिहास-पुरुष बनने का सोपान एकदम सामने उपस्थित हो, जड़ों की तलाश के लिए सुदूर विगत में डुबकियाँ लगाना व्यर्थ ही समय बरबाद करना है। लेकिन ये डुबकियाँ लगाए बिना यह

जानना लगभग असंभव है कि आप वस्तुतः खड़े कितने पानी में हैं। ये डुबकियाँ लगाये बिना आप इस गौरवपूर्ण सत्य से वंचित रहते हैं कि आपकी विधा किसी की दत्तक पुत्री नहीं है, उसका अपना पिता और अपनी माता इसी मिट्टी की देन रहे हैं।

'वेदकाल की लघुकथाएँ' के अंतर्गत इस आलेख में मात्र ऋग्वेद के दशम् मंडल में वर्णित कथा-संवादों, कथा-सूक्तों और कथा-सूत्रों की चर्चा करूँगा।

पं. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने एक निबंध 'नाट्यशास्त्र की भारतीय परम्परा' में कहा है–''भारतीय परम्परा यह है कि किसी भी नये शास्त्र के प्रवर्त्तन के समय उसका मूल वेदों में अवश्य खोजा जाता है। वेद ज्ञान-स्वरूप हैं, उनमें त्रिकाल का ज्ञान बीज-रूप में सुरक्षित है। भारतीय मनीषी अपने किसी ज्ञान को अपनी स्वतंत्र उद्भावना नहीं मानते।'

लेकिन यह मात्र भावनात्मक कारण नहीं है। इसका वास्तविक कारण यह है कि वेद हमारे पास विश्व की प्रथम लिखित पुस्तक हैं। अध्ययन से पता चलता है कि ऋग्वेद में ही अनेक ऐसे संवाद-सूक्त हैं जिनमें परस्पर संवाद-शैली की अनेक लघुकथाएँ अथवा कथा-सूत्र उपलब्ध हैं। इस दृष्टि से यम-यमी संवाद (10/10), इंद्र-इंद्राणी संवाद, वृषाकपि संवाद (10/86), 'पुरुरवा-उर्वशी संवाद (10/95), सरमा-पणि संवाद (10/108), इंद्र-मरुत् संवाद (1/165), अगस्त्य-लोपामुद्रा संवाद (1/179) प्रमुख हैं।'

इस कथन की पुष्टि करते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी भी लिखते हैं, कि 'आधुनिक पंडितों को भी इस विषय में कोई संदेह नहीं है कि ऋग्वेद में अनेक स्थल हैं जो निर्विवाद रूप से संवाद या डायलॉग हैं। कम से कम 15 ऐसे स्थल तो खोजे ही जा सकते हैं जिनमें स्पष्ट रूप से संवाद या संवाद का आभास मिल जाता है। ऋग्वेद में यम और यमी का प्रसिद्ध संवाद है तथा में पुरुरवा और उर्वशी की बातचीत है। प्रथम मंडल के 179वें सूक्त में इंद्र, अदिति और वामदेव का संवाद है। दसवें मंडल के 108वें सूक्त में इंद्र-दूती सरमा अपने पुत्रों के लिए पणियों के पास जाती है और उनसे जमकर बात करती है। कुछ ऐतिहासिक जैसे लगने वाले संवाद भी हैं। विश्वामित्र की नदियों से बातचीत तीसरे मंडल के 33वें सूक्त में पाई जाती है और वशिष्ठ की अपने पुत्रों के साथ बातचीत सातवें मंडल के 33वें सूक्त में सुरक्षित है। ऐसे ही और भी बहुत से सूक्त हैं जिनमें देवताओं की बातचीत है। पुरुरवा और उर्वशी के संवाद को यास्क संवाद ही मानते थे परंतु शौनक उसे कहानी मात्र मानते थे।

श्रुति, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद्

वेद पद्य, गद्य और गीति रूप में विद्यमान हैं। ऋग्वेद पद्य में यजुर्वेद गद्य में और सामवेद गीति रूप में है। आरंभ में शिष्यगण गुरु के मुख से सुन-सुनकर वेदों का पाठ किया करते थे; इसीलिए वेदों का एक नाम 'श्रुति' भी है। वेद के प्राचीन विभाग मुख्य रूप से दो हैं–मंत्र और ब्राह्मण। आरण्यक और उपनिषद ब्राह्मण के अंतर्गत आ जाते हैं। मंत्र-भाग को संहिता कहते हैं और अर्थ स्मारक वाक्यों को ब्राह्मण। ब्राह्मण ग्रंथ अनेक हैं जिनमें बहुत से आज लुप्त हैं। ऋग्वेद के ब्राह्मण हैं–ऐतरेय और कौषीतकि (शांखायन)। शुक्ल यजुर्वेद का शतपथ ब्राह्मण प्रसिद्ध है। कृष्ण यजुर्वेद का भी तैत्तिरीय ब्राह्मण अत्यंत प्रसिद्ध है। सामवेद के कई ब्राह्मण हैं जैसे ताण्ड्य ब्राह्मण, आर्षेय ब्राह्मण षड्विंश ब्राह्मण सामविधान ब्राह्मण वंश ब्राह्मण तथा जैमिनीय ब्राह्मण आदि। अथर्ववेद का गोपथ ब्राह्मण अति प्रसिद्ध है। इनके अतिरिक्त भी और अनेक ब्राह्मण ग्रंथ है जैसे दैवत ब्राह्मण कादेय ब्राह्मण भाल्लवि ब्राह्मण काठक ब्राह्मण मैत्रायणी ब्राह्मण शाट्यायनि ब्राह्मण खाण्डिकेय ब्राह्मण तथा पैंगायणि ब्राह्मण इत्यादि। ब्राह्मण भाग में भी तीन विभाग हैं–ब्राह्मण आरण्यक और उपनिषद्। तात्पर्य यह है कि जिस विभाग में यज्ञ आदि का विशेष विधान हो वह ब्राह्मण है और जिस विभाग में ब्रह्म तत्व का विशेष विचार किया गया हो वह आरण्यक और उपनिषद है।

आरण्यक ग्रंथ भी अनेक हैं जिनमें ऐतरेय आरण्यक, तैत्तिरीय आरण्यक कौषीतकि आरण्यक शांखायन आरण्यक आदि प्रसिद्ध है। कुछ आरण्यक लुप्त हैं। क्योंकि यह ग्रंथ अरण्य में ही पठन-पाठन करने योग्य हैं ग्राम नगर आदि कोलाहल युक्त स्थान में नहीं इसलिए इनका नाम आरण्यक पड़ा है।

आख्यान और आख्यायिका

वेदों में यहाँ-वहाँ कुछ आख्यान प्राप्त होते हैं जो भारत की सांस्कृतिक धरोहर के रूप में हमारी अमूल्य निधि हैं। इनमें मानव जीवन को ऊँचा उठाने वाली अनेक सारगर्भित, सरल और विचित्र कथाएँ भरी पड़ी हैं। वैदिक मंत्रों, ब्राह्मणों, आरण्यकों और उपनिषदों में हमारे ऋषियों ने ऋचाओं, सूत्रों, सूक्तियों और कथाओं के माध्यम से ऐसे मानदंड निर्धारित किए जिनका आधार प्राप्त कर भारतीय संस्कृति विकसित हुई।

अनेक विद्वान 'आख्यायिका' शब्द को 'लघुकथा' का पर्याय मानकर चलते हैं, जोकि शतशः सही नहीं है। क्योंकि हम वेदकालीन कथाओं और कथा-सूत्रों पर विचार प्रारम्भ करने जा रहे हैं, इसलिए इन दोनों से पहले हमें 'आख्यान' को समझना होगा।

'आख्यान' शब्द का अर्थ (प्रत्यक्ष या प्रामाणिक रूप से परंपरागत) किसी पूर्व ज्ञात घटना या अवस्थिति को समझने की क्रिया है।' ख्या' का अर्थ होता है–प्रकट करना। उसमें 'आ' जोड़ने से उसका अर्थ होता है भली-भाँति प्रकट करना। अभिनव गुप्त ने आख्यान को दृष्टार्थ-कथन कहा है। 'अर्थ' शब्द वस्तुओं और घटनाओं की तथ्यता है। वास्तव में जो वस्तु दिखाई पड़ती है या जो घटना घटती है, इंद्रियों से या मन से उसका आधा ही ज्ञान हो पाता है। उसकी वास्तविकता का पूरा ज्ञान नहीं होता क्योंकि वह वास्तविकता केवल इंद्रियगोचर या केवल मनोगोचर नहीं है। कभी-कभी वह बुद्धि गोचर भी नहीं होती। वह चेतना के सबसे भीतर के प्रकाश से उन्मीलित होती है। इसलिए दृष्टार्थ-कथन की परिभाषा अत्यंत व्यापक है और इस परिभाषा में यह निहित है कि वह न तो किसी घटना का इतिहास है और ना ही किसी घटना का आधिभौतिक विवरण है। हमारी प्रवृत्ति हर विषय को उसकी समग्रता से समझने की रही है। इतिहास इस समझ का अंश मात्र है। जब आख्यायिका को संस्कृत में यह लक्षित किया जाता है कि वह प्रसिद्ध इतिवृत्त पर आधारित होता है तब उसका अर्थ यह होता है कि यह प्रसिद्धि केवल ऐतिहासिक दृष्टि से नहीं है। यह आभ्यंतर चक्षु से प्रमाण पुरुषों के द्वारा की गई अपरोक्ष अनुभूति का परिणाम है। वैदिक आख्यान वैसे तो संहिता भाग में ही मिलने लगते हैं लेकिन ब्राह्मणों, आरण्यकों और उपनिषदों में आए आख्यान विशेष महत्व रखते हैं। ब्राह्मणों में जब किसी अनुष्ठान की प्रक्रिया को समझाना होता था तो एक आख्यान सुनाया जाता था। वह आख्यान क्रिया की अभिव्याप्ति स्पष्ट करता था। इस प्रकार से यह आख्यान प्रत्येक अनुष्ठान के सोपान को समझने के लिए एक बड़ा आधार प्रदान करता था। कभी यह आख्यान सादृश्य-मूलक है, कभी प्रतीकात्मक है, कभी अन्योक्ति परक है, कभी कार्य विशेष में घटी घटना को देशातीत और कालातीत प्रस्तुत करने वाला है। ऐसे ही आख्यान पुराणों में आए हैं। ये ही हमारे काव्य साहित्य और नाट्यशास्त्र के बीज बनते आए हैं और ये ही हमारी कलाओं के संदर्भ भी बनते हैं। वैदिक आख्यानों का सौंदर्य तीन बातों में है–एक तो ये अत्यंत संक्षिप्त हैं। इनमें नाटकीय उतार-चढ़ाव हैं और मुख्य प्रतिपाद्य ही दिया गया है। सजाने की कोशिश नहीं की गई है। भाषा बड़ी ही पारदर्शी है, पर उसके साथ साथ बड़ी गहरी और बहु स्तरीय है। उस में प्रवेश करते ही पटल पर पटल खुलते चले जाते हैं। कहीं भी शब्द का अपव्यय नहीं है। हर आख्यान का अंत किसी न किसी प्रकार की पूर्णता के भाव से होता है। इसलिए ये आख्यान कालातीत है और परिणामतः इतिहास से भी बाहर हैं। इन आख्यानों में इतिवृत्तों का विस्तार सीधी रेखा में नहीं है। जैसे–इस घटना के बाद यह घटना आदि। न इनका विस्तार एक वृत्त के रूप में होता है जहाँ से घटना शुरू हो और वहीं पर लौट आए। यहाँ जो कुछ भी है वह एक खुला वृत्त है अर्थात् ऐसा विवरण है जिसमें आगे बढ़ाने की गुंजाइश मौजूद है। जैसा शंखवलय होता है। उसमें छोटे वृत्त का विस्तार बड़े से बड़े वृत्तों में होता चला जाता है। वैसे ही इन आख्यानों का विस्तार संभव होता है। 3-4 पंक्तियों का आख्यान एक बहुत बड़ी कथा बन जाती है। दुष्यंत के पुत्र भरत का आख्यान 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' नाटक बना। 'पुरुरवा-उर्वशी' के आख्यान में अरणि-मंथन (आग धधकाने के लिए जिन लकड़ियों का प्रयोग होता है उन्हें 'अरणि' कहते हैं।) के प्रसंग में और विस्तृत होकर मनुष्य और प्रकृति के बीच रूपांतर की संभावनाओं का अत्यंत संश्लिष्ट रूपक बन जाता है। उत्तरवर्ती साहित्य को पूरी तरह समझने के लिए ये वैदिक आख्यान चाबी हैं। उदाहरण के लिए, 'छांदोग्योपनिषद्' के घोर आंगिरस और देवकी-पुत्र कृष्ण के मध्य संवाद का आख्यान (छांदोग्य. 3/17/1-7) ही गीता की आधारपीठिका है।

ऋग्वेद की 'उर्वशी कथा' श्रीमद्भागवत के 9वें स्कंध में न केवल वर्णित हुई है बल्कि इसकी पौराणिक (प्रतीकवादी) रीति से सुंदर व्याख्या भी की गई है।

उपर्युक्त विवेचन और उदाहरणों के द्वारा आसानी से समझा जा सकता है कि समकालीन लघुकथा का स्वरूप और प्रकृति ऋग्वेद में आए हुए अनेक कथा-सूक्तों के स्वरूप और प्रकृति से वैसा ही मेल खाती है जिसे वैज्ञानिक भाषा में 'अनुवांशिक' अथवा 'पारंपरिक' चरित्र कहा जाता है।

वेदों, शास्त्रों और उपनिषदों की यह कथाएँ केवल कथा ही नहीं हैं जो मनोरंजन करती हों; बल्कि इनमें एक ऐसी दृष्टि है जो हमें जीवन-दर्शन का ज्ञान कराती है, भले बुरे का विवेक देती है। जीवन की अनेक उहापोह की विकट परिस्थितियों में, जब हम किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाते हैं, हमारी विवेक शक्ति भ्रमित हो जाती है, तब ये कथाएँ हमारा मार्गदर्शन करती हैं, सही निर्णय लेने की शक्ति प्रदान करती हैं। साथ ही, सत्कार्य करने तथा सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देती हैं। कथा कहने के शिल्प और शैली यहाँ तक कि कथ्य के स्वरूप में भी यथेष्ट परिवर्तन हुआ है; लेकिन ये कथाएँ अपने समय का कथात्मक इतिहास प्रस्तुत करने में पूर्णतः सक्षम हैं।

इनमें देवों, दानवों, ऋषियों और राजाओं की ही नहीं, समस्त जड़-चेतन, पशु-पक्षी, नदी-पर्वत आदि से संबंधित कथाएँ हैं जो हमें कर्तव्याकर्तव्य का बोध कराती हुई सुखद जीवन जीने की प्रेरणा प्रदान करती हैं।जीवन में कथा के प्रति मनुष्य की अभिरुचि स्वाभाविक है। इसका कारण कथा-वृत्त की जीवन के साथ अनुरूपता है। 'जीवन' लौकिक और सांस्कृतिक क्रियाओं, घटनाओं आदि का कालगत क्रम है। गति जीवन का रूप है। वह काल का लक्षण है। कह सकते हैं कि 'काल' ही जीवन है। काल के इस प्रवाह में लौकिक उपकरण और कर्म जीवन को साक्षात् रूप देते हैं। कथा भी जीवन की विवृति है। जीवन के साथ इसी अनुरूपता के कारण कहानी में लोगों की सदा अभिरुचि रही है। आदिकाल से गाँव और घर के बुजुर्ग लोगों को कहानियाँ सुनाते आए हैं। साहित्यिक शैली की कथाओं का चलन तो आधुनिक युग में ही हुआ है; किंतु लोक शैली में कथा-कहानियाँ प्राचीन साहित्य में खूब मिलती हैं। पुरातन भारतीय साहित्य में तो कथाओं की विपुलता है। पुराण, महाभारत, रामायण आदि ग्रंथ कथा के अनंत सागर हैं। लाखों श्लोकों के रूप में प्राचीन कथाएँ इन ग्रंथों में मौजूद हैं।

ऋग्वेद प्रथम मंडल के 92वें सूक्त की चौथी ऋचा में ऐसी स्त्रियों का उल्लेख है जो उत्तम वस्त्र पहनकर नाचती थीं और प्रेमियों को आकृष्ट करती थीं।

सबसे पहली बात तो यह, कि कथा कहने की संवाद-शैली का सूत्रपात ऋग्वेद के ऋषियों ने किया। उन्होंने जितनी भी प्रार्थनाएँ, जितने भी अनुनय-विनय, जितने भी पारस्परिक विमर्श प्रस्तुत किये, सबके सब संवाद-शैली में हैं।

संवाद-शैली में होने के कारण इन कथा-सूत्रों को कुछ विद्वान नाट्य का रूप मानते हैं। परन्तु अनेक विद्वानों का कहना है कि 'इन वैदिक सूक्तों में अभिनय तत्त्व नहीं है, केवल संवाद मात्र हैं और अभिनय तत्त्व के अभाव में ये कथोपकथन मात्र रह जाते हैं। कथोपकथन में जब तक आंगिक अभिनय का समावेश न हो और भावपूर्ण स्थिति की उद्भावना कर दृश्यों को जब तक रस से ओतप्रोत न कर दिया जाय, तब तक उसे नाट्य की संज्ञा नहीं दी जा सकती। ऋग्वेद में इस प्रकार के संकेत कहीं नहीं मिलते जिनसे आंगिक अभिनय के समावेश का संकेत मिल सके और भावात्मक स्थिति की उद्भावना की गई हो। इन संवाद-सूक्तों में प्रश्नोत्तर अथवा साधारण कथोपकथन है। अतः यह कहना समीचीन नहीं प्रतीत होता कि इन संवाद-सूक्तों से नाट्य का उद्गम हुआ होगा।'

ऋग्वेद में अनंत कथा-सूक्त हैं। ऐसे कथा-सूक्त वही जाति अपना सकती है, जो पूरी तरह कथा-संपन्न हो। इसके उदाहरण स्वरूप मैं गोस्वामी तुलसीदास रचित 'रामचरितमानस' से कुछ उदाहरण प्रस्तुत करना चाहूँगा।

1- अगस्त्य के लिए तुलसीदास ने 'घटजोनी' शब्द का प्रयोग किया है, अर्थात् 'घड़े से उत्पन्न'; इस विशेषण की छानबीन के लिए आपको पुराण-कथाओं में विचरण करना होगा।

2- गरुड़ को 'बैनतेय' (शुद्ध शब्द 'वैनतेय') अर्थात् 'विनता का पुत्र' कहा गया है। गरुड़ के लिए इस संज्ञा की सचाई जानने के लिए आपको पुराण-कथाओं में डुबकी लगानी होगी।

3- 'दुइ सुत सुन्दर सीता जाये' कहकर तुलसीदास राज्य-प्राप्ति के पश्चात् श्रीराम द्वारा गर्भवती सीता के परित्याग आदि की समस्त कथा को नेपथ्य में डाल

देते हैं। श्रद्धालु इस एक पंक्ति को पढ़कर आगे बढ़ जाते हैं और कथा-जिज्ञासु 'वाल्मीकि रामायण' में गोते लगाने की ओर उन्मुख हो जाते हैं।

ऐसे अन्य भी अनेक प्रकरण तुलसी के मानस में हैं। इसीलिए बालकांड के प्रारम्भ में ही वह खुलासा कर देते हैं कि–'नाना पुराण निगमागम सम्मतं यद् रामायणे क्वचिदऽन्यतोऽपि।' यानी कथा के दूसरे सिरे तक पहुँचना हो, तो आपको इन ग्रंथों में डुबकियाँ लगानी ही होंगी। आगे लिखते हैं–'स्वान्तःसुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा' अर्थात् अंतःकरण की सुखानुभूति के लिए कुछ प्रसंग गढ़े भी हैं। किसी भी कथा- रचना के ये आधारभूत सूत्र रहे हैं। विशेषतः ऋग्वेद में ये आधारभूत सूत्र कूट-कथा की तरह अनेक मंत्रों में पिरोए हुए मिलते हैं। उनमें से एक उदाहरण स्वरूप एक मंत्र के इस अंश में देखिए–'इंद्र ने धुनि और चुमुरि नामक असुरों का वध किया है और विश्वासी मन से दभीति राजा की प्रार्थना सुनी है।' ऋग्वेद 10-113-9

इस मंत्र में प्रयुक्त इंद्र द्वारा धुनि और चुमुरि नामक असुरों के वध की कथा निःसंदेह अगस्त्य का जन्म घड़े से होने की कथा की तरह पूर्व-प्रचलित रही होगी, जो कालांतर में काल-कवलित हो गयी। ऐसी कितनी ही कथाएँ हमारे इस विश्वास की भेंट चढ़ गयीं कि वेदों में मानवीय इतिहास नहीं है।

ऋग्वेद में कुछेक ऋचाएँ कथा-पहेली स्तर की भी हैं। जैसे–

एक युवती है। उसके चार कोण हैं। उसकी मूर्ति सुंदर और स्निग्ध है। वह उत्तमोत्तम वस्त्र धारण करती है। दो पक्षी उस पर बैठते हैं। वहाँ देवता अपना-अपना भाग पाते हैं। -ऋग्वेद 10-114-03

(संकेत : इसमें यज्ञ-वेदी को युवती, स्निग्ध अर्थात् घी के कारण चिकनी, उत्तमोत्तम वस्त्र यानी यज्ञ-सामग्री, दो पक्षी यानी पुरोहित और यजमान।)

एक पक्षी समुद्र में पैठा। वह सारा विश्व देखता है। परिपक्व बुद्धि के द्वारा मैंने उसे देखा है। वह निकटवर्तिनी माता का स्वाद चखता है और माता भी उसका स्वाद लेती है। ऋग्वेद 10-114-04

(संकेत : पक्षी–प्राण-वायु, समुद्र–ब्रह्मांड, निकटवर्तिनी माता–वाक्। तात्पर्य यह कि प्राण-वायु वाक् का और वाक् प्राण-वायु का आनंद लेते हैं।)

कुछ घोड़े पृथ्वी की शेष सीमा तक विचरण करते हैं। कुछ घोड़े रथ की धुरी में ही जुते रहते हैं। जिस समय सारथि रथ के ऊपर रहता है, उस समय परिश्रम दूर करने के लिए घोड़ों को उपयुक्त आहार दिया जाता है। ऋग्वेद 10-114-10

भारत की गौरवमयी प्रतिष्ठा में वैदिक और संस्कृत वांग्मय तथा भारतीय संस्कृति का अद्वितीय योगदान रहा है।

'किसी जाति का साहित्य उसकी रूढ़ि-परंपरा की, परिवेष्टनों की, भौगोलिक स्थितियों की, जलवायु से संबद्ध अवस्थाओं की, और राजनीतिक संस्थाओं की संयुक्त प्रसूति होता है।'

निस्संदेह वैदिक साहित्य का महत्व साहित्य के अध्येताओं के बीच बहुत आवश्यक है। इसकी बड़ी आयु, एक बहुत बड़े भूखंड पर इसका फैलाव, इसका परिमाण, इसकी अर्थ-संपत्ति, इसकी रचना-चारुता, संस्कृति के इतिहास की दृष्टि से इसका मूल्य इसे महान और मौलिक साहित्य सिद्ध करते हैं। आधुनिक शताब्दियों में इस साहित्य ने यूरोप के साहित्य पर युग प्रवर्तक प्रभाव डाला है। कालिदास का 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' नाटक यूरोप में बड़े चाव के साथ पढ़ा गया और गेटे ने 'फास्ट' की भूमिका उसी ढंग से लिखी।

संपूर्ण ऋग्वेद की रचना पद्य में हुई है। यजुर्वेद और ब्राह्मणों में गद्य का अच्छा विकास देखने को मिलता है। उपनिषद तक पहुँचते-पहुँचते गद्य का प्रभाव बहुत मंद पड़ गया क्योंकि उपनिषदों में गद्य अपेक्षाकृत कम देखा जाता है। क्लासिक संस्कृत में तो गद्य प्रायः लुप्त-सा ही दिखाई देता है। गद्य का प्रयोग केवल व्याकरण और दर्शनों में ही किया गया है पर वह भी दुर्बोध और चक्करदार शैली के साथ। साहित्यिक गद्य कल्पनाढ्य आख्यायिकाओं, सर्वप्रिय कहानियों, उपदेशपरक कथाओं तथा नाटकों में अवश्य पाया जाता है। यह गद्य लंबे-लंबे समासों से भरा हुआ है और ब्राह्मणों के गद्य से मेल नहीं खाता ।

वेदों में क्षीण रूप में पाया जाने वाला पुनर्जन्म का सिद्धांत उपनिषदों में प्रबल रूप धारण कर लेता है। क्लासिक संस्कृत में इस सिद्धांत का पोषण बहुत ही श्रमपूर्वक किया गया है। उदाहरण के लिए, बौद्ध साहित्य की बोधिसत्व की कथाएँ प्रस्तुत की जा सकती हैं।

मानव जगत की घटनाओं के वर्णन में भी अपार्थिव

अंश को सम्मिलित करने की और अधिक अभिरुचि देखी जाती है। यही कारण है स्वर्ग और पृथ्वी के निवासियों के परस्पर मिलने जुड़ने की कथाओं की कमी नहीं है।

सीमा से बढ़ जाने वाली अतिशयोक्तियों का उल्लेख भी यहाँ आवश्यक है। इसके इतने उदाहरण हैं कि पूर्वीय अतिशयोक्ति जगत प्रसिद्ध हो चुकी है। बाण की कादंबरी में उज्जयिनी के बारे में कहा गया है कि वह त्रिभुवनललामभूता मानो दूसरी पृथ्वी, निरंतर होने वाले अध्ययन की ध्वनि के कारण धुले हुए पापों वाली है। (वैदिक काल के) बाद की शैली में विरक्त या साधु बन जाने का सीमा से अधिक वर्णन, कथाओं का रंग बिरंगा उल्लेख, घटाटोप वर्णनों के दल के दल, महाकाव्यों का भारी-भरकम डीलडोल, एक प्रकार का अनुपम संक्षिप्त शैली वाला गद्य, अभ्यास वश प्रयुक्त किए गए लंबे-लंबे समास ऐसी बातें हैं जो क्लासिक संस्कृत में पाई जाने वाली इस विशेषता को प्रकट करती हैं। इस प्रकार से इस काल में संस्कृत कविता क्रमशः अधिकाधिक कृत्रिम होती चली गई है।

यदि वैदिक साहित्य वास्तव में धर्मपरक है तो लगभग सारे का सारा क्लासिक संस्कृत साहित्य लौकिक विषय पर है। क्लासिक संस्कृत काल में वैदिक समय के अग्नि, वायु, वरुण इत्यादि पुराने देवता गौण बन गए हैं और उनके मुकाबले पर ब्रह्मा, विष्णु और शिव मुख्य उपास्य हो गए हैं। इनके अतिरिक्त गणेश, कुबेर, सरस्वती, और लक्ष्मी इत्यादि अनेक नए देवताओं की कल्पना कर ली गई है।

'भारत में ऐतिहासिक कविता का मूल ऋग्वेद के संवाद वाले शब्दों में मिलता है। बाद के वैदिक साहित्य में अर्थात ब्राह्मणों में इतिहास आख्यान और पुराणों का उल्लेख मिलता है। इस बात के प्रचुर प्रमाण मिलते हैं कि यज्ञ संस्कारों तथा उत्सवों के अवसर पर इनकी कथा आवश्यक थी। प्रसिद्ध कथावाचक लोग बहुत पुराने समय में भी विद्यमान थे। बौद्ध काल से बहुत पहले ही संचित हो चुकने वाली कथा-कहानियों अर्थात इतिहास, आख्यान, पुराण और गाथाओं के आद्यकोश से पर्याप्त सामग्री होती है। अनुमान किया जाता है कि ऐतिहासिक काव्य के ढंग की सैकड़ों पुरानी कहानियों ने ऐतिहासिक कवियों की रचना के लिए पर्याप्त सामग्री दी होगी। इन्हीं काव्यों के आधार पर इन्हीं की काट-छाँट करके हमारे रामायण और महाभारत नामक महाकाव्यों की रचना हुई होगी। यह बात तो महाकाव्य के कवि ने स्वयं स्वीकार की है कि वर्तमान ग्रंथ मौलिक ग्रंथ नहीं हैं–

आचख्युः कवयः केचित् सम्प्रत्यान्वक्षतेऽपरे।
आख्यास्यन्ति तथैवान्ये इतिहासमिमं भुवि।।

अर्थात् इस इतिहास को कुछ कवि इस जगत में बहुत पहले कह चुके हैं कुछ अब कहते हैं तथा कुछ आगे भी कहेंगे। यहाँ 'आचख्युः' से तात्पर्य है–बहुत प्राचीन समय में।'

'शायद यह कहना उचित होगा के आख्यायिका में ऐतिहासिक तथ्य होता है और कथा प्रायः कल्पना प्रचुर होती है।'

ऋग्वेद में 15 से अधिक संवाद सूक्त हैं। यह सूक्त निश्चय ही धर्मनिरपेक्ष (सेक्युलर) लोक व्यवहारपरक हैं। वॉन श्रॉडर ने यह प्रमाणित करने का प्रयत्न किया है किन्नर संवाद सूत्रों से रहस्य पूर्ण नाटकों की सूचना मिलती है।

वैदिक अनुष्ठान छोटी-छोटी अनेक क्रियाओं के सूत्रों से प्रगुम्फित थे। यज्ञ सत्रों के अंतराल में यज्ञ मंडप में बैठे हुए यजमानों याजकों के मनोविनोदार्थ वार्तालापमय सूक्त पढ़े बोले और गाए जाते थे। इस धारणा की पुष्टि बाल्मीकि रामायण के उत्तरकांड और हरिवंश पुराण से होती है।

साहित्य के एक महत्वपूर्ण अंग कथा साहित्य का प्राचीनतम रूप ऋग्वेद के यम यमी संवाद, पुरुरवा उर्वशी वृत्त, सरमा और पणि संवाद जैसे लाक्षणिक संवादों, ब्राह्मणों के सुपर्णकाद्रव जैसी रूपात्मक आख्यानों, उपनिषदों के सनत् कुमार नारद जैसे ब्रह्मर्षियों की भावमूलक आध्यात्मिक व्याख्याओं एवं महाभारत के गंगावतरण, श्रृंग, नहुष, ययाति, शकुंतला, नल आदि जैसे उपाख्यानों में उपलब्ध होता है।23 डॉ. नेमिचंद्र शास्त्री; हरीभद्र के प्राकृतिक कथा साहित्य का आलोचनात्मक परिशीलन

ऋग्वेद के कथा-सूक्त कथा के किसी भी रूप का आदि-रूप हैं।

वस्तुतः वेद में अनंत काल के अनंत ऋषियों की अनंत उच्चतम और ज्ञानमयी चिंताएं अनंत गिरि निर्झरों को चीरती और प्रतिबिंबित करती हुई इकट्ठी की गई है। वेद में ऐसे दिव्य संदेश ऐसी मार्मिक और मौलिक चिंताएं भरी पड़ी हैं जिन चिंताओं के समान 'सभ्यतम मनुष्य कोई

स्वाधीन चिंतन ही नहीं कर सकता।'

तीसरा मत ऐतिहासिकों का है। इनके मत से वैदिक काल में भी भले बुरे लोग थे भली बुरी बातें थी और इन दिनों भी हैं। यह वेद को अद्भुत या दिव्य ग्रंथ नहीं समझते। यह वेद को संसार का प्राचीनतम ग्रंथ तो मानते हैं परंतु कहते हैं कि–'बृहद आरण्यक उपनिषद में जहाँ वेद को ब्रह्म का श्वास बताया गया है वही इतिहास को भी श्वास कहा गया है।' स्मृति में कहा गया है–

युगांतेऽन्तहितान् वेदान् सेतिहासान् महर्षयः।
लेभिरे तपसा पूर्वमनुज्ञाताः स्वयंभुवा।।

अर्थात् ब्रह्मा की अनुमति से महर्षियों ने तपस्या के द्वारा प्रलय अवस्था में छिपे हुए वेदों को इतिहास के साथ पाया।

इससे विदित होता है वेद में इतिहास अनुस्यूत है। यास्काचार्य के निरुक्त ने भी वेद में इतिहास माना है। निरुक्त के कई स्थानों में 'तत्रेतिहासमाचक्षते' आया है। निरुक्त (2.4) में यास्क ने इषित सेन, मोदी, शंतनु, देवापि आदि के इतिहास का उल्लेख किया है। पिजवन पुत्र सुदास, कुशिक पुत्र विश्वामित्र आदि का विवरण भी यास्क ने दिया है। निरुक्त के 3.3 में यास्क ने प्रस्कण्व को 'कण्वस्य पुत्रः' लिखा है। निरुक्त के ही 4.3 में लिखा–'च्यवन ऋषिर्भवति'। 'सन्तपन्ति माम्' मंत्र का अर्थ लिखने के बाद यास्क ने लिखा है–'कुएं में गिरे हुए त्रित ऋषि को इस सूक्त का ज्ञान हुआ।' इसी मंत्र के नीचे यास्क ने लिखा है–'तत्र ब्रह्मतिहास-मिश्रं ऋक्-मिश्रं गाथा-मिश्रं भवति।' अर्थात् यास्क के मत से वेद इतिहास और गाथा से युक्त हैं।

ऋग्वेद के सभी प्राचीन भाष्यकार ऋग्वेद में इतिहास मानते हैं। इसका 'दाशराज्ञयुद्ध' प्रसिद्ध इतिहास है। ऋग्वेद में ऋषियों और राजाओं का वंश विवरण है। अनेकानेक नदियों समुद्रों नगरों देशों और प्राणियों के नाम और विवृति है। यजुर्वेद (3.61) में शिवजी के धनुष, हाथी की छाल के निवास स्थान आदि का पुराणों की तरह स्पष्ट उल्लेख है। शतपथ ब्राह्मण (14.5.4.10) और अथर्ववेद में इतिहास को एक कला माना गया है। वस्तुतः वेद में आर्यों के रहन-सहन, खानपान, भाषा, भाव, समाज-व्यवस्था, आमोद-प्रमोद, राज्य-स्थापन, देश-विजय आदि विषय हैं और अतीव संक्षिप्त रूप से इतिहास है।

यास्क ने ऋग्वेद में आए 'अश्विनौ' शब्द के चार अर्थ किए हैं–स्वर्ग-मर्त्य, दिन-रात, सूर्य-चंद्रमा और दो धर्मात्मा। 'इंद्र' शब्द के चार अर्थ किए गए हैं–ईश्वर, देव, ज्ञान और विद्युत। 'वृत्र' के भी चार अर्थ हैं–अज्ञान, मेघ, असुर और असुरों का राजा। 'पृश्नि' के भी चार अर्थ हैं–मारुतों की माता, पृथ्वी, आकाश और मेघ। 'गौ' शब्द के तो पाँच अर्थ किए गए हैं–गो, किरण, जलधारा, इंद्रिय और वाणी।

यास्क ने तीन ऐसे साधन बताए हैं जिन से मंत्रों का अर्थ जाना जा सकता है- 1. आचार्यों से परंपरया चुने हुए ज्ञान ग्रंथ 2. तर्क, और 3. गंभीर मनन।...

ऋग्वेदीय मंत्रों के कहीं आध्यात्मिक, कहीं आधिदैविक तथा कहीं आधिभौतिक अर्थ हैं। सायण ने यथास्थान तीनों ही अर्थों को लिखा है। ऋग्वेद में कहीं समाधि भाषा, कहीं परकीय भाषा और कहीं अलौकिक भाषा का प्रयोग है और सायण ने यथास्थान तीनों का ही रहस्य बताया है। जहाँ जिस भाषा और जिस वाद का कथन है, वहाँ उसी का उल्लेख करके उसने अर्थ समन्वय किया है।

ऋग्वेद में कुल 10 मंडल 1017 सूक्त और 10467 मंत्र हैं। प्रत्येक मंडल में कितनी ही सूक्त और प्रत्येक रूप में कितनी ही मंत्र हैं।

ऋचा (ऋक्), वेद एवं मंत्र से तात्पर्य

छंदों से युक्त मंत्रों को ऋक् (ऋचा) कहा जाता है। वेद शब्द का अर्थ ज्ञान है। इसलिए ऋचाओं का जो ज्ञान है उसे ऋग्वेद कहते हैं।

गुप्त कथन का नाम मंत्र है।

वस्तुतः देवता या दिव्य शक्तियाँ चारों तरफ हैं–बाहर भीतर सर्वत्र। ऋषि लोग सब में–वृक्ष, शाखा, पत्ते आदि में देव ही देव देखते थे। अनुमान किया जा सकता है कि ऋषि लोग जब अपने को चारों ओर से देवों से ही घिरा हुआ अनुभव करते होंगे तब उनका समाज कैसा आनंदमय, स्वर्णमय और सुगंधमय रहा होगा। क्षण भर के लिए भी यदि आप अपने को देवों से घिरा हुआ अनुभव करें तो आपके सारे दुर्गुण भाग जाएँगे और आप सद्गुणों की खान हो रहेंगे। यदि आप इन देवों में ही विचरें, सोवें, जागें तो आपका जीवन दिव्य हो जाएगा। आपके सारे कार्य सिद्ध हो जाएँगे और आपका संसार देवों का नगर बन

जाएगा।

जो इस रहस्य को नहीं समझते वे वेद के ऊपर तरह-तरह के संदेह जाल बिछाते हैं। कहते हैं–'वेद में औषधियाँ वैद्यों से बातें करती हैं, द्यावापृथिवी बोलती है। जल और वायु, चमस और स्रुवा सब के सब चलते, बोलते या धन देते हैं। जड़ पदार्थ यह सब कार्य कैसे करेंगे?

वेद प्रधानतः आध्यात्मिक ग्रंथ हैं। उसमें चेतनवाद की प्रधानता है।

जो 'आत्मवत्सर्वभूतेषु' को जीवन में डाल लेते हैं वे पशु, पक्षी, कंकड़ और ठीकरे से भी बातें करते हैं। भला जो वैद्य अपनी औषधियों से बातें करना नहीं जानता वह उसका मर्म क्या जानेगा? जो वीर अपनी तलवार से बातें नहीं करता वह भी कोई वीर है? सच्चाई तो यह है के अपने में चेतन का जितना ही अधिक विकास होगा मनुष्य उतना ही जड़ वस्तुओं से चेतन भक्त व्यवहार करेगा। इसके विपरीत जिसमें चेतन तत्व का विकास नहीं हुआ है जिसके मन मस्तिष्क और प्राण जड़ानुगत हैं वह तो मनुष्य को भी जड़ समझेगा और जड़ की ही तरह उस पर मनमाना अत्याचार करेगा। महात्माओं और जनवादी मनुष्यों के यह कार्य प्रतिदिन प्रत्यक्ष देखे सुने जाते हैं।

वैदिक ऋषियों की दृष्टि विशाल और व्यापक थी। उनकी माता पृथिवी थी, उनका पिता द्यौ था (ऋग्वेद प्रथम मंडल सूक्त 89 मंत्र 4)। वे प्रत्येक अवसर पर सारे भुवनों का स्मरण करते थे। वे अपने व्यष्टि को समष्टि से संबलित रखते थे–साढ़े पाँच फीट में ही अपने को कैद नहीं रखते थे। उनके मन विशाल थे। उनके वचन उदार थे। उनके कर्म पिण्ड-ब्रह्माण्डव्यापी थे। वे अपने में विश्व को देखते थे और विश्व में अपने को देखते थे। ऐसे दिव्य पुरुषों का सर्वत्र चेतन और देवता देखना स्वाभाविक था।

स्वार्थी अहंकारी और विलासी व्यक्तियों से देवता दूर रहते हैं। 'तपस्वी को छोड़कर देवता दूसरे के मित्र नहीं होते' (मंडल 4 सूक्त 33 मंत्र11), 'कुकर्म करने वाले के भी देवता नहीं हैं' (मंडल। सूक्त 32 मंत्र 9)। 'देवों के गुप्तचर दिन-रात विचरण करते हैं। उनकी आँखें कभी बंद नहीं होती' (मंडल 10 सूक्त 10 मंत्र 8)। 'देवों के गण सब देखते हैं' (मंडल 10 सूक्त 10 मंत्र 2)।

ऋग्वेद के एक स्थल (मंडल 4 सूक्त 28 मंत्र 3) पर कहा गया है कि 'इंद्र ने अनेक सहस्त्र सेनाओं का वध किया'। अन्यत्र (मंडल 4 सूक्त 30 मंत्र 21) लिखा है– 'इंद्र ने तीस हजार राक्षसों को मार डाला'। 'इंद्र ने वज्र द्वारा शंबरासुर के 99 नगरों को एक काल में ही भी नष्ट किया था (मंडल 5 सूक्त 29 मंत्र 6)।' 'इंद्र ने शरत् नामक असुर की सात पुरियों को विध्वस्त किया' (मंडल 6 सूक्त 20 मंत्र 10)। इसीलिए इंद्र को पुरंदर कहा जाता है। इंद्र तीन प्रकार (आध्यात्मिक आधिदैविक और आधिभौतिक) से मूर्तियाँ धारण करके प्रकट होते हैं। यह माया द्वारा अनेक रूप धारण कर यजमान के पास आते हैं।' इंद्र के रथ में हजार घोड़े जुते जाते हैं' (मंडल 6 सूक्त 47 मंत्र 18)। सेवक सुदास राजा के लिए 66,066 जन मारे गए थे। यह सब कार्य इंद्र की शूरता के सूचक हैं। (मंडल 1 सूक्त 18 मंत्र14)। 'इंद्र ने शंबरासुर की 99 नगरियों को छिन्न-भिन्न कर डाला और अपने निवास के लिए 100वीं नगरी को अधिकृत कर लिया' (मंडल 7 सूक्त 18 मंत्र 14)। ' इंद्र ने काँपते हुए वृत्रासुर के सिर को 100 धारों वाले वज्र से छेद डाला' (मंडल 8 सूक्त 6 मंत्र 6)। शायद तभी से इंद्र का एक नाम आखंडल (शत्रु खंडयिता) पड़ा। 'यदि सौ द्युलोक हो जाएं तो भी हे इंद्र! तुम्हारा परिमाण नहीं कर सकते। यदि सौ पृथ्वियां हो जाएं तो भी तुम्हें माप नहीं सकती, यदि 100 सूर्य हो जाएं तो भी तुम्हें प्रकाशित नहीं कर सकते। इस लोक में जो कुछ उत्पन्न हुआ है वह सब और द्यावा पृथ्वी तुम्हारी सीमा नहीं कर सकते' (मंडल 8 सूक्त 59 मंत्र 5)। मंत्र में ऋषि ने इंद्र में परमात्मा की दिव्य विभूति का दर्शन किया है।.'इंद्र! तुम्हारा एकमात्र बाण सौ अग्र भागों से युक्त और सहस्त्र पात्रों से संयुक्त है' (मंडल 8 सूक्त 66 मंत्र 7)। 'इंद्र ने 21 पर्वत तटों को तोड़ा था। इंद्र ने जो कार्य किया उसे मनुष्य वा देवता नहीं कर सकते।' (मंडल 8 सूक्त 85 मंत्र 2)। 'इंद्र, तुम मनुष्यों के समान स्पष्ट वाक्य का उच्चारण करते हो'(मंडल 10 सूक्त 28 मंत्र 12)।' अनेक श्लोकों में इंद्र ने ऐसे उद्गार प्रकट किए हैं–'द्यावापृथ्वी मेरे एक पार्श्व के समान भी नहीं है'। 'मेरी महिमा स्वर्ग और पृथ्वी को लांघती है'। 'मेरी इतनी शक्ति है कि कहो तो मैं इस पृथ्वी को दूसरे स्थान पर ले जाकर रख दूं।'' इस पृथ्वी को मैं जला सकता हूँ। जिस स्थान को कहो उसे मैं विध्वस्त कर दूं'। 'मेरा एक पार्श्व पृथ्वी पर है और एक

पार्श्व आकाश में है'। 'मैं महान से भी महान हूँ'। (मंडल 10 सूक्त 119 मंत्र 7-10)

'इंद्र ने दधीचि की हड्डियों से वृत्र आदि असुरों को 810 बार मारा था'(मंडल 1 सूक्त 84 मंत्र 13)। 'इंद्र ने आकाश में द्युलोक को स्थिर किया है। द्यौ, पृथ्वी और अंतरिक्ष को तेज से पूर्ण किया है और विस्तृत पृथ्वी को धारण कर उसे प्रसिद्ध किया है'(मंडल 2 सूक्त 15 मंत्र 2)। 'इंद्र, तुम्हारे गर्जन करने पर स्थावर और जंगम काँप जाते हैं; त्वष्टा भी काँपते हैं।' (मंडल 1 सूक्त 80 मंत्र 14) । 'इंद्र मनुष्यों के लिए युद्ध करते हैं' (ऋग्वेद प्रथम मंडल सूक्त 55 मंत्र 5) । मंडल 1 सूक्त 4 मंत्र 9 में इंद्र 100 यज्ञों के कर्ता कहे गए हैं।

मंडल 1 सूक्त 53 मंत्र 9 में कहा गया है कि सुश्रुवा राजा के साथ 20 राजा और 60,099 सैनिक इंद्र से लड़ने के लिए आए थे। सब को पराजित कर दिया। मंडल 2 सूक्त 19 मंत्र 6 में कहा गया है–'इंद्र 80, 90 अथवा 100 अश्वों के द्वारा ढोए जाकर हमारे सामने आओ'। मंडल 2 सूक्त 35 मंत्र 6 में इंद्र के 'उच्चैश्रवा' घोड़े का उल्लेख है। ऋग्वेद प्रथम मंडल सूक्त 79 मंत्र 8 में उल्लेख है–'इंद्र के वज्र 90 नदियों के ऊपर विस्तृत हुए थे'। क्या यह असम्भव नहीं है कि यहीं से समुद्र पर सेतु-निर्माण की कल्पना ने आकार ग्रहण किया हो? ऋग्वेद प्रथम मंडल सूक्त 79 मंत्र 9 में कहा गया है कि एक बार एक हजार मनुष्यों ने 17 इंद्र की पूजा की थी।

ब्राह्मणों और उपनिषदों में इंद्र को अद्वितीय आत्मा, जीवात्मा, प्राण आदि कहा गया है। वैदिक साहित्य में इंद्र तत्व एक विशिष्ट प्रतिपाद्य है।

देवों का रहस्य बताने वाले 'बृहद्देवता', 'निरुक्त', 'निरुक्त वार्त्तिक' आदि अनेक वैदिक ग्रंथ हैं। वेद के बहुत से शब्द द्वयर्थक और नाना-अर्थक तो हैं किंतु यह नहीं कहा जा सकता के सारे देवता नामों को श्लेष अलंकार में कहा ही गया है।

जिस तरह त्वष्टा की कन्या सरण्यू ने अश्वरूप धारण कर अश्विद्वय को जन्म दिया (ऋग्वेद मंडल 10 सूक्त 17 मंत्र 2) उसी तरह ग्रीक देवी एरिनिज डिमेटर ने घोड़ी का रूप धारण कर अरियेन और डिस्पोना पूर्व जन्म दिया था। पुराणों में ये यमज हैं तथा मन और शरीर के रक्षक देवता बताए गए हैं। ऋग्वेद में दस्र और नासत्य नामों से भी इनका विवरण है। ये दोनों भाई व्याधि और विपत्ति के भी देवता हैं। ये शिल्पी और चिकित्सक भी हैं। ये 'सौ डांड़ोंवाली नौका में भुज्यु को बैठाकर समुद्र से राजा को घर के पास ले गए थे' ऋग्वेद मंडल 1 सूक्त 116 मंत्र 3 और 5। 'अश्विद्वय, तुमने पंखों वाली (पक्ष विशिष्ट) नौका बनाई थी। तुमने नौका द्वारा महा समुद्र से तुग्र पुत्र भुज्यु का उद्धार किया था।' ऋग्वेद मंडल 1 सूक्त 181 मंत्र 5 'वृद्ध कलि नामक स्तोता को तुमने यौवन से युक्त किया था। तुम दोनों ने लंगडी विश्पला को लोहे का चरण देकर उसे गति समर्थ बना दिया था।' ऋग्वेद दशम् मंडल के सूक्त 39 मंत्र 8 विश्पला खेल ऋषि की पत्नी थी। यही बात प्रथम मंडल के सूक्त 112 मंत्र 10 और सूक्त 116 मंत्र 15 में भी है। इस 15वें मंत्र में कहा गया है कि 'युद्ध में विश्पला का एक पैर कट गया था', उसे लौह-जंघा देकर अश्विद्वय ने युद्ध क्षेत्र में जाने में समर्थ किया था। ऋग्वेद प्रथम मंडल सूक्त 116 मंत्र 14 में कहा गया है कि अश्विद्वय ने 'नपुंसक-पतिका वघ्रिमति को हिरण्यहस्त नाम का पुत्र दिया था'। यहीं 16वें मंत्र में वृषागिर के पुत्र अंधे ऋज्राश्व को पुत्र देने की बात भी लिखी है। ऋग्वेद दशम् मंडल सूक्त 25 मंत्र 11 में अंधे दीर्घतमा को नेत्र और लंगड़े परावृज को पैर देने की बात कही गई है। ऋग्वेद प्रथम मंडल सूक्त 116 मंत्र10 में च्यवन ऋषि का बुढ़ापा दूर कर उन्हें तरुण बनाने का उल्लेख है। यही बात ऋग्वेद मंडल 5 सूक्त 74 मंत्र 5 में भी है।

ऋग्वेद मंडल 5 सूक्त 30 मंत्र 8 मंत्र में कहा गया है कि 'मरुतों के प्रभाव से द्यावा-पृथ्वी चक्र की तरह घूमने लगी थी'। ऋग्वेद प्रथम मंडल सूक्त 19 मंत्र 3 और 4 में वायु को जल वृद्धि का कारण बताया गया है, वहीं 7वें मंत्र में वायु को मेघमाला का संचालक और जलराशि को समुद्र में गिराने वाला कहा गया है। ऋग्वेद प्रथम मंडल सूक्त 64 मंत्र 3 में कहा गया है कि– 'रुद्र के पुत्र मरुत् जरारहित और तरुण हैं और जो देवों को हव्य नहीं देते उनके नाशक हैं'। ऋग्वेद मंडल 5 सूक्त 52 मंत्र 17 में लिखा है कि–'सप्त-सप्त संख्यक (49) मरुद्गण एक-एक होकर हमें शत संख्यक गौ, अश्व आदि दें। इनके द्वारा प्रदत समूहात्मक धन को हम यमुना तीर में प्राप्त करें'।

ऋग्वेद में ऋभुओं के संबंध में अनेक सूक्त हैं। ऋभुगण का अर्थ सायण और विल्सन ने 'सूर्य किरण'

तथा मैक्समूलर ने 'सूर्य' किया है।

ऋभुगण प्रसिद्ध कलाकार थे। उन्होंने अश्विद्वय के लिए हर जगह जा सकने वाले रथ का निर्माण किया था। उन्होंने अपने माँ-बाप को तरुण बना दिया था। वे मानव जन्म ले चुकने पर भी अविनाशी आयु (देवत्व) प्राप्त किए हुए हैं' ऋग्वेद प्रथम मंडल सूक्त 20 मंत्र 3, 4 और 8। ये अद्‌भुत चिकित्सक भी थे। इन्होंने मृत गौ के चमड़े से धेनु उत्पन्न की। एक अश्व से अन्य अश्व उत्पन्न किया (ऋग्वेद प्रथम मंडल सूक्त 161 मंत्र 7)। इन्होंने चमड़े से गौ को ढक दिया था और उस गौ के साथ बछड़े का फिर योग कर दिया था तथा माँ-बाप को युवा बना दिया था' (ऋग्वेद प्रथम मंडल सूक्त 110 मंत्र 8)।

ऋग्वेद दशम् मंडल के 61 वें और 62 वें सूक्तों में 38 मंत्रों से युक्त नाभानेदिष्ठ का भी आख्यान आया है। दशम् मंडल का ही 10वाँ सूक्त, ऋचा 1 से 14 तक सुप्रसिद्ध (और अनेक विद्वानों के बीच विवादित भी) यम-यमी संवाद है। विवादित तो वेदों की प्रत्येक ऋचा का प्रत्येक अर्थ है क्योंकि प्रत्येक विद्वान अपनी-अपनी ग्राह्यता और गूढ़ता के अनुरूप ही उनका अर्थ ग्रहण कर पाते हैं।

यम-यमी संवाद

(यम और यमी अथवा दिन और रात सहोदर हैं। यमी यम से कहती है–) विस्तृत समुद्र के मध्य द्वीप में आकर इस निर्जन प्रदेश में मैं तुम्हारा सहवास अथवा मिलन चाहती हूँ। क्योंकि (माता की) गर्भावस्था से ही तुम मेरे साथी हो। विधाता ने मन ही मन समझा है कि तुम्हारे द्वारा मेरे गर्भ से जो पुत्र उत्पन्न होगा वह हमारे पिता का एक श्रेष्ठ नाती होगा।

(यम का उत्तर–) यमी, तुम्हारा साथी यम तुम्हारे साथ ऐसा संपर्क नहीं चाहता क्योंकि तुम सहोदरा भगिनी हो, अगंतव्या हो। यह निर्जन प्रदेश नहीं है क्योंकि महान बली प्रजापति के द्युलोक का धारण करने वाले वीर पुत्र (देवों के चर) सब देखते हैं।

(यमी का वचन–) यद्यपि मनुष्य के लिए ऐसा संसर्ग निषिद्ध है तो भी देवता लोग इच्छा पूर्वक ऐसा संसर्ग करते हैं। इसलिए मेरी जैसी इच्छा होती है वैसे ही तुम भी करो। पुत्र जन्मदाता पति समान मेरे शरीर में पैठो– मेरा संभोग करो।

(यम का उत्तर–) हमने ऐसा कर्म कभी नहीं किया। हम सत्य-वक्ता हैं। कभी मिथ्या कथन नहीं किया है। अंतरिक्ष में स्थित गंधर्व अथवा जल के धारक आदित्य और अंतरिक्ष में ही रहने वाली योषा (सूर्य की स्त्री सरण्यू) हमारे माता-पिता हैं। इसलिए हम सहोदर बंधु हैं। ऐसा संबंध उचित नहीं।

(यमी की उक्ति–) रूप कर्त्ता शुभ अशुभ प्रेरक सर्व आत्मक दिव्य और जनक प्रजापति ने तो हमें गर्भावस्था में ही दंपति बना दिया है। प्रजापति का कर्म कोई लुप्त नहीं कर सकता। हमारे इस संबंध को द्यावापृथिवी भी जानते हैं।

(यमी की उक्ति–) प्रथम दिन की (संगमन की) बात कौन जानता है? किस ने उसे देखा है? किसने उसका प्रकाश किया है? मित्र और वरुण का यह जो महान धाम (अहोरात्र) है, उसके बारे में, हे मोक्ष बंधन करता यम, तुम क्या कहते हो?

जैसे एक शैया पर पत्नी पति के पास अपनी देह का उद्‌घाटन करती है, वैसे ही तुम्हारे पास, यम, अपने शरीर को प्रकाशित कर देती हूँ। तुम मेरी अभिलाषा करो। आओ, एक स्थान पर दोनों शयन करें। रथ के दोनों चक्कों के समान हम एक कार्य में प्रवृत्त हों।

(यम की उक्ति–) देवों के जो गुप्तचर हैं वे दिन-रात विचरण करते हैं। उनकी आँखें कभी बंद नहीं होती। दुःखदायिनी यमी, शीघ्र दूसरे के पास जाओ और रथ के चक्कों के समान उसके साथ एक कार्य करो।

दिन रात में यम के लिए जो कल्पित भाग है उसे यजमान दें। सूर्य का तेज यम के लिए उदित हो। परस्पर संबंध दिन द्युलोक और भूलोक यम के बंधु हैं। यमी यम, भ्राता के अतिरिक्त, अन्य पुरुष को धारण करे।

भविष्य में ऐसा युग आएगा जिसमें भगिनियां अपने बंधुत्वविहीन भ्राता को पति बनावेंगी। सुंदरी, मुझे छोड़कर दूसरे को पति बनाओ। वह जिस समय वीर्य सिंचन करेगा, उस समय उसे बाहुओं में आलिंगित करना।

(यमी की उक्ति–) वह कैसा बनाता है जिसकी रहते भगिनी अनाथा हो जाए और वह भगिनी ही क्या, जिसकी रहते भ्राता का दुःख दूर ना हो। मैं काम-मूर्छिता होकर नाना प्रकार से बोल रही हूँ, यह विचार करके भली-भांति भोगो।

(यम की उक्ति–) यमी, मैं तुम्हारे शरीर से अपने शरीर को मिलाना नहीं चाहता। जो भ्राता भगिनी का संभोग करता है उसे लोग पापी कहते हैं। सुंदरि, मुझे छोड़कर अन्य पुरुष के साथ आमोद-आह्लाद करो। तुम्हारा भ्राता तुम्हारे साथ मैथुन करना नहीं चाहता।

(यमी का कथन–) हाय यम, तुम दुर्बल हो। तुम्हारे मन और हृदय को मैं कुछ नहीं समझ सकती। जैसी रस्सी घोड़े को बाँधती है ओर लता वृक्ष का आलिंगन करती है वैसे ही अन्य स्त्री तुम्हें अनायास आलिंगित करती है, परंतु मुझे तुम नहीं चाहते हो।

(यम का वचन–) यमी, तुम भी अन्य पुरुष का ही भली-भांति आलिंगन करो। जैसे लता वृक्ष को वेष्टन करती है वैसे ही अन्य पुरुष तुम्हें आलिंगित करे। उसी का मन तुम हरण करो। वह भी तुम्हारे मन का हरण करे। अपने सहवास का प्रबंध उसी के साथ करो। इसी में मंगल होगा।

पुरुरवा और उर्वशी का आख्यान

ऋग्वेद दशम् मंडल के सूक्त 95 में एल-पुत्र पुरुरवा तथा उर्वशी का संवाद आता है। इस संवाद के आधार पर ही वेद के परवर्ती साहित्य में उर्वशी को अप्सरा और पुरुरवा को चंद्रवंशी पुरुष कहा है और एक कथा घड़ दी गई कि उर्वशी ने पुरुरवा की कामना की और उससे संभोग किया। उर्वशी जब लुप्त हो गयी तब पुरुरवा विह्वल होकर उसके पीछे गया और उससे लौटने की प्रार्थना की। किंतु उर्वशी ने कहा कि मैं नहीं जाऊँगी। कवि कालिदास ने इस कथा के आधार पर 'विक्रमोर्वशीयम्' नाटक की रचना की।

(पुरुरवा कहता है–) अयि निष्ठुर पत्नी, अनुरागी चित्त से ठहरो। हम लोगों को शीघ्र बातचीत करें। इस समय यदि हम दोनों में बातें नहीं हों तो आने वाले दिनों में सुख नहीं होगा।

(उर्वशी कहती है–) केवल बातचीत से क्या होगा? पहली उषा के समान तुम्हारे पास से मैं चली आ रही हूँ! हे पुरुरवा, तुम अपने घर लौट जाओ। मैं वायु के समान 'हाथ ना आने वाली' हूँ।

(पुरुरवा कहता है –) तुम्हारे विरह के कारण मेरे तरकश से बाण नहीं निकलता। विजयश्री नहीं मिलती और युद्ध में जाकर मैं बहुत सी गायों को नहीं ला सकता। राज कार्य वीर विहीन हो गया है। इसकी कोई शोभा नहीं है। मेरे सैनिकों ने युद्ध में सिंहनाद करने की चिंता छोड़ दी थी।

(उर्वशी की उक्ति–) यदि उर्वशी ससुर को भोजन सामग्री देने की इच्छा करती तो उषा सन्निहित घर से पति के शयन कक्ष में जाती और दिन रात स्वामी के पास रमण सुख भोगती।

पुरुरवा, तुम दिन में मुझे तीन बार पुरुष दंड से ताड़ित करते थे। किसी सौत के साथ मेरी प्रतिद्वंदिता नहीं थी। मुझे ही तुम नियमित रूप से संतुष्ट करते थे। तुम्हारे घर में मैं आई। तुम मेरे वीर राजा हुए। तुम मेरे सारे सुखों के विधायक हुए।

(पुरुरवा कहता है–) सुजूर्णि, श्रेणी, सुम्न, आपि, हृदेचक्षु, ग्रंथिनी, चरण्यू आदि जो महिलाएं व अप्सराएं थीं, तुम्हारे आने के बाद वह सब मेरे पास श्रृंगार करके नहीं आती थीं। गोष्ठ में जाते समय जैसे गायें बोलती हैं वैसे शब्द करके अब मेरे घर में नहीं आती थीं।

(उर्वशी कहती है–) जिस समय पुरुरवा ने जन्म लिया उस समय देव पत्नियाँ देखने आईं। अपनी शक्ति से बहने वाली नदियों ने भी उनकी संवर्द्धना की। पुरुरवा, तुम्हें दस्यु-वध करने को घोर युद्ध में भेजने के लिए देवता तुम्हारी संवर्द्धना करने लगे।

(पुरुरवा कहता है–) जिस समय मनुष्य होकर पुरुरावा अप्सराओं की ओर अग्रसर हुआ उस समय अपना रूप छोड़कर वे अंतर्धान हो गईं। कैसे डर के मारे हिरनी भागती है या जैसे रथ में जोते हुए घोड़े भागते हैं, वैसे ही वे चली गईं।

जिस समय पुरुरवा मनुष्य होकर देवलोकवासिनी अप्सराओं के साथ बातें करने और उनका शरीर छूने को आगे बढ़े, उस समय वह लुप्त हो गईं, अपने शरीर को नहीं दिखाया। क्रीड़ाशील अश्वोसमान भाग गई।

जिस उर्वशी ने आकाश के पतनशील विद्युत के समान शुभ्रता धारण की थी और मेरे सारे मनोरथों को पूर्ण किया था उसके गर्भ से मनुष्य का औरस सुंदर पुत्र जन्मा था। उर्वशी उसे दीर्घायु करे।

(उर्वशी कहती है–) पुरुरवा, पृथ्वी की रक्षा के लिए तुमने पुत्र को जन्म दिया था। मेरे गर्भ में वीर्यपात किया था। मैंने तुमसे बार-बार कहा है कि क्या होने से मैं तुम्हारे

पास नहीं रहूँगी क्योंकि मैं यह बात जानती थी। परम तुम मेरी बात तुम ने नहीं सुनी। इस समय पृथ्वी पालन कार्य को छोड़कर क्यों बेकार की बातें करते हो?

(पुरुरवा कहता है–) कब तुम्हारा पुत्र मुझे चाहेगा? यदि वह मेरे पास आए तो क्या वह नहीं रोएगा? आंसू नहीं गिराएगा? परस्पर प्रेम से संपन्न स्त्री पुरुष में विच्छेद करने की किस की इच्छा होगी? तुम्हारे ससुर के घर में तेजोरूप गर्भ चमक उठा।

(उर्वशी कहती है–) मैं तुम्हारी बात का उत्तर देती हूँ। तुम्हारे पास पुत्र जाकर आंसू नहीं वह आएगा, क्रंदन नहीं करेगा। मैं उसके कल्याण की कामना करूंगी। तुम्हारे पुत्र को मैं तुम्हारे पास भेज दूंगी। मूर्ख, अपने घर को लौट जाओ। अब मुझे नहीं पा सकोगे।

(पुरुरवा कहता है–) तुम्हारा प्रेमी पति (मैं) आज गिर पड़ा। फिर कभी नहीं उठा। वह बहुत दूर चला गया। वह दुर्गति में मर जाए। उसे भेड़िया आदि खा जाएं।

(उर्वशी कहती है–) पुरुरवा, तुम मृत्यु की कामना मत करो। यहीं मत गिरो। तुम्हें भेड़िया आदि न खाएं। स्त्रियों का प्रेम या मैत्री स्थाई नहीं होती। स्त्रियों और भेड़ियों का हृदय एक समान होता है।

मैं अनेक रूपों में मनुष्यों में घूमी हुई हूँ। मैंने मनुष्यों में 4 वर्ष रात्रि-वास किया है। दिन में एक बार कुछ घी पीकर प्यास बुझाते हुए मैंने भ्रमण किया है।

(पुरुरवा कहता है–) अंतरिक्ष को पूर्ण करने वाली और जल को बनाने वाली उर्वशी को वशिष्ठ वश में ले आते हैं। शुभ कर्म दाता पुरुरवा तुम्हारे पास रहे। मेरा हृदय जल रहा है। इसलिए हे उर्वशी! लोटो।

(उर्वशी कहती है–) इला पुत्र पुरुरवा, ये सारे देवता तुमसे कह रहे हैं कि तुम मृत्युंजयी होओगे। हवि से देवों की पूजा करोगे और स्वर्ग में जाकर आमोद-आह्लाद करोगे।

ऋग्वेद में पुरुरवा का विशेषण 'ऐल' है (मंत्र18) अर्थात् इला का पुत्र। इला कौषीतकि ब्राह्मण (9/2) में पृथ्वी का वाचक है। इससे प्रतीत होता है कि पुरुरवा मेघ का ही नाम है क्योंकि पृथ्वी से उठी हुई वाष्प ही मेघ को उत्पन्न करती है और मेघ ही बहुत गर्जना करता है। उर्वशी विद्युत ही है। निरुक्त में इसे अप्सरा अर्थात् अंतरिक्षस्थ जलों में सर्पण (विचरण) करने वाली कहा है। मेघों के संघर्ष के समय उर्वशी (विद्युत) प्रकट होती है और क्षणभर में लुप्त हो जाती है। यही उर्वशी का छिपना है। शतपथ ब्राह्मण (3/4/1/22) में पुरुरवा और उर्वशी से आयु उत्पन्न हुआ। इसी ब्राह्मण में (9/2/3/16) आयु को अन्न कहा है। इससे सिद्ध है कि पुरुरवा और उर्वशी मेघ और विद्युत हैं और उनकी मेल से वृष्टि तथा वृष्टि से अन्न पैदा होता है।

ग्रिफिथ ने पूरुरवस् को सूर्य और उर्वशी को उषा माना है। निःसंदेह यह (और अन्य सभी भी) एक प्रतीकात्मक रूपक है; जैसेकि वेद में 'दस्यु' संज्ञा उन लोगों के लिए प्रयुक्त हुई है, जो वेद-पाठी नहीं थे और जो रूढ़ होकर वेद का अनुगमन नहीं करते थे। अगर साफ शब्दों में कहा जाए तो काल-विशेष में वेदानुयायी लोगों का चरित्र 'तालिबानी' रहा है, ऐसा वेद के ही अनेक मंत्रों से आभास मिलता है। रत्नाकर (जो बाद में वाल्मीकि नाम से प्रसिद्ध हुए) इन वेद-रूढ़ियों को तोड़ने वाले पहले व्यक्ति थे। सनातन (जोकि कुछेक समन्वयों के साथ मुख्यतः वैष्णव दर्शन ही है) धर्म की नींव भी वेद की कुछेक रूढ़ियों में सुधार के साथ नारायण ऋषि ने नर नामक अपने सहयोगी ऋषि के साथ रखी, अपने ग्रंथ 'गीता-रहस्य' में यह शोध लोकमान्य तिलक ने प्रस्तुत किया है। अगर ध्यान से पढ़ा जाए तो तुलसीदास भी 'रामचरितमानस' में ('सगुन उपासक मोच्छ न लहहीं' आदि सिद्धांत-स्थापना के माध्यम से) वेद की अनेक रूढ़ियों को तोड़ते नजर आते हैं। सनातन-धर्म की शनैः शनैः व्याप्ति के कारण ही 'नर' ऋषि न रहकर सामान्य-जन बन गया और 'नारायण' उनके गुरु और सनातन-सिद्धांत के प्रमुख प्रस्तोता ऋषि न रहकर भगवान विष्णु बन गये; और इस तरह ईश्वर और मनुष्य के बीच एक नये संबंध की शुरुआत हुई। लेकिन सामान-जन किसी भी कथा के प्रतीकों को न जानकर उसमें वर्णित स्थूल घटनाओं और संवादों को ही ग्रहण करते हैं। वैदिक ऋषि अद्रष्ट परमात्मा को इंद्र, अग्नि, वरुण, आदित्य, मरुद् आदि अनेक नामों से पुकारते हुए धन और बल आदि देने की याचना करते हैं। परवर्ती कथाकारों ने पात्रों को उनकी प्रतीकात्मकता से बाहर निकालकर मानवीय सृष्टि प्रदान की और इस तरह अपने समय के रूढ़ वैदिकों के समक्ष लगभग विद्रोह की मुद्रा में आकर खड़े हुए। वाल्मीकि इसीलिए आदि-कवि हैं; अन्यथा समूचा वेद पद्यमय ही है। यह उल्लेखनीय है कि अश्वमेध यज्ञ के अंत में, सीता का पक्ष प्रस्तुत करते हुए वाल्मीकि राम के प्रति अपना

विरोध उन्हीं के समक्ष प्रकट करने का साहस दिखाते हैं।

हजारों वर्षों से लोक में प्रचलित अभी भी बहुत-सी ऐसी कथाएँ हैं जो इन ग्रंथों में भी समाहित नहीं हो सकी हैं। वे कथाएँ लोक-संस्कृति की मौखिक परंपरा में ही जीवित रहती चली आयी हैं। इनमें धार्मिक और लौकिक सभी तरह की कथाएँ सम्मिलित हैं और लोग आज भी पूरी श्रद्धा और रुचि के साथ उन्हें सुनते-कहते हैं। लौकिक-साहित्य में वयस्क कथाएँ तो आज भी श्रुत-साहित्य की तरह जीभाग्र पर ही जीवित हैं और चली आ रही हैं। हर व्यक्ति उन्हें सुनना-सुनाना तो चाहता है, प्रत्यक्षतः पढ़ना-पढ़ाना नहीं चाहता। वयस्क-कथाएँ पुस्तक रूप में आते ही साहित्यिक और सामाजिक दोनों मर्यादाओं का उल्लंघन करनेवाली मान ली जाती हैं जबकि पुरातन साहित्य में ये पूरी मर्यादा के साथ उल्लिखित हैं। कुछ साहसी लोगों ने आधुनिक युग में वयस्क कथाओं के कुछ मुद्रित और वेब संस्करण भी तैयार किये हैं; लेकिन कुल मिलाकर इन्हें वह सम्मान नहीं दिया आता जोकि सामान्य कथाओं को मिलता है। इसका मुख्य कारण इनका मनोरंजन-केन्द्रित होकर रह जाना है। वयस्क कथाओं के अतिरिक्त धार्मिक और लौकिक शेष समूचा कथा-साहित्य प्रत्येक आयु-वर्ग के लिए उपलब्ध है और सम्मान प्राप्त है।

संपर्क : एम-70, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032 /
मोबाइल : 8826499115
ई-मेल : 2611ableram@gmail.com

संदर्भ ग्रंथ :

1- डॉ. धनंजय वर्मा : हिन्दी कहानी का रचना शास्त्र
2- हजारी प्रसाद द्विवेदी : नाट्यशास्त्र की भारतीय परम्परा
3- डॉ. पारसनाथ द्विवेदी (हिन्दी व्याख्याकार व संपादक); भरतमुनिप्रणीत् नाट्यशास्त्रम्
4- कल्याण : वेद कथांक, जनवरी 1999
5- डॉ. रामानंद तिवारी 'भारतीनंदन' : सत्यं, शिवं सुन्दरं प्रथम भाग
6- हंसराज अग्रवाल : संस्कृत साहित्य का इतिहास
7- डॉ. नेमिचंद्र शास्त्री : हरीभद्र के प्राकृतिक कथा साहित्य का आलोचनात्मक परिशीलन
8- पं. राम गोविंद त्रिवेदी (भाषांतरकार और संपादक) : हिंदी ऋग्वेद
9- वैद्य रामगोपाल शास्त्री : वेद के आख्यानों का यथार्थ स्वरूप
10- पं. हरिशरण सिद्धांतलंकार : ऋग्वेदभाष्यम्

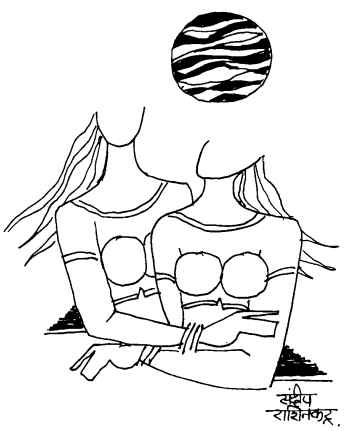

आपदाकाल और लघुकथाएँ

● सन्तोष सुपेकर

एक अनपेक्षित, अनसोची आपदा है कोरोना महामारी। इस रहस्यमय बीमारी का वायरस मानव के बाल की तुलना में 900 गुना छोटा है। चीन के वुहान शहर की लेबोरेटरी में चमगादड़ों से मिला RaTG13 वायरस रखा था जो कोरोना वायरस से 96 प्रतिशत मिलता है। वहीं से सारी दुनिया मे बहुत तेजी से फैली इस महामारी से पीड़ित व्यक्ति को (जिसको बुखार, सर्दी, साँस फूलना, नाक बहना, गले में खराश, फेफड़ों की खराबी जैसे लक्षण होते हैं) या उसके छूए हुए सामान को केवल स्पर्श करने से यह बीमारी होकर दूसरे व्यक्ति का गम्भीर हालत में पहुँच जाना या उसकी मृत्यु हो जाना बताता है कि स्थिति कितनी खतरनाक है? भावविह्वल, प्रेमासक्त होकर स्पर्शसुख का अनुभव करने का अपना ही एक, अप्रतिम आनंद है। इस महामारी ने उस पर सख्ती से प्रतिबंध लगा दिया है।पूर्व में (वर्ष 2020 के प्रारम्भ होने के पहले) कल्पनातीत था कि केवल एक दूजे को स्पर्श करना, हर्षातिरेक होकर हाथ मिलाना, गले मिलना भी जिंदगी से हाथ धो बैठने पर विवश कर देगा? कौन जानता था कि यह संक्रमण इतना घातक सिद्ध हो जाएगा? हर इंसान ऐसा पैनिक हो जाएगा कि घर आए अपने परिचित को भी शक की नज़र से देखेगा? उसके जाने के बाद कमरे को सिनेटाइज़र से साफ करना पड़ेगा? कौन जानता था कि अस्पताल में भर्ती अपने प्रियतम व्यक्ति से मिलने हम चिकित्सालय भी नही जा सकेंगे? कहीं भी अनजान जगह हाथ लग जाए तो तुरन्त बार-बार हाथ धोना पड़ेंगे। क्वारन्टीन (संगरोध) पीपीई किट, सोशल डिस्टेंस, मास्क, ऑन लाईन क्लासेस, प्रोग्राम जैसे शब्द आम हो जाएँगे? नोट (मुद्रा) को हाथ लगाने के बाद हाथ धोना पड़ेंगे? कड़ी गर्मी के मौसम में भी खाने-पीने की ठंडी चीजों, वातानूकूलन यंत्र से तौबा करनी पड़ेगी? विवाह समारोहों में बुलाने वाले से ज्यादा, सम्मिलित होने वाले हिचकेंगे? पड़ोस में भी किसी की मृत्यु होने पर उसके अंतिम संस्कार में जाने से डरेंगे? शादी-ब्याह जैसे आयोजनों में मेहमानों की संख्या स्थानीय प्रशासन गिनेगा? किसे पता था कि एक दो दिन का नही, महीनों का जनता कर्फ्यू लगेगा जब सब तरफ तालाबंदी (लॉक डाउन)हो जाएगी? घर से बाहर निकलने पर पुलिस के डंडों का शिकार होना पड़ेगा या जेल जाना पड़ेगा? रेल सेवाएँ महीनों तक बंद रहेंगी? परिवहन के साधन उपलब्ध न होने पर बेरोजगार हो चुके निर्धन श्रमिक पैदल ही, सैकड़ों किलोमीटर दूर अपने घरों को लौटने को विवश होंगे? कपड़े भले ही ढंग के न पहनें हों तो चलेगा पर चेहरे पर मास्क ढंग से लगाना अत्यावश्यक हो जाएगा?

इस विपदा काल ने जहाँ ढेर सारी तकलीफें दी हैं वहीं भौतिकता की चकाचौंध में डूबे अभिमानी इंसान को बहुत कुछ सिखाया भी है।विज्ञान के नए नए प्रयोगों से सुविधा की एक से एक वस्तुएँ प्राप्त कर आज का इंसान खुद को काल पर फतह पाया समझने लगा था, हर दूसरा शक्तिशाली व्यक्ति मदमस्त हो चला था, मनमानी पर उतर आया था लेकिन कोरोना महामारी ने दिखा दिया कि जिनके पास अकूत सम्पत्ति थी, जो मदांध थे, स्थानीय प्रशासन और राजनीति मे जिनका जबरदस्त दखल था, वे भी असहाय होकर, एक-एक ऑक्सीजन सिलेंडर के लिए तरस कर अकाल मौत मर सकते हैं।

परिणामस्वरूप इस बीमारी से डरकर, इसकी रोकथाम हेतु स्वच्छता, पर्यावरण, जल, जंगल, जमीन, शारीरिक श्रम, योग प्राणायाम जैसे तथ्यों पर हम आज सिर्फ बात ही नही कर रहे, इन पर तेजी से क्रियान्वन भी कर रहे हैं। शारीरिक व्यायाम, घरेलू मसालों, फल, सब्जियों का महत्व यकायक बढ़ गया है।इस समय मे चिकित्सालयों, मेडिकल स्टोर की लूटपाट, लाशों से खिलवाड़, कोरोना पीड़ित न होने पर भी आँकड़ों के लिए कोरोना रोगी घोषित कर देना, मृत जिस्मों से अंग निकालना, जीवनदायी दवाओं की बेशर्मी से जमाखोरी, लाखों रुपये में नकली दवाएँ भी बेच देना, अस्पतालों में एक-एक बेड (बिस्तर), एक- एक ऑक्सीजन सिलेंडर को लेकर मची आपाधापी जैसी घटनाएँ तो सामने आई ही हैं, वहीं भूखों को भोजन कराने, चिकित्सकों, पैरामेडिकल स्टाफ, पुलिस-प्रशासन के अधिकारियों-कर्मियों, सफाईकर्मियों द्वारा अपनी जान की परवाह न करते हुए कोविड (कोरोना) मरीजों, उनके परिजनों की निस्वार्थ सेवा, ऑक्सीजन सिलेंडरों की कमी पर कोरोना पीड़ित बुजुर्गों द्वारा ऑक्सीजन स्वयं न लेकर, बीमार नौजवानों को उपलब्ध करवाना जैसे उदाहरण भी सामने आए हैं।संतोष का विषय है कि इस बीमारी के हालातों से जूझते हुए भी हमारे लघुकथाकारों ने जिनमे से कई, दुर्भाग्यवश इस भयानक बीमारी से पीड़ित हुए, कई इस कारण काल के क्रूर गाल में असमय ही समा गए। (दिवंगतों की स्मृति को अश्रुपूरित नमन) इस विपदा काल का, समय की इस करवट का बखूबी चित्रण अपनी रचनाओं में किया है।

नोबल पुरस्कार विजेता, फ्रांसीसी दर्शनशास्त्री अल्बेयर कामू ने अपना सर्वश्रेष्ठ, युद्ध की छाया में ही लिखा था। हमारे देश मे भी साहित्यकारों ने विपरीत परिस्थितियों में प्रभावी लेखन किया है। सूरदासजी ने नेत्रहीन होने के बावजूद कई लाख पदों की रचना की। निर्गुण निराकार ईश्वर में विश्वास रखने वाले कबीरदास ने जुलाहे का कार्य करते हुए चिरस्मरणीय सर्जन किया। ख्यात समालोचक श्री रामविलास शर्मा ने अस्पताल में लेटे-लेटे ही बादलों पर अनेक कविताएँ रच दी थीं। छायावाद के प्रमुख स्तम्भ निरालाजी ने पत्नी और बेटी के असामयिक निधन और आर्थिक विपन्नता के बावजूद अपना लेखन जारी रखा। इसी प्रकार प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी', बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' दिनकर, मैथिलीशरण गुप्त आदि अनेक लेखकों ने गुलामी के संत्रास को सहते हुए ही अपने लेखन से साहित्य जगत को रोशन किया था। इसी परंपरा को आगे बढाते हुए हमारे आज के समय के लघुकथाकारों ने भी कोरोना महामारी के इस कठिन आपदा के समय में कष्ट झेलते हुए, लघुकथा के वास्तविक कर्म, अर्थात यथार्थ का प्रभावी चित्रण कर भविष्य हेतु उसका उचित प्रक्षेपण किया है और रचना पक्ष के साथ ही विचार पक्ष को पाठकों के सम्मुख रखते हुए अपना सर्वश्रेष्ठ, लघुकथा जगत को देने का प्रयास किया है।

अनेक लघुकथाकारों ने कोरोना काल पर बहुत कुछ और बहुत उत्कृष्ट लिखा है। यहाँ केवल कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं-

डॉक्टर रामकुमार घोटड ने जो कि स्वयं एक चिकित्सक हैं, इस समय मे अस्पतालों में बेड (बिस्तर)उपलब्धता की मारामारी पर 'प्रार्थनाएँ' लघुकथा लिखी है जिसमे एक मजबूर चिकित्सक, बेड के लिए प्रतीक्षारत एक मरीज के अटेंडेंट से कहता है कि बेड तो कोई खाली नही पर एक पेशेंट शायद कुछ ही घण्टों का मेहमान है, वही एक सम्भावना 'बनती' है।आप प्रतीक्षा कीजिये।कैसी विडंबना है कि किसी को बेड मिल जाए इसलिए किसी के मरने की प्रार्थना की जा रही है।डॉक्टर घोटड की ही 'तौहीन' में इस माहौल में 'पॉजिटिव' शब्द को लेकर फैले पैनिक पर करारा व्यंग्य है क्योंकि कोरोना बीमारी की रिपोर्ट 'पॉजिटिव' आना, इस वाक्य का प्रचलन इन दिनों आम हो चला है और 'पॉजिटिव' शब्द चौंकानेवाला एवं भयावह (!) हो चला है।

इसी तरह सहृदय चिकित्सक की उलझन और पीड़ा

दर्शाती डॉक्टर उमेश महादोषी की लघुकथा 'नियति के पदचाप' है जिसमें कोरोना योद्धा, एक चिकित्सक की मनोदशा का चित्रण है जो चाहते हुए भी अपनी और एक दूसरी बच्ची को इस बीमारी से न बचा पाए।इस लघुकथा में मरीज के परिजनों के आक्रोश, अपने स्वयं के दुःख और खुद भी इस विचित्र बीमारी से जूझते एक चिकित्सक की मनःस्थिति का वर्णन डॉक्टर महादोषी ने कितने उचित शब्दों में किया है-' मानवता की भाषा मे समान परिस्थितियों में अपने जीवन के साथ दूसरों के जीवन का भी समांतर महत्व होता है।दूसरों के जीवन के सापेक्ष अपना जीवन प्रत्येक बिन्दु पर प्राथमिकता पाने लगे तो मानव सभ्यता का परिदृश्य बदला हुआ सा दिखाई देगा।'

'अपने पदचापों की ध्वनि अपने साथ समेटे जा रहे डॉक्टर सुमित सोच रहे थे-पता नही वह केवल एक पिता थे या केवल मनुष्य!'

डॉ. पुरुषोत्तम दुबे ने अपनी लघुकथा 'घर लौटा रामखिलावन' में महामारी के भय से, बेरोजगारी के कारण महानगर से सैकड़ों मील पैदल चलकर गाँव लौटे श्रमिक की व्यथा को बखूबी चित्रित किया है।थक कर गाँव आए हुए व्यक्ति के पैरों की कैसे मालिश की जाती है, कैसे रास्ते की धूल और पसीना व्यक्ति को पस्त कर देती है और कैसे त्रस्त पुत्र को देख बुजुर्ग माँ की आकुलता-व्याकुलता बढ़ती जाती है इन सभी तथ्यों को दुबेजी ने बहुत कुशलता से पिरोया है। इस रचना में भाषाई सौंदर्य भी लाजवाब है-, 'माँ की धुंधली आँखें तो बराबर देख नही पा रही थीं पर रामखिलावन के जगह-जगह से फ़टे तलवों को माँ की हथेलियों की आँखें बराबर देख पा रहीं थीं।' कोरोना के कारण हुई बेशुमार मौतों के परिणामस्वरूप लाशों की हुई दुर्दशा पर डॉक्टर बलराम अग्रवाल ने अपनी लघुकथा 'तलाश' में अपने बेटे की लाश खोजती बुढ़िया के माध्यम से बेशर्म व्यवस्था और वीभत्सता का अत्यंत महीन और विश्लेषणात्मक चित्रण किया है। इस रचना में बुजुर्ग महिला के मिट्टी को हाथ से मसलने और उसमें अपने देश/प्रदेश की सरकार को खोजने की अर्थव्यंजना लेखकीय कौशल का उत्कृष्ट उदाहरण है। महामारी के फलस्वरूप हुए लॉक डाउन (तालाबंदी) पर सतीश राठी की लघुकथा 'राशन' उल्लेखनीय है जिसमे निर्धन, जरूरतमंद, किंतु अत्यंत स्वाभिमानी कथानायक राशन लेने से इसलिए हिचकता है कि मुफ्त राशन लेते हुए कोई उसका वीडियो न बना ले। उल्लेखनीय है कि इस लघुकथा पर लघु फ़िल्म बनी है और आस्ट्रेलिया के लघु फ़िल्म महोत्सव में पुरस्कृत भी हुई है।।कोरोनाजनित परिस्थिति के कारण गाँव लौटते व्यक्तियों की कठिनाइयों पर भी लघुकथाकारों का पर्याप्त ध्यान गया है, सतीश राठी की ही एक लघुकथा 'लकड़ी का झूला' में घर लौटते श्रमिक के नन्हे बच्चे का बीच रास्ते मे ही दुःखद निधन हो जाता है तब भी वे दंपती उस लकड़ी के झूले को अपने से अलग नही करते जिसमे उनका बच्चा सोता था। कल्पना भट्ट ने भी लॉक डाउन के दुष्परिणामों पर प्रकाश डालते हुए मजदूरों की दुर्दशा पर 'आधुनिक राक्षस' लघुकथा लिखी है जिसमे कोरोना काल की विभीषिका वर्णित करते हुए बरगद का एक पेड़ रो पड़ता है। सिद्धेश्वर की लघुकथा है-'जिंदा गोश्त' जिसमे गिद्ध चर्चा करते हैं कि लाशों के व्यापारी, आज के मानव ने अपने दुष्कर्मों से हम गिद्धों को भी काफी पीछे छोड़ दिया है।

'सभ्य समाज के बाज़ारवाद में बिके हुए इंसान ही जीवित इंसानों का माँस नोच-नोचकर खा रहे हैं।' गिद्धों के इस संवाद से महामारी के इस हाहाकारी वातावरण का एहसास कराने में सिद्धेश्वर सफल सिद्ध हुए हैं।इसी तरह कोरोना पीड़ित की तकलीफ और आई सी यू वार्ड की भयावहता का चित्रण है डॉक्टर चंद्रेश छतलानी की लघुकथा 'मुझे भी डर लगता है' में। उन्ही की लघुकथा 'स्केलेबल' में कोरोना पीड़ित मृतात्मा के विचार मंथन की लाजवाब कल्पना है।अनिल मकरिया की लघुकथा 'निर्मम सूत्रधार' में कोरोना काल के बाद के दुर्गम हालातों का उल्लेख है। इस रचना में लाखों करोड़ों की आबादी वाले शहरों को वीरान देखने का दुःख और असमर्थता भी शिद्दत से उभरकर आए हैं।

इस महामारी ने सन्देह का ऐसा जहर फैलाया है कि सहारे को तरसते, बुजुर्ग जरूरतमंद को उसका अपना बेटा ही हाथ पकड़ने से, छूने से डरने लगता है ऐसे में वहाँ खड़ा एक हाथ ठेलेवाला, बुजुर्ग को सहारा देता है।संतोष सुपेकर की लघुकथा 'उस सुबह' में यही वर्णित है। इस लघुकथा में जब वृद्ध का पुत्र ठेलेवाले को हाथ धो लेने के लिए ताकीद करता है तो उसका जवाब 'धो लूँगा साब।अब मौत से क्या डरूं? मैं तो रोज कई मौतें मरता हूँ।' सब कुछ 'बंद' के इस समय मे भूख बन्द /समाप्त क्यों नही होती? का यक्ष प्रश्न खड़ा करता है। कांता रॉय

ने 'कलाबाजियाँ' में जमाखोरों की कुत्सित वृत्ति पर करारा प्रहार किया है, आपातकाल में कैसे 'भय की मार्केटिंग' की जाती है और कैसे निचोड़कर अवसर का लाभ उठाया जाता है, बेशर्म से इन तथ्यों पर यह लघुकथा समुचित आक्रोश जताती है। किसी ने अपने जीवनकाल में समाज की लाख सेवा की हो पर यदि इस कोरोना काल मे, इस संदेहवादी दौर में, कोरोना से नही, किसी अन्य कारण से उसकी मृत्यु हो जाए तो कृतध्न समाज उसकी लाश को देखने तक नही आता।कोमल वाधवानी 'प्रेरणा' की लघुकथा 'शंका-कुशंका' में वर्तमान के इस निर्मम सत्य का वर्णन है। राममूरत 'राही' की लघुकथा 'विडम्बना' में महामारी के कारण अपने घर को लौट रहे बेरोजगार श्रमिक की उलझन है कि रास्ते के एक कस्बे में वह अपने प्यासे बच्चे की प्यास क्या शराब से बुझाए क्योंकि पेयजल तो कहीं उपलब्ध नही लेकिन पीने के लिए शराब आसानी से उपलब्ध है।आशागंगा शिरढोणकर की लघुकथा 'अंतिम अवशेषों का वारिस' बहुत मार्मिक लघुकथा है जिसमे मरहूम, कोरोना पीड़ित का पुत्र अपने पिता को पत्र 'लिखकर' उनका अंतिम दर्शन न कर पाने की असमर्थता जाहिर करता है और अंत मे स्वयं को 'आपका लज्जित कुपुत्र' सम्बोधित करता है। लघुकथा की पंक्तियाँ 'आपकी कातर आँखों मे माँ के रिमझिम बरसते नयनों ने शायद अपना भी भविष्य पढ़ डाला था' बहुत कुछ कह देती हैं।अनकहे को दर्शाना भी लघुकथा की एक प्रमुख विशेषता है।इस रचना में कोरोना के कारण अस्पतालों में फैली अव्यवस्था का भी चित्रण अंडरकरंट के रूप में किया गया है।सीमा व्यास की 'चिंता' में ऑन लाईन कक्षा अटेंड करता बच्चा इस 'चिंता' में है कि पहले की तरह टीचर मैदान के पाँच राउंड लगाने की सज़ा कैसे दे पाएँगी क्योंकि क्लास तो घर में ही चल रही है? इस आपदा काल मे दो मुँहे चेहरों को भी लघुकथाकारों ने सफलतापूर्वक अनावृत्त किया है।दिलीप जैन की लघुकथा 'अवसर' के किरदार, कुछ व्यापारी सुबह जमाखोरी की योजना बनाते हैं ताकि संकटकाल में और ज्यादा मुनाफा कमाया जा सके और दिन में मीडिया के सामने प्रधानमंत्री राहत कोष में दान देने का दिखावा कर नाम कमाते हैं।

मिन्नी मिश्रा की लघुकथा 'महाभारत से रामायण' में महामारी से बचने के लिए, शरीर की इम्युनिटी बढ़ाने घर के सदस्यों में फलों के जूस को लेकर चल रही जद्दोजहद रोचक रूप में सामने आती है।कोरोना काल की इन लघुकथाओं में अकेलेपन का दर्द झेलते वृद्धों की पीड़ा भी प्रकट हुई है, ज्योति जैन की लघुकथा 'डिस्टेंस' में जब कोविड (कोरोना) जाँच टीम वृद्ध पति-पत्नी से उनके बच्चों के बारे में पूछती है तो आक्रोशित जवाब मिलता है कि हमारे बच्चों ने तो पहले से ही हमसे डिस्टेंस बना रखा है।

शायद पहली बार ऐसा हुआ है कि लोगों ने अखबार खरीदना ही बंद कर दिया था ये सोचकर कि अखबार को छूने से भी यह महामारी फैलती है। इस विडम्बना, महामारी के कारण अखबार को लेकर पाठकों के मन मे मचे द्वंद और इसके फलस्वरूप बेरोजगार होते अखबार के हॉकर्स पर प्रकाश डालती है सुरेश सौरभ की लघुकथा 'पेपरवाला'। शासन ने कोरोना काल के लॉक डाउन में जनता को हिदायत दी है कि घर मे ही रहें, बाहर न निकलें। इस आदेश का 'ड्रॉ बैक' दर्शाती चेतना भाटी की लघुकथा है 'घर' जिसमे निर्धन, कामवाली महिला मालकिन से पूछती है कि जिस छोटी सी कोठरी में वह छह लोग रहते हैं उसमें शौचालय तक नहीं है। तब चौबीसों घण्टे कैसे रहें उस घर नाम के पिंजरे में? संकटकाल में कारखाना मालिकों ने भी बहुत नुकसान उठाया है उनकी मजबूरी और व्यथा को दिव्या शर्मा की लघुकथा 'हिस्सेदारी' में इन शब्दों से बयाँ किया गया है-' नुकसान में हिस्सेदारी ...सिर्फ मालिक की ...कुएँ की गहराई में डूबती आनंद की आवाज़ अनदेखी मज़बूरियों को ऊपर फेंकने लगी।'

कोरोना के कारण किस तरह परिवार तबाह हो रहे हैं और थोक में आए हुए दुःखों का सामना करती गृहिणी कैसे अपने आँसूओं को रोके हुए है इन मार्मिक तथ्यों पर अंतर करवड़े ने क्या खूब कलम चलाई है' लक्ष्यपूर्ति' में।' पता नही अब कितने अश्रु अपने लक्ष्य तक पहुँचने को प्रयासरत थे।' अंतिम पंक्ति, स्थिति की विकरालता को दर्शाती है। महामारी में अपनाई जा रही सामाजिक दूरियों के बहाने घनश्याम मैथिल 'अमृत' ने 'सोशल डिस्टेंस' में दलित विमर्श को शामिल करते हुए सफाईकर्मी की व्यथा इन शब्दों में व्यक्त की है- 'भैया हमे किसी ने गले नहीं लगाया। हमसे सोशल डिस्टेंसिंग' की इस महामारी का भी हल ढूँढिये भैयाजी कभी। दम तो हमारा भी घुटता है।'

ऐसा नही है कि इस काल की केवल त्रासदियों पर ही लिखा गया हो, दुःखी हालातों से अनायास उपजे, या मनोबल बनाए रखने के लिए आवश्यक बन रहे सकारात्मक, सुखद पलों को भी लघुकथाकारों ने पकड़ा है और इस पर भी प्रचुर मात्रा में लिखा है। मीरा जैन की लघुकथा' कर्तव्य' में ड्यूटी कर रहा पुलिसवाला, द्रवित होकर भूखे व्यक्ति को भोजन उपलब्ध कराता है। डॉक्टर वसुधा गाडगिल की लघुकथा 'लाभ' में कोरोना रिपोर्ट निगेटिव आने पर घर मे फैली खुशियाँ पाठक के अधरों पर भी मुस्कान ला देतीं हैं। इस लघुकथा की अंतिम पंक्ति 'आसमान में छाए बादल सूरज की ओट में दुबक गए थे' रचना को शीर्ष पर ले जाती है। सूर्यकांत नागरजी की लघुकथा 'साझी चिंता' एक ऐसे संवेदनशील व्यक्ति की कहानी है जो कोरोना काल मे लगे प्रतिबंधों के बावजूद पर्यावरण संरक्षण के लिए कटिबद्ध है, और पौधों को पानी देने के उद्देश्य से घर से बाहर निकल पड़ता है। उसे रोकने वाला पुलिस अधिकारी भी उसकी इस सोच से प्रभावित हो जाता है और समझ चुका है कि जहाँ वह लोगों की जान बचा रहा है वहीं वह व्यक्ति भी पर्यावरण बचाकर प्रकृति का संरक्षण कर रहा है। राममूरत 'राही' की लघुकथा 'तीसरा मित्र' का नायक जो कि खुद एक व्यापारी है लागत मूल्य में सामान बेचकर और अवसर का लाभ न उठाकर, दुआ कमाने को ही कमाई मानता है। मृणाल आशुतोष की 'खुशी' में लॉक डाउन में समय काटने का लोकोन्मुखी तरीका बताया गया है। चार मित्रों की ऑन लाईन बातचीत में कथानायक वंचितों को भोजन बनाकर बाँटने में गहन सुख का अनुभव करता है और सबका दिल जीत लेता है। लघुकथा का अंत- 'सुनकर बाकी दोस्तों की चाय थोड़ी कड़वी हो गई थी।' रचना को रोचक बनाता है। संतोष सुपेकर की लघुकथा 'डिस्टेंस में सेंस' के संवेदनशील पड़ोसी, कोरोना काल मे कार्यरत दंपती के अकेले रह रहे बच्चे के घर जाकर, उसका जन्मदिवस मनाकर उसका अकेलापन दूर करते हैं। रचना बताती है कि महामारी भले ही हमे एकाकी करने की कोशिश करे पर संवेदनशील और परोपकारी इंसान सामाजिकता को कभी नही छोड़ सकता। माधव नागदा की लघुकथा 'हाँ, फिर भी' में चिकित्सक और उनका स्टाफ उस कोरोना मरीज का सफल उपचार कर उसके अस्पताल से डिस्चार्ज होने की खुशी मनाते हैं जिसने उन्मादी होकर कभी उन सभी पर प्राणघातक हमला किया था। नागदाजी की ही भावुकता भरी एक अन्य रचना है 'कोरोना से पहले, कोरोना के बाद' जो अस्पताल से ठीक होकर लौटे बेटे-बहू को लेकर वृद्ध पिता की नाउम्मीदी और फिर बेटे बहू के उनके प्रति हृदय परिवर्तन की सुखान्तिका है। इसकी अंतिम पंक्ति 'अब उनका मन दर्पण की तरह साफ और रुई की मानिंद हल्का था।' उल्लेखनीय है। अंजू निगम की लघुकथा 'उऋण' का नायक किन्नरों को हेय दृष्टि से देखता है लेकिन जब महामारी और लॉक डाउन के कारण फाकों मरने की नौबत आ जाती है तो वही किन्नर हीराबाई उसके यहाँ महीने भर का राशन रख जाता है। राजेन्द्र वामन काटदरे ने कोरोना मरीजों का इलाज करते-करते मृत हुए एक चिकित्सक को शहीद का दर्जा देते हुए उसके परिवार के निराशा छोड़कर पुनः उठ खड़े होने, संघर्ष करने का सफल चित्रण 'शहीद' में किया है।

इस तरह हम देखते हैं कि कोरोना काल मे भी हमारे लघुकथाकारों ने कठिन व क्रूर वक्त के सभी सकारात्मक, नकारात्मक पहलूओं को समेटते हुए, बदलते यथार्थ के रचनात्मक स्वरूप को दृष्टिगत रखकर, जीवन के इस सत्य को विभिन्न कोणों से देखते हुए, इस काल से जूझते मानव मन की सम्पूर्ण मनोभूमि को तलाशते हुए ऐसा साहित्य रचा है कि आने वाली पीढ़ियाँ इन लघुकथाओं को पढ़कर और मनन कर न केवल इस समय की विकरालता, भयावहता को महसूस करेंगी वरन दुष्काल पर विजय पाने में जुटे इस सदी के मानव की इच्छाशक्ति को भी स्मरण रखेंगी।

31, सुदामानगर, उज्जैन
मो. 9424816096

मालवा का लघुकथा परिदृश्य
इंदौर के विशेष संदर्भ में

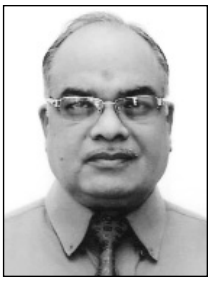

● सतीश राठी

मालवा का लघुकथा भूगोल ऐतिहासिक रूप से बड़े ही सक्रिय और समृद्ध परिदृश्य के रूप में सामने आता है। मालवा क्षेत्र में इंदौर, उज्जैन, धार, महू, देवास, गुना, शाजापुर, आगर मालवा, रतलाम, हरदा आदि कई शहर आते हैं। जब मालवा क्षेत्र के लघुकथा के परिदृश्य का सूक्ष्म अवलोकन करते हैं तो इंदौर और उज्जैन प्रमुख रूप से लघुकथा के कार्यक्षेत्र के रूप में सामने आते हैं। इंदौर के उपनगर महू में श्री अजय वर्मा इस कार्य में संलग्नता के साथ लगे हुए हैं।

यदि इंदौर शहर से बात का प्रारंभ करें तो लघुकथा की लंबी परंपरा इंदौर शहर ने स्थापित की है। वर्ष 1974 में स्वर्गीय डॉक्टर सतीश दुबे के संपादन में 'सिसकता उजास' नाम की पुस्तक का प्रकाशन हुआ। तत्पश्चात वर्ष 1977 में श्री नरेंद्र मौर्य और नर्मदा प्रसाद जी उपाध्याय के संपादन में 'समांतर लघुकथाएँ' हरदा से प्रकाशित हुई। वर्ष 1978 में श्री विक्रम सोनी के संपादन और वेद हिमांशु, सतीश राठी, महेश भंडारी, राजेंद्र पांडेय के उप संपादन में 'लघु आघात' का प्रकाशन हुआ। वर्ष 1986 में लघु आघात का प्रकाशन बंद हो गया। साहित्यिक संस्था क्षितिज ने वर्ष 1983 से 'क्षितिज' पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ किया। यह एक अनियतकालीन पत्रिका रही, जिसका अभी तक निरंतर प्रकाशन हो रहा है।

इंदौर का लघुकथा परिदृश्य इस कारण से भी समृद्ध हुआ क्योंकि यहाँ पर 'वीणा' पत्रिका में डॉ. श्याम सुंदर व्यास के संपादन काल में निरंतर लघुकथाएँ प्रकाशित होती रही। उनका स्वयं का एक संग्रह भी 'कांकर पाथर' के नाम से प्रकाशित हुआ। डॉक्टर सतीश दुबे के कई लघुकथा संग्रह प्रकाशित हुए। अभी उनका देहावसान होने के बाद उनकी 55 प्रेम लघुकथाएँ प्रकाशित हुई हैं। इंदौर की समृद्ध परंपरा में स्वर्गीय हो चुके सर्वश्री निरंजन जमीदार, श्यामसुंदर व्यास, चंद्रशेखर दुबे, सुरेश शर्मा, एन. उन्नी, रमेश अस्थिवर, विक्रम सोनी, रेखा कारड़ा, सतीश दुबे आदि के नाम प्रमुख रहे हैं।

वर्ष 1980 से 2000 के दशक में जिन प्रमुख लघुकथाकारों के द्वारा लघुकथाएँ लिखी गई, उनमें सर्वश्री डॉ. सतीश दुबे, विक्रम सोनी, निरंजन जमीदार, श्याम सुंदर व्यास, नर्मदाप्रसाद उपाध्याय, चंद्रशेखर दुबे, सुरेश शर्मा ,कृष्णा अग्निहोत्री, सतीश राठी, सूर्यकांत नागर, चैतन्य त्रिवेदी, योगेंद्रनाथ शुक्ल, पुरुषोत्तम दुबे, रमेश छाबड़ा अस्थिवर, एन. उन्नी, राजेंद्र पांडेय, जवाहर चौधरी, बृजेश कानूनगो, नंदकिशोर बर्वे, अशोक शर्मा भारती, डॉ. अखिलेश शर्मा, सुरेश बजाज, वेद हिमांशु, प्रताप सिंह सोढ़ी, चेतना भाटी, ज्योति जैन आदि के नाम प्रमुख रहे।

स्वर्गीय डॉक्टर सतीश दुबे का इंदौर को लघुकथा के मानचित्र पर रखने में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उनकी लघुकथा पर कई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। उनके मार्गदर्शन में कई लोगों ने लघुकथा लिखना प्रारंभ किया है। वे इंदौर के लघुकथा गुरु रहे हैं। उन्हें लघुकथाओं के लिए कई सम्मान प्राप्त हुए हैं। आज इंदौर लघुकथा के एक महत्वपूर्ण केंद्र के रूप में प्रसिद्ध है।

वर्ष 1983 में स्थापित संस्था 'क्षितिज' ने प्रारंभिक रूप से लघुकथा के अनियतकालीन प्रकाशन किये, लेकिन वर्ष 2016 से नियमित वार्षिक पत्रिका प्रकाशन के साथ-साथ वर्ष 2018 से अपने अखिल भारतीय वार्षिक आयोजनों से 'क्षितिज' संस्था सर्वत्र चर्चा में है।

लघुकथा को लेकर सतीश राठी के संपादन में लघुकथा वार्षिकी 'क्षितिज' के अतिरिक्त- तीसरा क्षितिज (लघुकथा संकलन), मनोबल (लघुकथा संकलन), 'समक्ष' (पांच लघुकथाकारों की 100 लघुकथाएं) शिखर पर बैठकर (11 लघुकथाकारों की 110 लघुकथाएं) प्रकाशित हुए। 'शब्द साक्षी है' निजी लघुकथा संग्रह प्रकाशित है। उनकी लघुकथाएँ कृति आकृति, क्षिप्रा से गंगा तक (बांग्ला भाषा में अनुदित) साझा संकलनों में शामिल हुई हैं।

उनकी लघुकथाओं का अंग्रेजी, मराठी, बंगला, कन्नड़, पंजाबी, गुजराती, बांग्ला भाषा में अनुवाद हुआ। विविध सम्मानों से सम्मानित होने के साथ-साथ उनकी लघुकथाएँ दो पुस्तकों में (छोटी बड़ी कथाएँ एवं लघुकथा लहरी) मेंगलुर विश्वविद्यालय कर्नाटक के बीए प्रथम वर्ष और बीबीए के पाठ्यक्रम में शामिल हुई।

श्रीमती कृष्णा अग्निहोत्री का लघुकथा संग्रह 'कठे जाना' 2013 में प्रकाशित हुआ। समांतर लघुकथाएँ में भी उनकी लघुकथा शामिल थी।

श्री सूर्यकांत नागर के लघुकथा संग्रह 'विषबीज' एवं 'स्वर्ग में लाल झण्डा' शीर्षक से प्रकाशित हुए हैं। उन्होंने कुछ लघुकथा संकलनों का संपादन एवं पत्रिकाओं का संपादन भी किया। लघुकथा के लिए उन्हें कई सम्मान प्राप्त हुए हैं।

योगेंद्रनाथ शुक्ल का नाम भी लघुकथा के एक महत्वपूर्ण नाम के रूप में सामने आया। उनके दो लघुकथा संग्रह 'शपथ यात्रा' एवं 'लघुकथा का पिटारा' प्रकाशित हुए। इन दोनों का मराठी में अनुवाद हो चुका है। इसके अतिरिक्त 'कथांजलि' मराठी में और 'बदलते पैमाने' उर्दू भाषा में प्रकाशित हुए हैं। उर्दू वाली पुस्तक पाकिस्तान में बहुत लोकप्रिय हुई है। उन्हें लघुकथा के लिए कई सम्मान प्राप्त हो चुके हैं।

चैतन्य त्रिवेदी के दो लघुकथा संग्रह आ चुके हैं। उनका लघुकथा संग्रह 'उल्लास' साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत और सम्मानित हो चुका है। दूसरा लघुकथा संग्रह 'कथा की अफवाह' अभी वर्ष 2019 में प्रकाशित हुआ है। उनका नाम लघुकथा के राष्ट्रीय फलक पर स्थापित है। चैतन्य त्रिवेदी की लघुकथाएँ विभिन्न पाठ्यक्रमों में शामिल हो चुकी हैं।

श्री प्रताप सिंह सोढ़ी लघुकथा के पुराने लेखक है। इनके तीन लघुकथा संग्रह 'शब्द संवाद', 'मेरी प्रिय लघुकथाएँ' तथा 'धुंध के पार' प्रकाशित हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त 'माँ के आसपास' और 'संप्रभ' दो संपादित संकलन है। डॉ. सतीश दुबे की लघुकथाओं के श्रीति राशिनकर द्वारा मराठी अनुवाद का संपादन भी किया है।

स्वर्गीय सुरेश शर्मा का लघुकथा के परिदृश्य में बड़ा महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उनके द्वारा संपादित लघुकथा संग्रह 'कालीमाटी' वर्ष 2007 में, 'बुजुर्ग जीवन की लघुकथाएँ' वर्ष 2010 में प्रकाशित हुआ। वर्ष 2013 में उनका निजी लघुकथा संग्रह 'अंधे बहरे लोग' प्रकाशित हुआ।

डॉ. पुरुषोत्तम दुबे ने लघुकथा लेखन के साथ लघुकथा समालोचना के क्षेत्र में महत्वपूर्ण काम किया है। उनका एक लघुकथा संग्रह 'लघु कल्प' के नाम से प्रकाशित है। वर्ष 2020 में 'छोटे-छोटे सायबान' लघुकथा संग्रह दिल्ली से प्रकाशित हुआ है। समालोचना पर उनके विभिन्न आलेख पड़ाव और पड़ताल की पुस्तक श्रृंखला में शामिल हैं। उन्हें रासबिहारी पांडेय स्मृति लघुकथा सम्मान एवं समालोचना के लिए हरियाणा में लघुकथा गौरव सम्मान प्राप्त हुआ है।

चेतना भाटी पुरानी लघुकथाकार है और उनके तीन लघुकथा संग्रह 'उल्टी गिनती', 'सुनामी सड़क' और 'खारी बूंदें 'प्रकाशित हो चुके हैं।

ज्योति जैन लघुकथा की एक महत्वपूर्ण लेखिका हैं। उनके 'जलतरंग', 'निन्यानबे का फेर' और 'बिजूका' तीन लघुकथा संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। जलतरंग का बांग्ला एवं अंग्रेजी भाषा में अनुवाद हो चुका है, तथा कुछ लघुकथाएँ मराठी में अनुवादित हो चुकी हैं। उन्हें विविध सम्मान प्राप्त हुए हैं और प्रमुख रूप से भारतीय वांग्मय पीठ कोलकाता द्वारा-गुरुदेव रविन्द्रनाथ ठाकुर सारस्वत सम्मान (जलतरंग व बिजूका) भी प्राप्त हुआ है।

श्री बृजेश कानूनगो का नाम भी लघुकथा का चर्चित नाम है और इनका एक लघुकथा संग्रह 'रिंगटोन' शीर्षक से वर्ष 2014 में प्रकाशित हो चुका है।

श्री जवाहर चौधरी के 'सारी जगदीश्वर' व्यंग्य लघुकथा संग्रह की भी चर्चा हुई है।

श्री अशोक शर्मा भारती लघुकथा के क्षेत्र में इंदौर का एक और महत्वपूर्ण नाम है इनके द्वारा संपादित लघुकथा संग्रह 'स्मृतिका' चर्चा में रहा।

लघुकथा के क्षेत्र में श्री नंदकिशोर बर्वे का नाम भी बहुत चर्चित रहा है। उन्होंने न सिर्फ लघुकथाएँ लिखी हैं, अपितु संस्था 'पथिक' के माध्यम से लघुकथाओं का नाट्य मंचन भी किया है। वर्ष 2018 के 'क्षितिज' के कार्यक्रम में उनके समूह द्वारा 18 लघुकथाकारों की लघुकथाओं का नाट्य मंचन किया गया था, जिसे बहुत सराहना प्राप्त हुई थी। इसी आयोजन में श्री किशोर बागरे एवं अनघा जोगलेकर के लघुकथा पोस्टर की प्रदर्शनी भी क्षितिज संस्था द्वारा आयोजित की गई थी।

डॉ. वसुधा गाडगिल का लघुकथा संग्रह 'साझा मन' एवं अंतरा करवड़े के साथ संपादित साझा संकलन 'कृति आकृति' बड़ी चर्चा में हैं। श्री रामनिवास मानव हरियाणा के द्वारा उन्हें लघुकथा गौरव सम्मान से सम्मानित किया गया है। अंतरा करवड़े आज के समय की महत्वपूर्ण लघुकथाकार है। 'देन उसकी हमारे लिए' उनका लघुकथा संग्रह है। लघुकथाओं के मराठी अनुवाद में भी उन्होंने कार्य किया है। मराठी भाषा में अनुवाद पत्रिका 'भाषा सखी' का संपादन करती हैं तथा लघुकथाओं के मराठी अनुवाद में संलग्न है। अंतरा करवड़े की अनेक लघुकथाओं का अभिवाचन (वाचिक अभिनय/वाणी अभिनय) प्रस्तुतिकरण आकाशवाणी के ख्यातनाम कलाकारों द्वारा अनेक रंगमंचीय गतिविधियों के दौरान किया गया है। आपकी अनेक लघुकथाओं का रुपान्तरण रेडियो नाटक के रूप में किया गया है जिसे रेडियो वेरितास एशिया और वाटिकन रेडियो जैसे अंतर्राष्ट्रीय मंचों द्वारा प्रसारित किया गया है। इस वर्ष हरियाणा में उन्हें लघुकथा गौरव सम्मान प्राप्त हुआ है।

सीमा व्यास का एक लघुकथा संग्रह 'पोटली' शीर्षक से आ चुका है। उनकी लघुकथाओं का मंचन भी हुआ है तथा उनकी लघुकथाओं पर फिल्म भी बनी है।

राममूरत राही लघुकथा के क्षेत्र में बड़ी ही सूक्ष्म संवेदना के साथ लघुकथा रचने वाले कथाकार हैं। उनके दो लघुकथा संग्रह 'अंतहीन रिश्ते' और 'भूख से भरा पेट' इस वर्ष चर्चा में रहे हैं। क्षितिज संस्था ने भी इन लघुकथाकारों को विभिन्न सम्मानों से सम्मानित किया है।

श्री सदाशिव कौतुक का एक लघुकथा संग्रह प्रकाशित हो चुका है तथा मुंबई के फिल्मकार श्री राजेश राठी उनकी दो लघुकथाओं पर लघु फिल्मों का निर्माण भी कर चुके हैं। इनके अतिरिक्त डॉ. अंजुल कंसल का 'कथा शतक', डॉ. सुनीता श्रीवास्तव का 'आर्यन', मंजुला भूतड़ा का 'सागर सीपी', चंद्रा सायता का 'माटी कहे कुम्हार से' शीर्षक के लघुकथा संग्रह प्रकाशित हुए हैं।

वर्ष 2000 के पश्चात इंदौर के लघुकथा परिदृश्य में बहुत सारे नवीन लेखक शामिल हुए हैं जिनमें प्रमुख रूप से कांतिलाल ठाकरे, राकेश शर्मा, सीमा व्यास, ललित समतानी, वसुधा गाडगिल, चंद्रा सायता, पदमा राजेंद्र, गरिमा दुबे, मंजुला भूतड़ा, निरुपमा नागर, दीपा व्यास, मनोज सेवलकर, कविता वर्मा, अंजू निगम, विनीता शर्मा, शारदा गुप्ता, नुपूर प्रणय वागले, सुषमा दुबे, दीपक गिरकर, देवेंद्र सिंह सिसोदिया, देवेंद्र होलकर, सदाशिव कौतुक, गजेंद्र आचार्य, आशा बडनेरे, डॉ. रमेश चंद्र, वंदना पुणतांबेकर, हरेराम वाजपेई, सुषमा दुबे, मुकेश तिवारी, दीपा व्यास, सुषमा व्यास, विजय सिंह चौहान, शोभा जैन आदि इंदौर के प्रमुख लघुकथाकारों के रूप में जाने जाते हैं। इंदौर से विभिन्न साहित्य संघ के द्वारा कई संपादित लघुकथा संग्रह भी प्रकाशित हो चुके हैं।

स्व. डॉ. सतीश दुबे द्वारा गठित साहित्यिक संस्था 'सृजन संवाद' नए तथा उभरते लघुकथाकारों के लिए प्राथमिक पाठशाला रही है। आज के कुछ स्थापित लघुकथाकार भी इस पाठशाला के विद्यार्थी रहे हैं। लघुकथा विधा में रुचि रखने वालों में संस्था सृजन संवाद ने न केवल लघुकथा के संस्कारों को रोपने का कार्य किया बल्कि उन्हें सींचा भी है। वरिष्ठ साहित्यकार श्री कान्तिलाल ठाकरे, श्री ललित मावर, श्री राज केसरवानी, श्रीमती ललिता रावल, लघुकथाकार श्री मनोज सेवलकर आदि की कृतियों के विमोचन कार्यक्रम एवं लघुकथा की एक कार्यशाला भीआयोजित की है।

डॉ. सतीश दुबे की प्रिय विधा 'लघुकथा' के लिए किसी समय में साहित्य संगम संस्था के द्वारा भी बहुत कार्य किया गया है। बाद में यह संस्था बंद हो गई। विचार प्रवाह साहित्य मंच, इंदौर ने देश के 21 लघुकथाकारों की 100 से अधिक लघुकथाओं का संग्रह 'प्रवाह' वर्ष 2019 में निकाला था। इसका संपादन श्रीमती सुषमा दुबे ने किया

है। इसके अलावा विचार प्रवाह साहित्य मंच ने वर्ष 2021 में अखिल भारतीय स्तर पर लघुकथा प्रतियोगिता का आयोजन किया। इन्दौर शहर में डॉ. अर्पण जैन के निर्देशन में मातृभाषा उन्नयन संस्थान भी बहुत सक्रिय है। लघुकथा पर इस संस्था ने महत्वपूर्ण कार्यक्रम आयोजित किये हैं।

इंदौर के नजदीक उपनगर महू के श्री अजय वर्मा जी का लघुकथा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान है। वे अपने पिता सुपरिचित साहित्यकार स्व. कमलचंद वर्मा की स्मृति में लघुकथा प्रतियोगिता आयोजित करते हैं। लघुकथा लेखकों का सम्मान करते रहते हैं, यही नहीं लघुकथा से संबंधित 'कथा दर्पण' नाम से वाट्सएप समूह भी चलाते हैं। उन्होंने दो लघुकथा संकलन 'कथा -दर्पण आगाज़' (2021) एवं 'कथा-दर्पण रत्न' (2022) निकाला है। वर्ष 2010 में उनके पिता स्व. कमलचंद वर्मा का एक लघुकथा संग्रह 'कथा संजीवनी' प्रकाशित हुआ था। महू की लेखिका नीता श्रीवास्तव का लघुकथा संग्रह 'आईना' वर्ष 2019 में प्रकाशित हुआ।

इंदौर शहर के अतिरिक्त मालवा में उज्जैन शहर का भी लघुकथा के क्षेत्र में बड़ा महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उज्जैन शहर से सन्तोष सुपेकर का नाम सर्वाधिक चर्चित रहा है। लघुकथा के उनके पाँच संग्रह अभी तक प्रकाशित हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त उनका कई भाषा में अनुवाद हो चुका है। लघुकथा के कई सम्मान उन्हें प्राप्त हो चुके हैं और अपनी संस्था 'सरल काव्यांजलि' के माध्यम से लघुकथा के कार्यक्रम निरंतर आयोजित करते रहते हैं।

क्षितिज लघुकथा सम्मान परंपरा

लघुकथा विधा के लिए वर्ष 1983 से सतत कार्यरत संस्था क्षितिज, इंदौर के द्वारा वर्ष 2018 में एक अखिल भारतीय लघुकथाकार सम्मेलन इंदौर शहर में आयोजित किया गया। इस सम्मेलन की विशेषता यह थी कि इसमें लघुकथा के लिए समर्पित लघुकथाकारों का सम्मान किया गया था। वर्ष 2018 के क्षितिज लघुकथा शिखर सम्मान श्री बलराम अग्रवाल दिल्ली, क्षितिज लघुकथा समालोचना सम्मान श्री बी.एल. आच्छा चेन्नई, क्षितिज लघुकथा नवलेखन सम्मान श्री कपिल शास्त्री भोपाल को दिया गया। प्रादेशिक प्रथम क्षितिज लघुकथा समग्र सम्मान 2018 श्री सन्तोष सुपेकर उज्जैन को दिया गया। इस आयोजन में सर्वश्री बलराम, सतीश राज पुष्करणा, भागीरथ परिहार, अशोक भाटिया, सुभाष नीरव, योगराज प्रभाकर को भी सम्मानित किया गया। श्री रविंद्र व्यास को क्षितिज साहित्यिक पत्रकारिता सम्मान से सम्मानित किया गया।

इस आयोजन की निरंतरता वर्ष 2019 में बनी रही तथा उस वर्ष का शिखर सम्मान श्री सुकेश साहनी को प्रदान किया गया नवलेखन सम्मान कुणाल शर्मा को, समालोचना सम्मान माधव नागदा को प्रदान किया गया। क्षितिज लघुकथा प्रादेशिक समग्र सम्मान 2019 श्रीमती कांता राय भोपाल को दिया गया। कोरोना के कारण वर्ष 2020 में कार्यक्रम नहीं हो पाया लेकिन वर्ष 2021 में कार्यक्रम आयोजित कर दो वर्ष के सम्मान एक साथ प्रदान किए गए। डॉ. कमल चोपड़ा दिल्ली को 2020 का शिखर सम्मान एवं श्री राम कुमार घोटड को 2021 का शिखर सम्मान, श्री पुरुषोत्तम दुबे को 2021 का समालोचना सम्मान, श्रीमती दिव्या राकेश शर्मा को 2020 एवं श्रीमती अंजू निगम को 2021 का नवलेखन सम्मान दिया गया। श्रीमती ज्योति जैन को 2020 का एवं श्री योगेंद्रनाथ शुक्ल को वर्ष 2021 का समग्र सम्मान प्रदान किया गया। इस वर्ष में मालवा की परंपरा में वरिष्ठ साहित्यकारों का सम्मान भी किया गया। श्री सूर्यकांत नागर, श्री शरद पगारे को समग्र जीवन साहित्यिक अवदान सम्मान, श्री नरहरि पटेल को मालव गौरव सम्मान से सम्मानित किया गया।

श्री सत्यनारायण व्यास को क्षितिज समग्र जीवन साहित्यिक अवदान सम्मान, डॉ. विकास दवे को साहित्य गौरव सम्मान, डॉ. अर्पण जैन को भाषा सारथी सम्मान प्रदान किए गए। श्री राज नारायण बोहरे, नंदकिशोर बर्वे, चरण सिंह अमी, अंतरा करवड़े, डॉ. वसुधा गाडगिल को भी विशिष्ट सम्मानों से सम्मानित किया गया। चेन्नई से प्रकाशित होने वाली पत्रिका पुष्पांजलि के संपादक श्री गोविंद मूंदड़ा जी को क्षितिज साहित्यिक पत्रकारिता सम्मान 2021 से सम्मानित किया गया।

उज्जैन शहर से मीरा जैन चर्चित लघुकथा लेखिका के रूप में है जिनकी लघुकथाएँ निरंतर प्रकाशित होती रहती हैं। उज्जैन शहर से निकलने वाली 'समावर्तन' पत्रिका लघुकथा को अच्छे तरीके से प्रकाशित करती है। पिलकेंद्र अरोरा, दिलीप जैन, प्रभाकर शर्मा, वाणी दवे, श्रीराम दवे उज्जैन के कुछ चर्चित नाम हैं, जो लघुकथा के लिए काम कर रहे हैं।

वर्ष 1981 में स्वर्गीय राजेंद्र सक्सेना के संपादन में एक लघुकथा संग्रह का प्रकाशन हुआ था। बाद में श्री राम दवे के संपादन में एक लघुकथा फोल्डर 'भूख के डर से' वर्ष 1990 में प्रकाशित हुआ। डॉ. शैलेंद्र पाराशर के संपादन में 'सरोकार' वर्ष 1996 में प्रकाशित किया गया। अपनी शारीरिक अपंगता के बावजूद स्वर्गीय अरविंद नीमा ने लघुकथा के क्षेत्र में काम किया है और उनका लघुकथा संग्रह 'गागर में सागर ' प्रकाशित हुआ है। वर्ष 2002 में प्रभाकर शर्मा एवं स्वर्गीय सरस निर्मोही के संपादन में भी लघुकथा संकलन 'सागर के मोती 'प्रकाशित हुआ है। डॉक्टर शैलेंद्र कुमार शर्मा ने विक्रम विश्वविद्यालय में लघुकथा पर शोध कार्य करवाए हैं। सतीश राठी के ऊपर भी एक शोध कार्य एम फिल् में भारती लालवानी के द्वारा वर्ष 2003 में प्रस्तुत किया जा चुका है। विक्रम यूनिवर्सिटी से मनीषा पुरोहित ने भी लघुकथा पर शोध प्रबंध पीएचडी के लिए प्रस्तुत किया है।

बैंककर्मियों की साहित्यिक संस्था 'प्राची' ने सन् 2001-2002 के दरम्यान उज्जैन में लघुकथा गोष्ठियाँ आयोजित की थीं। इसी प्रकार श्री जगदीश तोमर के निर्देशन में प्रेमचंद सृजन पीठ, उज्जैन ने भी लघुकथा गोष्ठियाँ आयोजित की थीं। बाद के वर्षों में विभिन्न लघुकथाकारों के संग्रह/संकलन प्रकाशित हुए हैं।

श्रीमती मीरा जैन का 'मीरा जैन की सौ लघुकथाएँ' वर्ष 2003 में, सतीश राठी के सम्पादन में सन्तोष सुपेकर और राजेंद्र नागर 'निरन्तर' का संयुक्त लघुकथा संकलन 'साथ चलते हुए' वर्ष 2004 में, सन्तोष सुपेकर का 'हाशिये का आदमी' वर्ष 2007 में, राधेश्याम पाठक 'उत्तम' का संग्रह 'पहचान' वर्ष 2008 में तथा मालवी बोली में लघुकथा संग्रह 'नी तीन में, नी तेरा में', वर्ष 2009 में मोहम्मद आरिफ का 'अर्थ के आँसू' प्रकाशित हुआ। इसी वर्ष राधेश्याम पाठक 'उत्तम' का संग्रह 'बात करना बेकार है' प्रकाशित हुआ। सन्तोष सुपेकर का 'बन्द आँखों का समाज' वर्ष 2010 में प्रकाशित हुआ। मोहम्मद आरिफ का 'गांधीगिरी' लघुकथा संग्रह भी प्रकाशित हुआ।

वर्ष 2011 में 'शब्द प्रवाह' साहित्यिक संस्था द्वारा 198 लघुकथाकारों की रचनाओं से युक्त लघुकथा विशेषांक संदीप 'सृजन' और कमलेश व्यास 'कमल' के सम्पादन में प्रकाशित किया गया। वर्ष 2011 में ही राजेंद्र नागर 'निरन्तर' का 'खूंटी पर लटका सच' प्रकाशित हुआ। वर्ष 2012 में प्रेमचंद सृजनपीठ, उज्जैन द्वारा प्रोफेसर बी. एल. आच्छा के सम्पादन में देशभर के 229 लघुकथाकारों का विशाल 242 पृष्ठों का लघुकथा संकलन 'संवाद सृजन' प्रकाशित हुआ। वर्ष 2012 में ही डाक्टर संदीप नाड़कर्णी के संकलन 'नौ दो ग्यारह' में 11 लघुकथाएँ संकलित थी। इसी वर्ष राधेश्याम पाठक 'उत्तम' का संग्रह 'पहचान' प्रकाशित हुआ।

वर्ष 2013 में सन्तोष सुपेकर का लघुकथा संग्रह 'भ्रम के बाज़ार में' प्रकाशित हुआ जिसमे 153 लघुकथाएँ थी। वर्ष 2013 में ही सन्तोष सुपेकर के सम्पादन में राजेंद्र देवधरे 'दर्पण' और राधेश्याम पाठक 'उत्तम' की लघुकथाओं का फोल्डर 'शब्द सफर के साथी' प्रकाशित हुआ। वर्ष 2013 में कोमल वाधवानी 'प्रेरणा' का संग्रह 'नयन नीर' एवं वर्ष 2021 में लघुकथा संग्रह 'रास्ते और भी हैं' प्रकाशित हुए। उल्लेखनीय है कि 'प्रेरणा' जी दृष्टिबाधित रचनाकार हैं। 'बंद आँखों का समाज' (सन्तोष सुपेकर) का मराठी संस्करण 'डोलस पण अन्ध समाज' (अनुवादक श्रीमती आरती कुलकर्णी) भी 2013 में निकला। वर्ष 2015 मे 'प्रेरणाजी' का दूसरा लघुकथा संग्रह 'कदम कदम पर' निकला। वर्ष 2016 में वाणी दवे का 'अस्थायी चारदीवारी', कोमल वाधवानी 'प्रेरणा' का 'यादों का दस्तावेज', मीरा जैन का 'सम्यक लघुकथाएँ' लघुकथा संग्रह प्रकाशित हुए। वर्ष 2017 में सन्तोष सुपेकर का चौथा लघुकथा संग्रह 'हँसी की चीखें' प्रकाशित हुआ। 2018 में डॉ. वन्दना गुप्ता के संकलन 'बर्फ में दबी आग' में कुछ लघुकथाएँ सकलित थीं। 2019 में मीरा जैन का 'मानव मीत लघुकथाएँ' प्रकाशित हुआ। वर्ष 2020 में सन्तोष सुपेकर का पाँचवा लघुकथा संग्रह 'सातवें पन्ने की खबर' प्रकाशित हुआ जिसमें 112 लघुकथाएँ संकलित हैं।

वर्ष 2021 में उज्जैन के सन्तोष सुपेकर और इंदौर के राममूरत 'राही' के सम्पादन में, देश का पहला, अनाथ जीवन पर आधारित लघुकथा संकलन 'अनाथ जीवन का

दर्द' अपना प्रकाशन भोपाल के सहयोग से राघव प्रकाशन इंदौर के द्वारा प्रकाशित हुआ। वर्ष 2021 में उज्जैन के सन्तोष सुपेकर के सम्पादन, संयोजन में लघुकथा साक्षात्कार का संकलन 'उत्कण्ठा के चलते' एच.आई. पब्लिकेशन, उज्जैन से प्रकाशित हुआ जिसमें लघुकथा से जुड़े मध्यप्रदेश के सात लघुकथाकारों /समीक्षकों के साथ ही तीन अन्य विधाओं से जुड़े और एक सामान्य पाठक से भी लघुकथा को लेकर प्रश्न पूछे गए थे। 2021 में सरल काव्यांजलि द्वारा मृणाल आशुतोष को भी डिजिटल सम्मान प्रदान किया गया था। सन्तोष सुपेकर की दो लघुकथाएँ महाराष्ट्र की दसवीं कक्षा के हिंदी पाठ्यक्रम में सम्मिलित है।

वर्ष 2021 में ही डॉक्टर सन्दीप नाडकर्णी का लघुकथा संग्रह 'हम हिंदुस्तानी' प्रकाशित हुआ जिसमें 51 लघुकथाएँ हैं। वर्ष 2021 में ही रामचंद्र धर्मदासानी का लघुकथा संग्रह 'रेतीली प्रतिध्वनि' प्रकाशित हुआ।

इनके अलावा संस्था 'सरल काव्यांजलि, उज्जैन' द्वारा वर्ष 2018 एवं 2019 में समय-समय पर लघुकथा कार्यशालाएँ आयोजित की गईं जिसमें डाक्टर उमेश महादोषी, श्यामसुंदर अग्रवाल, डाक्टर बलराम अग्रवाल, जगदीश राय कुलारियाँ, माधव नागदा, सतीश राठी, बी. एल. आच्छा, रामयतन यादव ,कान्ता रॉय जैसी लघुकथा जगत की ख्यात हस्तियों ने शिरकत की। सरल काव्यांजलि संस्था ने 2020 के हिन्दी दिवस, 14 सितंबर से देश के ख्यात लघुकथाकारों को सम्मानित करने का निश्चय किया। 2020 में सूर्यकान्त नागर, सतीश राठी, कान्ता रॉय और 2021 में योगराज प्रभाकर, डॉक्टर उमेश महादोषी और राममूरत 'राही' को डिजिटल सम्मान प्रदान किये गए। शहर के साहित्यकार सन्तोष सुपेकर ने अनेक रचनाकारों की लघुकथाओं का अंग्रेजी अनुवाद भी किया है जो प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में छपता रहा है। कनाडा के श्री कुसुम ज्ञवाली और नेपाल की श्रीमती रचना शर्मा ने सुपेकर की लघुकथाओं का नेपाली भाषा मे अभिनयात्मक वाचन भी किया है। सुपेकर ने लघुकथा और उससे सम्बन्धित आलेखों को पाठ्यक्रमों में शामिल करने हेतु केंद्र और राज्य सरकारों को लगातार पत्र भी लिखे हैं। सर्वश्री सतीश राठी, राजेन्द्र नागर 'निरन्तर' और सन्तोष सुपेकर की 20-20 लघुकथाओं का अनुवाद बांग्ला भाषा में हो चुका है।

विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन में डाक्टर शैलेन्द्र कुमार शर्मा के निदेशन में कुमारी भारती ललवानी द्वारा 2003 में 'लघुकथा परम्परा में सतीश राठी का योगदान' विषय पर एम. फिल. स्तर का शोधकार्य हुआ। इसी प्रकार 'मीरा जैन की लघुकथाओं का अनुशीलन' विषय पर प्रशांत कुशवाहा ने डाक्टर गीता नायक के निदेशन में विक्रम विश्वविद्यालय में शोध प्रस्तुत किया। यहीं पर डॉक्टर धर्मेंद्र वर्मा ने लघुकथाकार स्व. चन्द्रशेखर दुबे के साहित्य पर शोध किया। डॉ. सतीश दुबे पर आगर के डॉक्टर पी.एन. फागना ने 2009 में 'मध्यप्रदेश की लघुकथा परम्परा में डॉ सतीश दुबे का योगदान' विषय पर विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन में शोध कार्य किया है। इंदौर लघुकथा जगत के प्रमुख हस्ताक्षर श्री विक्रम सोनी भी अपने अंतिम समय में उज्जैन से सम्बद्ध रहे हैं। संस्था 'सरल काव्यांजलि' ने वर्ष 2013 में उनके निवास पर जाकर श्री सोनी का सम्मान किया था। उज्जैन के ही श्री आशीष जौहरी, आशागंगा शिरढोणकर, योगेंद्र माथुर, श्रद्धा गुप्ता, आशीष जौहरी ने भी कई लघुकथाएँ लिखी हैं। इसी प्रकार सतीश राठी और श्याम गोविंद ने भी उज्जैन में रहकर लघुकथा क्षेत्र में काफी सृजन किया है। उज्जैन जिले के तराना से डाक्टर इसाक 'अश्क' और श्री सुरेश शर्मा (अब दोनों स्वर्गीय) के संयुक्त सम्पादन में 'समांतर' पत्रिका का लघुकथा विशेषांक निकला था। उज्जैन से संबंधित जानकारी के लिए मुझे श्री सन्तोष सुपेकर का सक्रिय जानकारी पूर्ण योगदान प्राप्त हुआ है, जिसके लिए मैं उनका आभारी हूं।

इस प्रकार मालवा का लघुकथा परिदृश्य मूलत इंदौर और उज्जैन शहर में सिमटा हुआ है। अन्य शहरों का आंशिक हस्तक्षेप प्रतीत होता है, पर पूरे मालवा में अधिकार के साथ यह दो शहर लघुकथा की कर्मभूमि के रूप में विख्यात हो गए हैं। इंदौर के साथ उसकी जो सुदीर्घ परंपरा चली आ रही है, उसने यहाँ के लघुकथा जगत को बहुत समृद्धि प्रदान की है। इस समृद्धि को बरकरार रखते हुए क्षितिज संस्था अपने वार्षिक आयोजनों के माध्यम से लघुकथा की सशक्त झंडा बरदारी इंदौर शहर से कर रही है और सारे देश में इंदौर शहर का नाम रोशन कर रही है।

संपर्क :- आर-451 महालक्ष्मी नगर, इंदौर 452010
मोबाइल 9425067204

भाषा, शिल्प, शैली और सौंदर्य बोध की पड़ताल

(क्षितिज संस्था इन्दौर के सदस्य लघुकथाकारों की लघुकथाओं में...)

● डॉ. पुरुषोत्तम दुबे

लघुकथा का आंतरिक सौंदर्य लघुकथा में निहित अंतःवस्तु पर आश्रित है जबकि लघुकथा का बाहरी सौन्दर्य अन्तःवस्तु को रचनात्मकता के परिधान पहनाने वाली भाषा, शिल्प, शैली और सौन्दर्य बोध पर अवलम्बित है। लघुकथा यदि कथा की आत्मा है तो लघुकथा के शरीर के अवयवों में भाषा, शिल्प, शैली और सौंदर्य बोध महत्वपूर्ण कारक है। कोई मनिहार या चूड़िहरा चूड़ियां बनाने में उसकी कलात्मक कारीगरी को व्यावसायिक सोच के आधार पर प्रवृत्त करता है ठीक वैसे ही एक सफल और पाठकीय सोच में उतर आया डूबा हुआ लघुकथाकार अपनी लघुकथा को सर्जनात्मक मुखरता देने में लघुकथा में भाषा, शिल्प, शैली और सौंदर्य बोध के प्रयोजन सिद्ध करता है।

क्षितिज संस्था इंदौर के सदस्य लघुकथाकारों की लघुकथाओं का भाषा, शिल्प, शैली और सौंदर्य बोध के आधार पर अनुशीलन करने से पूर्व संक्षेप में यह जान लें कि लघुकथा में भाषा, शिल्प, शैली और सौंदर्य बोध का क्या महत्व है -

भाषा और लघुकथा एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। भाषा है तो लघुकथा है भाषा के माध्यम से अपने अन्तस की अनुभूति को अभिव्यक्ति में ढालने वाली कला ही लघुकथा है। भाषा वैज्ञानिक लेखन में भाषा अनुशासन की बात करते हैं जबकि लघुकथाकार किसी भी भाषाई अनुशासन के परे शब्दों के जोड़-तोड़ के जादू से पाठकों के दिलों में उतर जाता है।

शिल्प का शाब्दिक अर्थ है निर्माण। लघुकथा के संदर्भ में शिल्प की दृष्टि से मूल्यांकन का बड़ा महत्व है। शिल्प के अंतर्गत कथावस्तु, चरित्र-चित्रण, सँवाद, देश-काल भाषा-शैली तथा उद्देश्य नामक छः महत्वपूर्ण बिंदुओं की चर्चा की जाती है। लघुकथा की प्रस्तुति, ढंग, यानी लघुकथा को प्रकट करने का तरीका, शैली कहीं जाती है। लघुकथा में एक ही चीज को अलग-अलग ढंग से प्रयोग करने से लघुकथा रोचक और भाषा में 'रस' पैदा हो जाता है। शैली शब्द अंग्रेजी के स्टाइल का अनुवाद है। अंतःवस्तु का कलात्मक विवेचन ही लघुकथा के सौंदर्य पक्ष को सामने लाता है

लघुकथाएँ सम्पूर्ण समाज के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक परिदृश्य की सम्पूर्ण जानकारी देती हैं। अतः जो लघुकथाएँ आम आदमी के संघर्ष में सहायक है तो वही लघुकथाओं का मनोरम सौंदर्य है।

वर्तमान में जहां स्वच्छता के अर्थ में इंदौर शहर चार बार विजेता होकर भारतवर्ष में चर्चित है, ठीक इसी तरह इन्दौर शहर में बहुतायत में लघुकथाकार लघुकथा जगत में नामचीन होकर निरन्तर लघुकथाएँ लिख रहे हैं। इसी प्रकार इंदौर में अनेकानेक साहित्य संस्थाएं सुचारू रूप से चल रही हैं। सन् 1983 से साहित्य क्षेत्र में विशेषकर

लघुकथा प्रकाशन के तारतम्य में क्षितिज संस्था के संस्थापक एवं लघुकथाकार सतीश राठी के संपादकत्व में अद्यतन प्रकाशित हो रही पत्रिका 'क्षितिज' अपने मूल उद्देश्यों का अनुगमन करती हुई लोकप्रियता के उच्चतम प्राप्तांक प्राप्त कर वरीयता प्राप्त हुई है।

इंदौर शहर की अनेकानेक साहित्यिक प्रतिभाएं 'क्षितिज' संस्था की सदस्यता हासिल कर समेकित रूप में लघुकथा विधा में निरंतर सृजनरत है। यहाँ प्रस्तुत है क्षितिज संस्था से सदस्य के रूप में जुड़े हुए लघुकथाकारों की लघुकथाओं का भाषा, शिल्प, शैली और सौंदर्य बोध के आधार पर तात्विक विश्लेषण।

लघुकथाकार अंतरा करवड़े की लघुकथा 'लहर' सिम्मंड फ्राइड द्वारा विकसित कुछ मनोवैज्ञानिक विचारों का समुच्चय है। प्रस्तुत लघुकथा लहर में मानव की मानसिक क्रियाओं का प्रस्तुतीकरण मनोविश्लेषण के आधार से व्यक्त किया गया है। अंतरा करवड़े ने लघुकथा 'लहर' का ताना-बाना वर्तमान में व्याप्त संघन भौतिकवाद की दलदल में गले गले तक उतर चुके हैं। इससे पराजित मानव की मनःस्थिति को विमोचित करने में बना है जो जिजीविषा के सवालों से जँकड़ा होकर उसके विचारों में उठने वाले तमाम प्रश्नों का निदान चाहता है। संपूर्ण लघुकथा की संरचना ऐसी यथार्थपरक भाषा में की गई है, जो ना केवल लघुकथा का स्पेस कव्हर करती है प्रत्युत जिसमें शिल्प प्रयोग की वाचलता, पात्रों की स्थिति, उनके बीच घटने वाले संवादों का सौष्ठव तथा लघुकथा की कथावस्तु का उन्मेष स्पष्ट नजर आता है। जिंदगी की हड़बड़ाहट में असंयत और नेराश्म से आप्लावित होकर टूट चुके हताश मनुष्य को समुद्र के समक्ष ले जाकर लघुकथाकार ने आत्मकुण्ठाओं की लकीर पर खड़े व्यक्ति को बोध कराया है कि ''कितना तूफानी विचलन अपने भीतर उतारे हुए भी समुद्र की सहनशीलता समाई, काबिलियत, योग्यता और गंभीरता प्रत्यक्ष रूप में विपरीत परिस्थिति में जीवन को जीने वालों को कितना संबल प्रदान करती है। लघुकथा के अंत में सौंदर्य बोध का समीकरण उस घड़ी सार्थक सिद्ध होता है जब लघुकथा का पात्र खारे समुद्र के तट पर अपने मन में व्याप्त जीवन को मिले तमाम त्रासद कारकों को आंसुओं के खारेपन के जरिए बहाकर आगे के जीवन जीने की दिशा पकड़ लेता है।

संस्था के संस्थापक अध्यक्ष एवं लघुकथाकार सतीश राठी की लघुकथा 'जिस्मों का तिलिस्म' का अवगाहन करें तो प्रस्तुत लघुकथा प्रतीकों के सलीब पर लटकी ऐसी लघुकथा है जो व्यवस्था के कान उमेठती हुई उस सत्य को बाहर लाती है। जिसमें झूठा आश्वासन दुर्गन्ध पूर्ण होकर आम आदमी की जिजीविषा के साथ खिलवाड़ कर रहा होता है। राशन की बंद दुकान के खुलने की उम्मीद में भूख के मारे पेट से पिचके हुए उपभोक्ता दुकान के आगे कतारबद्ध खड़े हैं। राशन की दुकान खोलने का आश्वासन ही उनके पैरों की ताकत बना हुआ है। जिसके बूते लंबे समय से खड़े होकर दुकान खोलने की प्रतीक्षा में है। आश्वासनों के हवाई हमले उपभोक्ताओं में ना तो इंकलाब पैदा होने देते है, ना उनकी जुबानों से विद्रोह की आवाज खोलने देते हैं। इसी विषम घड़ी में नेतृत्व नदारद है। आश्वासनों की आड़ में झूठे दिलासे देती दुकान बंद है लेकिन दूसरी तरफ लोकतांत्रिक व्यवस्था का मनोरम रूप सवारने में उपभोक्ताओं का नंपुसक आक्रोश इतना अनुशासन ओढ़े हुए हैं कि कोई आगे बढ़कर दुकान का ताला नहीं तोड़कर अपने शिष्ट कर्तव्य के आगे नतमस्तक बना रहता है। प्रस्तुत लघुकथा 'जिस्मों का तिलिस्म' अपने सृजनात्मक कलेवर में संक्षिप्त होकर अर्थ सम्पन्न भाषा के माध्यम से कथ्य का स्पष्टीकरण देती हुई पाठकों के रू-ब-रू होती है। ''नाक के नीचे बोलने के लिए कोई स्थान नहीं'' तथा ''जिस्मों के दोनों हाथ गायब थे'' इन अनूठे शिल्प प्रयोगों से लघुकथाकार ने लघुकथा के कथ्य को प्राणवान बनाया है। वस्तुतः लघुकथा में शिल्प प्रयोग कथा के बीच व्यवधान बनकर उपस्थित नहीं हुआ है प्रत्युत कथा में विलीन होकर कथा के कथ्य के सौन्दर्य को द्विगुणीत करता है। धैर्य और उदात्त मन से लघुकथा लिखने वाली लघुकथाकार वसुधा गाडगिल की लघुकथा 'इंसानी बस्ती' सीधी सरल भाषा में लिखी जाकर अपनी लघुकथा यात्रा को नैसर्गिक जल की तरह बहाती हुई वर्तमान में चारों ओर व्याप्त प्रदूषित जल के ठिकानों पर लाकर पूर्ण बनाती है। लघुकथाकार गाडगिल ने कथ्य को विवेचित करने में उदार और अनुदार भाषा के दो रूप खड़े किए हैं एक रूप नदी के उद्गम स्थल का है जिसको वर्णित करने में लघुकथाकार ने विशेष्य और विशेषण से संयुक्त शब्दावली योग का दोहन किया है। वसुधा अपनी लघुकथा में अधिकतर संज्ञा विशेषण और क्रिया विशेषण के दो ध्रुव

को नियोजित कर चली है। नीलाकाश, हरे भरे पेड़, स्वच्छ पर्यावरण का दाय ग्रहण कर अपने उद्‌गम स्थल पर नदी का निर्मल जल अमृत पेय होकर उसे ग्रहण करने वाले को अमृत सदृश अनुभव होता है उद्‌गम स्थल पर सबका मन मोहने वाली जीवनदायिनी नदी उतावली और बावली बनी होकर कल कल नाद को उकेरती जब प्रदूषण से ग्रसित शहर की बाहों में सिमटती है तो उसके उद्‌गम स्थल की पारदर्शी निर्मल दशा से परिचित होकर यायावर नदी के किनारे किनारे चलकर अपना गंतव्य पूरा करते हैं, यात्रा के समापन बिंदु पर नदी का उन्नत विशाल पाट अत्यंत तन्वंगी होकर कालिमायुक्त होकर धूसर-सा दिखने लगता है। शहर का प्रदूषण नदी के सौंदर्य को निगल जाता है। जिससे क्रूर और क्रोधित हुई नदी दूषित जल की संज्ञा ओढ़ कर उसका जल ग्रहण करने वालों को प्रतिकार रूप में रूग्ण, कुरूप और श्रीहीन कर देती है।

वसुधा की लघुकथा 'इंसानी बस्ती' कथा की संरचना के लिए आवश्यकता की भट्टी से तपाए हुए शब्दों का सान्निध्य ग्रहण कर उद्‌घाटित हुई है। प्रस्तुत लघुकथा नदी के उत्पत्ति स्थल को गोमुख, उसकी आभा को पारदर्शी, उसकी गति को शोख जैसी शब्दावली में परिभाषित कर कथा में जो शिल्प उतारा गया है, वह सारंगी के साथ यथोचित ताल में बजाए जाने वाले तबले की तरह है। बंधन मुक्त भाषा को लघुकथा की सीमा में संयत कलम से अभिव्यंजित कर कथाकार ने कथाकार में भाव सौंदर्य का साहित्यिक एवं सांस्कृतिक मेला सजा दिया है।

सुप्रसिद्ध लघुकथाकार डॉ. योगेन्द्रनाथ शुक्ल की लघुकथा 'एक्सीडेण्ट' महानगर की आपा-धापी और जिजीविषा के ज्वलंत सवाल को हल करने में संलग्न नौकरी-पेशा पति-पत्नी के रिश्तों में समय की सुईयों द्वारा बुनी हुई अप्रत्याशिक जीवन शैली को अभिव्यक्त करती है।

महानगरों की जीवनचर्या पर दुर्घटनाओं का काला साया मंडराता रहता है। महानगर की हथेली पर दूरियों की रेखाएं खींची होती है। घंटा दो घंटा का मार्ग तयकर नौकरी पेशा लोग अपने अपने कार्यस्थल पर पहुंच पाते हैं। नतीजतन नौकरी पेशा पति-पत्नी एक घर में रहते हुए भी एक दूसरे के साथ मेल मिलाप का उचित समय नहीं दे पाते हैं। यहां तक कि कई बार अवकाश के दिनों में भी कार्यालय में जरूरी काम से निकल जाना पड़ता है ऐसे में पूरे दिन साथ व्यतीत करने की मंशा में भी अप्रत्याशित ब्रैक' लगा मिलता है।

योगेंद्रनाथ शुक्ल की लघुकथा एक्सीडेंट सपाट और सरल सीधी भाषा में बुनी गई ऐसी लघुकथा है जिसमें महानगरों की नियतिवश दुर्घटनाओं की संभावनाएँ है ना केवल मानवीय आशंकाओं में बनी रहती है अपितु सर्वथा सच होकर सामने भी प्रकट होती है।

समकालीन लघुकथा के सिद्धहस्त लघुकथाकार संतोष सुपेकर की लघुकथा 'इस बार' समाज में व्याप्त जातिगत विभेद की विसंगति के परिशिष्ट को खोलने वाली ऐसी लघुकथा है जिसकी अन्तर्वस्तु जाति और धर्म पर होने वाली सामान्य चर्चा की परिणति चर्चाकारों के बीच पारस्परिक वैमनस्य का विकराल रूप ले लेती है। कितना भी सामंजस्यपूर्ण वातावरण हो अथवा सौहार्दपूर्ण भाव से विचारों का आदान-प्रदान चल रहा हो। लेकिन इसी बीच कोई एक धर्म अथवा जाति आधारित टिप्पणी कर देता हो तो आपसी वैचारिक सहिष्णुता भंग हो जाती है और विद्वेष का बीजारोपण होने में कतई देर नहीं लगती है। बरक्स इसके टीवी चैनलों में दिखाए जाने वाले धर्म और जाति को लेकर बहस मुबाहिसे सामाजिक समरसता में जहर खोलते मिलते हैं। कई बार जाति और धर्म पर चलने वाली बंद कमरे की बहस टीवी पर चढ़ी हुई बहस के आगे बौनी पड़ जाती है। इसी प्रासंगिक तस्वीर पर आधारित सुपेकर की लघुकथा 'इस बार' सहज और सरल कथ्य के बूते अपना विराम हासिल करती है। सपाट भाषा में लिखी गई लघुकथा दुरूह ना होकर पाठकों की समझ में अक्षरशः उतर जाती है। प्रस्तुत लघुकथा का विमोचन संवादात्मक शैली में हुआ है और फिर लघुकथा का संपूर्ण कथ्य समकालीनता का स्पर्श करते हुए लघुकथा में वर्णित कथानक का आशय खोलता मिलता है। प्रस्तुत 'इस बार' लघुकथा में वर्णित शिल्प सिर्फ थोपा हुआ नहीं मिलता है प्रत्युत कथा में ही से निकल कर सामने आता है। यथा- ''गर्मा गर्म बहस के बीच मेजकर पर रखी गर्मा गर्म चाय ठंडी होने लगी।''

''कमरे में हमारे बीच दो नहीं एक ही हम था।'' लघुकथा 'इस बार' में लघुकथाकार ने बंद कमरे में धर्म और जाति पर चल रही बहस के कारण उपजे विभिन्न भागों से प्रभावित होकर अपने अनुभवों का कलात्मक रूप कथा में अभिव्यक्त किया है। इस प्रकार कौशल युक्त

तरीकों से प्रस्तुत कथा की बुनावट हुई है, जो कथा की अभिव्यंजना में कलात्मक सौन्दर्य का अभिव्यंजन करती है। संवादों की गरमाहट के मध्य तर्कवितर्कों की भरमार ने प्रस्तुत लघुकथा 'इस बार' को जीवंत तो बनाया ही है प्रत्युत दूरदर्शन के चैनल पर छिड़ी हुई पारस्परिक चर्चाओं के माध्यम से लघुकथा में भाषागत सौन्दर्य का धनात्मक पक्ष भी लघुकथाकार ने रखा है।

लघुकथाकार राजनारायण बोहरे की लघुकथा 'क्रेडिट कार्ड' असंयत रूप में रुपये के अपव्यय पर आधारित कृषक जीवन को केन्द्र में रखकर विघटित हुई है। रामसिंह नामक कृषक ने उसकी सारी गेहूँ की फसल सरकारी खरीद में दो लाख रूपयों में बेची जिसका भुगतान नकद न किया जाकर बैंक खाते में भेजा जाता है। यहीं से लघुकथा की अन्तर्वस्तु का द्वार खुलता है। क्रेडिट कार्ड की आड़ में जब चाहो तब पैसा निकालो। यही सहुलियत क्रेडिट कार्डधारी कृषक के लिए फजीहत बन जाती है; जब एक दिन वह बैंक से एक लाख रुपये की राशि निकालने को पहुँचता है तब उसे पता चलता है कि दो लाख की जमा राशि में से वह डेढ़ लाख रूपये अग्रिम रूप में निकाल चुका है। तब उसे अहसास होता है कि शेष बचे पचास हजार रूपये में वर्ष भर उसको घर चलाना मुश्किल हो जाएगा। क्रेडिट कार्ड से रूपयों को निकालने की बेशर्मी और महाजन से सूद पर रूपया उधार लेने की शर्म पर बैंक मैनेजर द्वारा कृषक के आगे की गई टिप्पणी लघुकथा का प्राण है, जिसको लघुकथाकार ने भाषाई ऑक्सीजन के बूते संजीवनी प्रदान की है। कृषक जीवन के प्रति सन्देश प्रदायक प्रस्तुत लघुकथा क्रेडिट कार्ड बैंक से मनमानी तौर पर रूपयों की निकासी और साहूकार से बेजरूरत पैसा नहीं माँगने की परवशता का तुलनात्मक अध्ययन जिस वैचारिक शैली से प्रस्तुत किया गया वह लघुकथाकार की कलात्मक अभिव्यक्ति का सौन्दर्य दर्शाती है। 'शैली ही लेखक का व्यक्तित्व है।' इस विचार की पूर्ति में लघुकथाकार राज बोहरे द्वारा प्रस्तुत लघुकथा 'क्रेडिट कार्ड' में विवेचित कथोपकथन में शैली का मनोरम रूप दृष्टव्य है-

''पहले शर्म की वजह में तुम साहूकार से बेजरूरत पैसा नहीं माँगते थे। जितना माँगते थे, उसमें से वह आधे टुंगा-टुंगा के देता था। क्रेडिट कार्ड 'हाथ में है, और बैंक से काहे की शर्म? जब इच्छा हुई, हाल एटीएम फँसा देते हो।''

प्रो. बी.एल. आच्छा की लघुकथा 'संगमरमरी आतिथ्य' विचारों में आधुनिकता के बजाए दिखावे में आधुनिकता की रपटीली पगडण्डी पर वर्तमान में अर्थहीन होते उस आतिथ्य बोध को खण्डित करती हुई सामने आती है, जिस बोध में आतिथ्य सत्कार को 'अतिथि देवोभवः' का सांस्कृतिक अर्थ दृढ़तापूर्वक खड़ा मिलता है।

संगमरमर से बने मकान की लकदक के बीच ताजमहली अहसास तो पुरजोर है मगर घर होने का आभास कराने वाला 'वास्तु' बिगड़ा हुआ है। मालिक मकान किसी दीवान-ए-खास की तरह घर आए अतिथि के आतिथ्य-भाव को बिसराकर अपने मकान के बेशकीमती होने का जायका अतिथि के आगे परोसता है। बरअक्स इसके अतिथि आतिथेय के कस्तूरी की गंधनुमा आतिथ्य को सांकेतिक भाषा में घुड़की मिलता है।

प्रस्तुत लघुकथा में सघन भौतिकवाद का विचार बुलंद हुआ है। दिखावे की जिन्दगी जीने की आधुनिकता हम भारतीयों की सहज जीवन-प्रणाली कैसे खण्डित कर रही है, इस बात का आस्वाद लघुकथाकार ने व्यंग्यात्मक लहजे से हमारे बीच परोसा है। प्रो. बी.एल. आच्छा एक कुशल व्यंग्य लेखक भी है ताहम भी प्रस्तुत लघुकथा में उनकी भाषा परिवेश और पात्रानुकूल संवादों को गढ़ने में युक्तियुक्त रही है। लघुकथा की सीमा में आबद्ध रहते हुए कोई रचनात्मक विसंगति प्रस्तुत लघुकथा में नहीं आ पायी है; यही लघुकथा का सौन्दर्य है।

ज्योति जैन की लघुकथा 'जाके पैर फटे न बिवाई' मुहावरेदार शीर्षक से विजडित ऐसी लघुकथा है जिसकी अन्तःरचना कोरोना काल की भयावहता और सामान्य जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव को अभिव्यंजित करती है। कोरोना काल का पूरा वेतन लेने ओर कोरोना काल में बंद रहे स्कूल के बावजूद छात्रों से पूरी फीस वसूलने की पारस्परिक विसंगतियों का 'सिनेरियो' (पटकथा) प्रस्तुत लघुकथा में बुना गया है। सरकार द्वारा दी हुई हिदायत के अनुसार कर्मचारी कोरोना काल का भी पूरा वेतन चाहता है; बरअक्स इसके कोरोना काल में बंद रहे स्कूल में पढ़ रहे अपने बच्चे को पूरी फीस पालक चुकाना नहीं चाहता है, इसी विरोधाभासी सन्दर्भो के ताने-बाने पर केन्द्रित लघुकथा कोरोना काल की वजह से उपजी आम आदमी की चिन्ता और परेशानी को प्रकट करती है। कोरोना पीड़ित

समाज में घोर चर्चा चल पड़ती है। कि कोरोना काल के कारण सिर्फ एक माह का ही वेतन कार्यरत कर्मचारी को मिलेगा। उसी की चिंता, उसी का आक्रोश और उसी से पैदा आत्मिक कुण्ठा को लघुकथाकार ज्योति जैन ने अत्यन्त ही गहन पीड़ा में युक्त सम्वादों में अभिव्यक्त किया है-

''सरकार ने कहा है....'पूरी देनी पड़ेगी...' वह गुस्से में हाँफ रहे थे।''

''तनिक शान्ति धरो जी.....'' पत्नी ने कहा।

''अरे काहे की शान्ति....हैं? और तुम चुप करो जी... अक्ल तो है नहीं... कोरोना था तो काम पर कैसे जाते....?''

प्रस्तुत लघुकथा में शिल्पगत सौन्दर्य देखने को मिलता है। लघुकथा में वर्णित एक संवाद ''देनी ही पड़ेगी...'' में परिवार का मारवाड़ी होना परिलक्षित होता है, जिसके आधार पर परिवार का पारिवारिक परिवेश बुना गया है।

लघुकथाकार अनघा जोगलेकर कलाविद् होकर भारतीय पौराणिक चरित्रों की सामाजिक सन्दर्भों में व्याख्याकार है। अनघा जोगलेकर की लघुकथा 'अदला-बदली' की मीमांसा करने से पूर्व प्रस्तुत 'अदला-बदली' लघुकथा में प्रयुक्त हुए दो शब्दों की व्याख्या को जान लेना बहुत जरूरी है।

पहला शब्द है आर्टिफिशिएल इंटेलिजेंस दूसरा शब्द है इमोशनल कोशेंट आर्टिफिशिएल इंटेलिजेंस का अर्थ एक मशीन में सोचने-समझने और निर्णय लेने की क्षमता का विकास करना। इसमें एक ऐसा दिमाग बनाया जाता हे, जिसमें कम्प्यूटर इन्सानों की तरह सोच सके। जबकि दूसरा शब्द इमाशनल कोशेंट मनुष्य की अनुभूति से जुड़ा है जिसकी मदद से मनुष्य स्वयं अपनी अनुभूति और दूसरों की अनुभूति को समझकर दोनों को मैनेज करते हुए काम निकाल सके।

'अदला-बदली' लघुकथा की अन्तःरचना कल्पना और यथार्थ का समन्वय बुनकर प्रस्तुत हुई है। दिनभर घर में अकेली रहने वाली महिला प्रायः खिड़की से सटकर आकाश निहारने में अपना समय व्यतीत करती है। घर के कामों से निवृत्त होकर खिड़की तक जाना और फिर फुरसत के क्षणों में यानी दिन हो या रात आकाश को निहारना और आकाश की थाली से मोतियों को टपकते देखना ही उसका प्रतिदिन का शगल है। उसे डर भी है कि कहीं आकाश एक समय अपने मोतियों से रिक्त न हो जाए। कभी-कभी उसके मन की भाव-सम्पदा चाँद-तारों से भरे आकाश से संश्लिष्ट होकर उसके अधरों पर फिल्मी गीत भी गुनगुनाने को जमा कर देती है। ऐसे में उसके परिजन उसकी गतिविधियों को वैचारिक केन्द्र में रखकर उसका मूल्यांकन करते मिलते हैं। कैसे वह उसकी कृत्रिम बौद्धिकता में भावात्मक अनुभूतियों को उतारकर प्रतीक्षारत बनीं रहती हे कि आज के मशीन बन चुके इन्सान कब मशीन से इन्सान में रूपान्तरित होंगे। लघुकथा 'अदला-बदली' में विज्ञान विषयक पारिभाषिक शब्दावलियों का अनुप्रयोग हुआ है। लघुकथाकार ने इन्हीं वैज्ञानिक शब्दों के माध्यम से अभीष्ट अर्थ को व्यक्त किया है।

राममूरत राही की लघुकथा 'परोपकारी उवाच' वृक्ष और मानव के बीच नैसर्गिक सम्बन्धों पर आधारित होकर निहित स्वार्थ से परिपूरित इस दुनिया में मूल्यों के स्थानापन्न की बात करती हे। प्राकृतिक सुषमा को खड़ी करना, उसे जिन्दा रखना मनुष्य का परम कर्तव्य है, वृक्ष जीवन प्रदान करता है, आर्थिक विपत्ति से घिरे मनुष्य की जिजीविषा को परितृप्त करता है। मनुष्य जितना वृक्षों के प्रति उदार रहेगा प्रकारान्तर से वृक्ष भी मनुष्य के संगी बनकर उसके आर्थिक संकट को टालने वाले कारक बन जाते हैं। इसी मनोहर मन्तव्य का ताना-बाना संवार कर राममूरत राही ने सपाट भाषा में लघुकथा 'परोपकारी उवाच' का कथानक विवेचित किया है।

कोरोनाकाल की सबसे बड़ी त्रासदी यह रही हे कि इस क्रूर समय ने अधिकांश परिवारों का रोजगार छीन कर उनके अश्रितों को भूख की कगार पर ला खड़ा किया है। ऐसी ही अवस्था से ग्रसित भूख से बेहाल हुए परिवार का प्रमुख अपने आँगन में खड़े आम के वृक्ष को अपने परिवार का मुखिया मानते हुए उसके आगे अपने बेबसी का रोना रोता है, जिसके निराकरण में आम का वृक्ष उसे सहारा देते हुए उसे कहता है कि वह उसकी सारी डालें काटकर उसको बेचकर उन रूपयों से कोई व्यापार खड़ा कर अपने परिवार का गुजारा कर सकते हो।

लघुकथाकार ने प्रस्तुत लघुकथा में वृक्ष की महत्ता को प्रतिपादित करने में स्वयं वृक्ष से कहलवाया है कि ''पुत्र! हमें भगवान ने पृथ्वी पर परोपकार के लिए ही पैदा किया है। आज नहीं तो कल मुझे नष्ट होना ही है। मेरा

कहा मानो और मेरी डालियों को काट दो। हाँ अगर तुम्हे बहुत दुख हो रहा है।

डालियों के बदले चार-पाँच पौधे लगा दो।'

प्रस्तुत लघुकथा का सन्देशपरक कलेवर को बुनने में लघुकथाकार ने सपाट और बोलचाल की भाषा का उपयोग किया है। लघुकथा का सौन्दर्य इसी आशय में निहित है कि इसमें वृक्ष को हमारी मान्यताओं के अनुसार परोपकारी बताया है और संकट काल में वृक्ष की उपयोगिता को रेखांकित किया है।

लघुकथा के क्षेत्र में नई पीढ़ी की सशक्त लघुकथाकार दिव्या राकेश शर्मा की लघुकथा 'अवगुंठन' पौराणिक चरित्र राम ओर सीता के मध्य कुछ अनसुलझे सवालों से परदा उठाने वाली गंभीर लघुकथा है; जिसमें राम द्वारा सीता की अग्निपरीक्षा, तदन्तर सीता का त्याग और इन सब कारकों से पराभूत होकर राम का पश्चाताप, माता सीता को मिलने वाले कष्टों के प्रदायक के रूप में राम द्वारा आत्म स्वीकारोक्ति का ताना-बाना तर्क शैली में बुना जाकर पुरूष की विवशता और स्त्री के भाग्य का दृष्टान्त ही प्रस्तुत लघुकथा 'अवगुंठन' का सार-संक्षेप है।

अप्रत्यक्ष रूप से स्वगत-कथन और प्रत्यक्ष रूप से राम और सीता के मध्य कुछ सुलझे और कुछ अनसुलझे सवाल-जवाबों के प्रकाश में लघुकथा में निहित कथ्यों की स्पष्टता, लघुकथा में शिल्प और शैली का मनोरम रूप खड़ा करती है। लघुकथा की अन्तर्रचना से उद्घाटित होकर कतिपय महत्वपूर्ण तथ्य सामने आते है; जिनसे लघुकथा की वैचारिक गहराई तथा भावात्मक ऊँचाई का पता मिलता है। यथा-

''ओह..... यह स्त्रीमन यह पक्ष क्यों न देख सका।''

''कैसे देखता.... पुरूष सदैव अपनी पीड़ा एक आवरण में छिपाए रहता है।''

चिन्तन-मनन और अध्ययन की त्रयी जिनके साहित्यिक व्यक्तित्व में निहित है ऐसे कवि और लघुकथाकार ब्रजेश कानूनगो की लघुकथा 'लिफाफा' बुजुर्ग जीवन की उपेक्षा और लालचवश बुजुर्ग जीवन से अपेक्षा के उभयनिष्ठ भावों पर ठहरी होकर आधुनिक भौतिकता के दुमुँहे चरित्र से परदा उठाती है। एकांकी परिवार की विचारधारा ने बुजुर्ग जीवन को उसकी अस्मिता से धकेल कर उसे अनाथ आश्रम की चौखट पर साँस लेने को विवश छोड़ दिया है। लघुकथा में मोड़ तब आता है जब घर से निष्कासित बुजुर्ग को उसका 'क्लैम' पारित होकर भारी रकम मिलने वाली होती है, उसका लालचीपुत्र उसे घर वापसी करने की याचना करता है। दायित्वहीनता का भाव लोभ के आगे पराजित होकर उपेक्षित पिता के आगे कैसे घुटने टेक देता है; यही लघुकथा का कथ्य है, जिसे अनुभूति से नहीं समाज के आईने से उतारा गया है।

लघुकथा का भाषा-विन्यास तर्क आधारित न होकर सपाट और स्पष्ट है। पुत्र द्वारा उपेक्षित पिता और वृद्धाश्रम में वृद्ध पिता को मिलता अपनों का प्यार का तुलनात्मक अध्ययन ही लघुकथा का प्राण तत्व है-

''बेटा, अब तो कोई घुटन नहीं होती यहाँ। यहाँ के हम उम्र साथी सगे रिश्तेदारों की तरह हो गए हैं।''

डॉ. संगीता तोमर की लघुकथा लड़का और लड़की के जन्म लेने की प्रीतिकर और अप्रीतिकर धारणा पर अवलम्बित है। हमारे देश में तो भारी इनाम बांटा जाता है और लड़की पैदा हो तो ईनाम की एवज में ठेंगा दिखाया जाता है। लड़की के जन्म लेने के साथ ही उसके पल्ले से तिरस्कार का यह घिनौना रूप बाँधकर लघुकथाकार ने लड़की के महत्व को माँ की आँखो से दिखाकर लड़की के सम्मान में माँ के मुँह से यह वाक्य कहलवाया है कि, ''खबरदार जो मेरी बच्ची के बारे में अपशब्द कहे।'' अंत में लड़की के पैदा होने पर सामाजिक तौर पर जो नैराश्य भाव समाज में देखा जाता है और लड़के के जन्म लेने पर खुशियों की जो अपारता समाज में देखी जाती है, उसके माध्यम से ईनाम और बक्शीश में भेद दिखाया गया है, जो समाज का नजरिया प्रस्तुत करता है- ''अरे सिस्टर गर्म क्यों होती हो, जो हमने देखा है, वही तो कह रहे हैं। हम थोड़े ही माँगते है। लड़का होने पर लोग ही सारा इनाम दे जाते हैं और लड़की होने पर ठेंगा।''

लघुकथा में शिल्प और शैली के माध्यम से लघुकथा को लघु आकार दिया गया है, तथा लघुकथा के कथ्य में लड़की के जन्म के महत्व को उजागर कर रीत के विपरीत सौन्दर्य भाव स्थापित किया गया है।

अंजू श्रीवास्तव निगम की लघुकथा 'सीवन' साहूकार द्वारा कृषकों से मनमाने तौर पर वसूले जाने वाले 'सूद' के बरअक्स बैंकों द्वारा किसानों को दिए जाने वाले पारदर्शी ब्याज पर ऋण के बीच तुलनात्मकता का अध्ययन लाभ-हानि के बूते प्रस्तुत करती है। साहूकार की पकड़ में आया हुआ किसान उसके शोषण का शिकार होकर उसे

ब्याज पर ब्याज चुकाते हुए जीवन में असहाय और लाचार ही बना रहता है। साहूकार की खाता-बही पर किसान को उधार देने की रकम एक बार चढ़ जाती है तो उस रकम को चुकाते-चुकाते असहाय किसान अन्ततः आत्महत्या का निर्णय कर बैठता है।

लघुकथा का प्रारम्भ कृषक पति-पत्नी के बीच घटित होने वाले संवाद, रोचक, शंकास्पद होकर तथा साहूकार कैसे आधे खेत की फसलों को नोच कर रह जाता है, इन यथार्थ बिन्दुओं पर आश्रित लघुकथा में वास्तविकता को पैदा करने में समर्थ हैं। प्रस्तुत लघुकथा में शिल्प जड़ित संवादों की सहज वानगी देखने को मिलती है-

''रब्बा खैर करे। इस बार खेत पूरा भरा है। सोने के दाने उग रहे हैं।'' जस्सी के आगे गिरवी रखी सोने की बालियाँ चमक उठी।

बिन्दे को जस्सी की यह टोंक खल गई। ''अरे निगोड़ी तुझे हर काम में टोंक देनी है। पिछले बार की याद है आधा खेत नुच गया था।''

लघुकथाकार विजयसिंह चौहान की लघुकथा 'स्वामिनी' नारी अस्मिता को लेकर घर में उसकी दर्जा सजाई का मनोहर पक्ष खड़ा करती है, लेकिन इसी आशय की गति पकड़ते हुए लघुकथा की अन्तःरचना को वहाँ विराम लग जाता है, जब घर के संचालन में पति द्वारा सर्वस्व अधिकार मिलने के पश्चात? गृहस्वामिनी घर के मुख्य द्वार पर 'नेम प्लेट' पर अपना नाम न पाकर पति का लिखा नाम पढ़ती है। पति और पत्नी के मध्य नेम प्लेट का आना दायित्व ओर विश्वास में सुराख पैदा कर देता है। पुरूष के वर्चस्व को रेखांकित करती 'स्वामिनी' लघुकथा भाषा का कोई जटिल व्यापार नहीं चलाती और न ही शिल्प का कोई आडम्बर रचती है। लेकिन हाँ समाज में स्त्री और पुरूष के बीच पार्थक्य की लकीर का यथावत समर्थन करती मिलती है।

लघुकथाकार चेतना भाटी की लघुकथा 'सुनामी सड़क' स्मार्ट सिटी की परिकल्पना का यथार्थ रूप सामने लाती है। सड़क का चौड़ीकरण न केवल घरौंदों को उजाड़ देता है। प्रत्युत वर्षों से खगबूंद को बसेरा देने के अर्थ में साधु बने छायादार घने वृक्षों की अनुशासित कतारों को भी उनके अस्तित्व से ढहा देती है। नन्हीं चिडिया अपने सुकोमल पंखों के बूते नया बसेरा ढूँढने में संलग्न मिलती है, तो माँ सड़क निकलने की सुनामी से डरी हुई होकर उसी सुनामी का डर अपने नन्हें बच्चे को दिखाकर उसे सुलाती है। प्रस्तुत लघुकथा 'सुनामी सड़क' अमीर खुसरो द्वारा प्रचलन में लाई 'मुकरियाँ' की तर्ज पर लिखी रोचक किन्तु शहर के विकास के फलस्वरूप बस्तियों के उजाड़ने की मीन्तक पीड़ा का चित्र खिंचती मिलती है।

शिल्पगत अभिव्यक्ति का एक उदाहरण प्रस्तुत है- ''शहर की ओर से बदहवास उड़ती आती चिड़िया से उसकी देहातन सखी ने पूछा, ''का सखी सुनामी?''

''ना सखी सड़क।''

देहातन ने घबराकर झट से बच्चे को सीने से लगाया।'' बेटा, सो जा, नहीं तो सड़क आ जाएगी।''

डॉ. चन्द्रा सायता की लघुकथा 'वीराने में बहार' एक ऐसी महिला शिक्षिका की कर्तव्य निष्ठता पर केन्द्रित है जो अपने नैतिक व्यवहार और शिक्षक कर्म के निर्वहन में सदैव संलग्न बनी रहती है। शिक्षा के क्षेत्र में अपने सहयोगी शिक्षकों, छात्र-छात्राओं और सामाजिक क्षेत्र में अपने कुशल व्यवहार से वह सबका हृदय जीत चुकी है। इसी कारण से उसका घर-परिवार और समाज में खास स्थान बन चुका है। उसकी योग्यता उसको शिक्षक वर्ग में राष्ट्रपति द्वारा दिए जाने वाले सम्मान तक पहुँचा देती है। इस प्रतिष्ठित पुरस्कार हेतु नामजद होने के कारण वह समाज में चर्चित हो जाती है। फलस्वरूप एक अखबार नवीस उसका साक्षात्कार लेने उसके घर आता है और यही उसके वीराने परिवार में उसके लिए बहार आने का कारण बनता है।

शिल्प और कथ्य की कृत्रिमता से दूर लघुकथा की भाषा सपाट होकर सहज गति में विराम लेती है।

लघुकथाकार दीपक गिरकर की लघुकथा 'तफ्तीश जारी है' कानून की पोल खोलने वाली एक गहन विचारात्मक लघुकथा है। लघुकथा की अन्तर्वस्तु एक विचाराधीन कैदी के द्वारा लिखा गया उपन्यास 'तफ्तीश जारी है' के विमोचन को लेकर उद्घाटित हुई है। लघुकथा में कानून की लापरवाही को भी रेखांकित किया गया है, यह कि जो कैदी विगत 45 वर्षो से जेल में बंद है उसके प्रकरण की अभी तक ट्रायल भी शुरू नहीं हुई है। अचरज को उगलने वाली इस ज्वलन्त बात ने गणतन्त्र दिवस के झण्डावन्दन कार्यक्रम के उपरांत धूप में बैठे वकील और जज को ठण्ड के मौसम की गुनगुनी धूप भी तेज लगने लगीं।

दीपक गिरकर की प्रस्तुत 'तफ्तीश जारी है' लघुकथा अपनी संरचना में अर्थ सम्पन्न भाषा को लेकर चली है साथ ही शिल्पगत जटिलता का निर्वहन किए बगैर सहज शैली में अपने कथ्य को प्रस्तुत करती है।

लघुकथाकार विनीता शर्मा की लघुकथा 'लाचार' कोरोना काल की त्रासदी को अति सम्वेदना भाव से प्रकट करती है। कोरोना के मरीजो की तीमारदारी में लगा एक डॉक्टर योद्धा अंत में स्वयं कोरोना से ग्रसित होकर प्राण गँवा देता है, जिसका अन्य डॉक्टर मित्र शोक प्रकट करने स्वरूप दिवंगत डॉक्टर के घर पहुँचता है। जिसे देखकर मृत डॉक्टर की पुत्री उसे बताती है, ''अंकल-अंकल आप पापा से मिलने आए होना। पर पापा तो भगवानजी को देखने गए है। पता है, भगवान जी की तबीयत खराब हो गई है।'' स्वर्गीय डॉक्टर की चार वर्षीय पुत्री के मुख से कहा गया यह कथन अति सहज होकर भी करुणा का जाल बिछाकर लघुकथा के कथ्य को आर्द्रता से भर देता है।

लघुकथाकार विजया त्रिवेदी की लघुकथा 'मजबूरी' कोरोना पीड़ित पति की विवशता को केन्द्र में रखकर लिखी गई है। कथा में सबसे बड़ी बात यह है कि कोरोना ग्रसित पति के कमरे में परिवार का कोई सदस्य फटकता नहीं है, यहाँ तक कि उसको खाने के लिए भोजन की थाली देने हेतु कोई उस कमरे में नहीं जाता, रोगी की पत्नी भी नहीं। लेकिन घर का स्वामी भक्त कुत्ता ऐसी दुरूह अवस्था में भी कोरोना ग्रस्त अपने मालिक के कमरे में ही रहता है।

लघुकथा में परिवार के वाचाल रिश्तों की गैरजिम्मेदारी और कुत्ते के मालिक के प्रति मूक रिश्ते को वाचाल बताया गया है। यही लघुकथा का सौन्दर्य है।

लघुकथाकार राजेन्द्र वामन काटदरे की लघुकथा 'खालीपन' देर रात तक इकलौते बेटे के घर नहीं लौटने की प्रतीक्षा में वृद्ध माता-पिता की नसों में चिन्ता का बुखार पैदा करती है। अन्ततः कार्यालयीन कार्य की जरूरी मीटिंग समाप्त कर पुत्र घर लौटता है। इस बीच पुत्र की घर में अनुपस्थिति से जो अभाव खटकता है, उस अभाव का उल्लेख करने में लघुकथाकार ने माता-पिता के मध्य सम्वेदनापूरित जो संवाद गढ़े हैं, वे लघुकथा की जमीन को करूणा से भिगों देते हैं।

लघुकथाकार दिलीप जैन की लघुकथा 'अनाथ वृक्ष' ऐसे वृक्ष की कथा-व्यथा को व्यक्त करती है जिसे अतीत में जिस परिवार ने अपने घर के आँगन में रोपा था और जिसकी परिजनों ने देखभाल कर उसे सरसब्ज बनाया था, जिसकी डाल पर परिवार के सदस्य न केवल सावन में झूले बांधते थे अपितु परिवार के छोटे बच्चे उछल-कूद मचाया करते थे। समय बदलते के साथ ही उस घर के बच्चे पढ़ने के बहाने विदेशों में चले गए ओर अन्ततः वहीं नौकरीपेशा होकर बस भी गए। वृक्ष को रोपने वाले परिवार के मुखिया दुनिया में नहीं रहे। इस तरह वृक्ष के साथ-साथ आँगन की छटा बिखरने वाला बंगला भी जर्जर हो गया। जिसे अन्ततः बंगले के वारिसों ने बेच भी दिया।

शहर के विकास ने अपनी बाँहें क्या खोलीं, आँगन के वृक्ष को नेस्तनाबूत कर दिया और बंगले के खरीददार ने जर्जरित बंगले को ध्वस्त कर वहाँ बहुमंजिली ईमारत खड़ी कर दी।

लघुकथा में विकास के नाम पर प्रकृति के विनाश की गाथा को अभिव्यक्त किया गया। सम्वेदना और नैराश्य से जड़ीभूत प्रस्तुत लघुकथा सरल भाषा व्यवहार का उदाहरण बनकर सहज ही सम्पन्न हुई है।

इन्दौर के वरिष्ठ लघुकथाकार सूर्यकांत नागर की लघुकथा 'केशर की छोरी का दसेरा' में गरीब का दर्द है। हमारे देश में पारम्परिक रूप में मनाए जाने वाले दशहरा त्योहार के संदर्भ में अपनाई जाने वाली संस्कृति का बहुत ही समीपी से अंकन करती है। लघुकथा का कथन मां केसर और उसकी बेटी नन्दा को केन्द्र में रखकर बुना गया है। मां और बेटी दोनों अलग-अलग परिवारों में बर्तन और कपड़े मांजने-धोने तथा झाड़ू-पोछा करने का काम करती है। बेटी नन्दा जिस परिवार में काम करती है, वहां दशहरा पर्व वो हर्षोल्लास के साथ मनाने की तैयारी में स्वादिष्ट भोजन तथा बच्चों को नए वस्त्र और जूते पहनाकर तैयार किया गया है। बरक्स इसके जहां नन्दा की मां काम करती है, वहां से मालकिन ने नन्दा के लिए दशहरे के अवसर पर पहनने वास्ते अपनी बेटी के पुराने कपड़े दिए हैं। लेकिन स्वाभिमान को सर्वोपरि रखते हुए नन्दा मां की मालकिन द्वारा उसके लिए दिए गए कपड़ों को 'उतरन' का नाम देकर पहनने से इन्कार कर देती है। साथ ही वह अपनी मां केसर के आगे अपने अभावग्रस्त जीवन और उसकी विडम्बना का बखान करती है।

सीमा व्यास की लघुकथा 'नो हॉर्न प्लीज' सड़क

विषयक यातायात के एकदम विरुद्ध थके-मांदे बुजुर्ग जीवन की सुस्त दिनचर्या में कोलाहल का ऐसा पत्थर फेंकती है जिससे बुजुर्ग जीवन की हर दिन की दिनचर्या चोटिल हुई मिलती है। इसी के निदान स्वरूप फ्लैट में रहने वाली वृद्ध महिला फ्लैट के नीचे निर्धारित पार्किंग के मुख्यभाग में 'नो हॉर्न प्लीज' प्रिंट आउट चिपकाती है। ऐसी हिदायत खास तौर पर वह पड़ोसियों के फ्लैट्स में आने वाले बच्चों को लिए देना चाहती है, तो अपने इष्ट-मित्रों को अपने आने की सूचना जोर-जोर से अपनी बाइकों के हार्न बजा-बजा कर देते हैं।

लघुकथा 'नो हॉर्न प्लीज' की अन्तर्वस्तु के गठन में युवा पीढ़ी की उच्छृखंलता, लापरवाही एवं गैर अनुशासित जीवन का रेखांकन करते हुए असहाय बुजुर्ग जीवन की मनःस्थिति, उनको मिलने वाली सामाजिक उपेक्षाओं आदि कारकों के बूते सम्पन्न हुआ है। हॉर्न के कारण बुजुर्ग महिला को होने वाली दैहिक और मानसिक तकलीफों का एक बड़ा संयत, और मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करने में लघुकथाकार सीमा व्यास की भाषा का अनुपम प्रयोग प्रस्तुत है-

''कोई मरीज होगा न घर में। उसे हॉर्न से...।''

''नहीं... मरीज तो नहीं है। घर में हम दोनों ही रहते हैं। बच्चे तो बाहर सेटल हो गए हैं।''

मेरा प्रश्न खत्म होन से पहले ही उन्होंने उत्तर दिया- ''ये दूसरे फ्लेट्स के बच्चे उनके दोस्तों से मिलने आते हैं और नीचे से ही हॉर्न बजाते हैं। हमें लगता है हमसे मिलने कोई आया.... अब पलंग से उठकर धीरे-धीरे गैलरी तक आने में समय लगता है। फिर पता चलता हे, अपने लिए कोई नहीं। निराश हाथ लगती है। दिन में दो-चार बार आओ तो थकान हो जाती है।''

लघुकथाकार सुषमा व्यास 'राजनिधि' की लघुकथा 'जीवन की पूँजी' आधुनिक समय की भौतिकवादी सोच में डुबकियाँ लगाती हुई नैतिक आचरण के किनारे खड़ी होकर सुखद परिणति का बोध कराती है। कथा के केन्द्र में प्रोफेसर साहब की पत्नी हैं जो अपने पति के बँधे-बँधाए वेतन के सहारे घर संचालन में असमर्थ लगती हैं और इसी बात को लेकर वह अपने पति से ट्यूशन इत्यादि के माध्यम से आर्थिक सम्पन्नता बढ़ाने की बात करती है। लेकिन प्रोफेसर पति की नैतिकता और शिक्षा प्रदान करने में आचरण की सभ्यता का पता पत्नी को तब मिलता है जब वह अपनी माँ के बीमार होने की खबर पाकर अपनी दो बच्चियों के साथ माँ के घर जाने में रेल से सफर करती हैं, जहाँ उसके पति द्वारा पढ़ाया गया एक छात्र उसका सामान और उसकी बच्चियों को सहारा देकर रेल से उतारता है। तब उसे अनुभव होता हे कि, ''पैसे से बढ़कर सम्मान और आदर ही जीवन की सबसे बड़ी पूँजी है।''

सपाट बयानी और शिल्प की सादगी से परिपूर्ण प्रस्तुत लघुकथा का सौन्दर्य गुरु-शिष्य परम्परा को चरितार्थ बताने में निहित है।

लघुकथाकार हनुमान प्रसाद मिश्र की लघुकथा 'लेकिन खुद' के केन्द्र में सास-बहू के रिश्तों का ताना-बाना बुना गया है। नजर और नजरिया के दो विपरीत छोर पर केन्द्रित लघुकथा आदर्श सोच के विपरीत व्यावहारिक धरातल पर उसी पटल पर आ खड़ी होती है जिस पटल पर सास अपनी बहू के लिए कौशल्या साबित नहीं हो पाती तो सीता का आचरण ढोने वाली बहू भी उसके प्रति सास के दुर्व्यवहार के कारण वह सास के आगे सीता नहीं रह पाती है।

पौराणिक सन्दर्भो को आधार बनाकर प्रस्तुत लघुकथा 'लेकिन खुद' सास-बहू के संबंधों की विलक्षण व्याख्या कर जाती है कि सीता जैसी बहू साबित तब हो पाती है जब सास बहू के प्रति कौशल्या जैसा ममताभरा व्यवहार रखे।

लघुकथाकार कनक हरलालका की लघुकथा 'जानवर' आधुनिक सपाज में व्याप्त नाबालिग लड़की के साथ छेड़-छाड़ के अपराध की दुनिया का समीचीन रूप प्रस्तुत करती है। राजनीतिक हलके से आने वाले विधायक की दबंगाई का कच्चा चिट्ठा खोलने वाली लघुकथा में पंचायत में चुनकर आई महिला सरपंच के बेजोड़ हौंसले को परिभाषित करने वाली एक दृष्टि सम्पन्न लघुकथा है। यह लघुकथा नाबालिग लड़की के साथ छेड़-छाड़ करने वाले विधायक के लड़के के विरोध में तीव्र स्वर मुखरित करती हुई राजनीतिक तौर पर दबंग परिवार से आये विधायक के बदचलन लड़के को भी कानून की गिरफ्त में लेकर उसको सजा देने का अन्ततः ऐसा उपाय चरितार्थ करती है कि चाहे फिर इस आवारा लड़के को बन्दूक की गोली ही क्यों न मार दी जाए!

प्रस्तुत लघुकथा में निहित संवादों का खुलापन और

ग्राम सरपंच तथा विधायक के मध्य बेबाक बातों का सिलसिला लघुकथा के कथानक को पायदार बनाता है तथा लघुकथा के शीर्षक को सार्थकता प्रदान करता है।

लघुकथाकार पवन जैन की लघुकथा 'पनबेसरी' असहाय, निरूपाय तथा अबला नारी के भीतर उसकी चारित्रिक उच्चता तथा उसकी निर्णयात्मक शक्ति का उद्‌घाटन करने वाली सामाजिक यथार्थ की जमीन को तोड़ने वाली एक लोमहर्षक लघुकथा है। लघुकथा का परिवेश मरघट की ओर जाने वाली शवयात्रा की कारूणिक स्थिति के मध्य से उठाया गया है, श्मशान में अपने दिवगंत पति का दाह संस्कार उसकी पत्नी द्वारा किया जाता है, पृतक की पत्नी का ऐसा हौसला देखकर उसके पति के शवदाह में शामिल तथाकथित मनचलों का दिल दहल जाता है, जिसका आलेखन लघुकथाकार ने बड़े ही संयत मगर प्रभावी शैली में बजरिए संवादों के किया है-

''बड़ी हिम्मत खारी है नट गई-एकदम....

''हओं तुमने सरपंच की नजरें नई देखी हती।''

''तो रांड की अब का आरती उतरहे सब एसई देख हें।''

'तो, ते काय नही हाथ पकर लेत, कब लो रडुंआ घूमत फिरहे।''

''न रे भईया, हम उके लायक नईया बडी समझदार, हिम्मत बारी और गंगा सी पवित्र है।''

''तोय कैसे पतों...''

''अर्थी मरघटाई तक आ गई, देखो तो जो का हो रओ।''

''मरघटाई में जनानी पहली बार देखी, कह रई दाग हमई देहें।''

''अब देखत जाओ का करहे पनबेसरी।''

लघुकथाकार आर.एस. माथुर की लघुकथा 'अन्नदान' स्वर्गीय पिता के उत्तरकर्म पर केन्द्रित लघुकथा है, जिसमें मृतक की आत्मा की शान्ति और सद्‌गति के निमित्त दान अथवा ब्राह्मण भोज की सामाजिक परम्परा का दायित्व निर्वहन पुत्र द्वारा किया जा रहा है। लघुकथाकार ने स्वर्गीय पिता के उत्तरकार्य हेतु 'अनाथालय' को चुना ताकि वहाँ रह रहे आश्रितों को भोजन करवाकर दान दिया जा सके।

लघुकथा का कथ्य यहाँ आकर खुलता है जब शोकग्रस्त परिवार की ओर से अनाथालय में भोजन की पत्तलें परोस दी जाती हे तब भोजन प्रारम्भ करने से पूर्व पंगत में बैठा एक अनाथ बालक भोजन करवाने वाले से प्रश्न करता है, ''जिन पुण्यात्मा का स्वर्गवास हुआ है, उनके विषय में कुछ बताएँ ताकि हम दिवंगत आत्मा के लिए प्रार्थना कर सकें। जिस पुण्य आत्मा के प्रताप से हमें आज भोजन प्राप्त हुआ है।'' इसी वाक्य में लघुकथा का सौन्दर्य निहित है।

लघुकथाकार ललित समतानी की लघुकथा 'सरनेम' नियतिवशात् बदलते रिश्तों के कारण लड़की के मूल नाम पर अलग-अलग सरनेम लगाए जाने की पहचान विषयक दुरावस्था का विश्लेषण करती मिलती है। प्रस्तुत लघुकथा नाम और सहारे के माध्यम से विपरीत परिस्थितियों में लड़की का स्वाभिमान बनाए रखने में आकस्मिक रूप में घटित घटनाओं का जाला बुनकर लड़की के नाम के आगे नया 'सरनेम' जोड़ देने की तात्विकता को सिद्ध करती है।

लघुकथाकार आशागंगा प्रमोद शिरढोणकर की लघुकथा 'अबोध कौन' वासनापूर्ति का घिनौना खेल, बलात्कार की काली सूचनाओं से मिलने वाले भय; समाचार पत्रों में नृशंस हत्याओं का प्रकाशन और उसका परिवार के बीच समाचार पत्र के माध्यम से पाठन, ऐसे ही वर्तमान समाज की सामाजिक दुरावस्था के हृदयविदारक चित्रों में खीची समाज के विद्रूप निगेटिव्ह को पॉजिटिव्ह कर दृश्यात्मक वास्तविकता का चित्र प्रस्तुत करती है।

लघुकथाकार कोमल वाधवानी की लघुकथा 'टिकलीवाली' बन्दूक दीपावली के अवसर पर शगुन के लिए पटाखे खरीदने को गई महिला की सम्वेदना को झँकृत करती है, जब वह महिला पटाखे की दुकान पर टिकली वाली बन्दूक के दिलाने के लिए हर आने-जाने वाले से रिरियाकर याचना करती मिलती है। अनाथ बच्चे को टिकली वाली बन्दूक खरीदकर देकर वह महिला इसी को दीपावली पूजन का शगुन मानती है।

यशोधरा भटनागर की लघुकथा 'सम्मान?' हमारी सभ्यता और संस्कृति को कटघरे में खड़ा करने वाली वैचारिक अवमूल्यन की लघुकथा है। हमारी राष्ट्रीय अस्मिता को बचाने में शहीद हुए सैनिक के प्रति हमारी उदासीनता और देश से पहले हमारे भौतिक जीवन से हमारी संलिप्तता को आड़े हाथों लेते हुए प्रस्तुत लघुकथा

'सम्मान?' की संरचना हमारे अंतस को उस स्थिति में झकझोर कर रख देती है जब सैनिक बेटे का शव हवाई जहाज द्वारा उसके अंतिम संस्कार के लिए उसके बूढ़े माँ-बाप अपने साथ अपने गृह नगर ला रहे होते हैं। लेकिन हवाई जहाज की परिचारिका द्वारा सावधान किये जाने के उपरांत भी प्राथमिकता के आधार पर कोई भी सहयात्री स्वयं से पहले श्रद्धावनत होकर शव के साथ शहीद के बूढ़े माँ-बाप को पहले उतरने का अवसर नहीं देता।

लघुकथाकार विजय जोशी 'शीतांशु' की लघुकथा 'माँ के सूत्र' की अंतर्वस्तु व्यक्ति के खुद से लिए संकल्प, माँ की प्रेरणा और पिता के विश्वास को फलीभूत अर्थात् फलरूप में परिणत कर दिखाने वाले कौशल्य से जन्मी है। एवरेस्ट विजय करने की बलवती जिज्ञासा को लेकर पर्वतारोहियों के दल के साथ रत्नेश नामक होनहार युवक भी होता है। लेकिन एवरेस्ट पर चढ़ने को उसकी प्रारंभिक अवस्थाओं को लक्ष्य बनाकर उसकी हौसला हफजाई की तुलना में उसकी हँसी उड़ाते हुए उसका मनोबल गिराने के यत्न में दल के सभी साथी एकजुट हुए मिलते हैं। अंततः मौसम की विपरीत अवस्था के बावजूद रत्नेश एवरेस्ट पर विजयी झण्डा फहराकर दल के साथियों को शर्मसार करते हुए पश्चाताप के गहरे कुएँ में उतार देता है।

डॉ. संगीता भारूका की लघुकथा 'कैकयी' पौराणिक मूल्यों के आधार से बुनी गई लघुकथा है। सौतेली माँ होने का परायापन निरस्त करते हुए लघुकथा की संरचना का मंतव्य 'माता कुमाता न होइ' के नैसर्गिक विचार के स्पर्श से अवतरित हुए। कैकयी सौतेली माँ होकर भी जिस प्रकार राम को श्रीराम बना देती है, उसी प्रकार प्रस्तुत लघुकथा में सौतेली माँ रूढ़िवादी समाज की प्रताड़नाओं को सहन करने के उपरांत भी कर्तव्य परायण भावना के साथ पराई कोख से जाये पुत्र को राम के सदृश रेखांकित किये जाने योग्य पुत्र बना देती है।

लघुकथाकार अदिति सिंह भदौरिया की लघुकथा 'बेटी बचाओ' परम्परागत विचार के विपरीत 'बेटे बचाओ' जैसे सामाजिक आंदोलन को पायदार बनाने के पक्ष में अपना अभिमत देती है। प्रस्तुत लघुकथा का कथ्य हवाई न होकर लघुकथाकार की दृष्टि सम्पन्नता का द्योतक है। वर्तमान में बेटों के कारण दिन-ब-दिन पैदा हो रही सामाजिक दुरावस्थाएँ समाज को गर्त में धकेल रही है। जब तक समाज के दोनों पक्ष अर्थात् बेटी और बेटे अनुशासित जीवन की पराकाष्ठा नहीं पा लेता तब तक हमारा समाज विपन्नता के अंधियारे में घुटता रहेगा। प्रस्तुत लघुकथा 'बेटी बचाओ' में लघुकथाकार ने एक विचार रखा है जो लघुकथा की कथावस्तु को वर्तमान समय के समाज की आंतरिक पीड़ा को बुहारने में सहायक है।

पवन शर्मा की लघुकथा 'षड्यंत्र' हमें सहज, सरल और स्वाभाविक तरीक़े से मानवीय संवेदनाओं का बोध कराती है। यह उनकी लघुकथाओं का विशेष गुण तथा सबसे बड़ी विशेषता भी है। मानवीय संवेदना से अभिप्राय उस प्रत्येक चिन्ता से होता है जो मनुष्य को मनुष्य से जोड़ती है और जिसके फलस्वरूप कोई भी व्यक्ति अपने व्यक्तिगत वृत्त को लाँघकर, अपने पास-पड़ोस, समुदाय, समाज, प्रदेश और राष्ट्र का चिन्तन करता है। वह मानवीय संवेदना ही है जो हमें यह बोध कराती है कि हमें कहाँ खड़े होना है, किसका साथ देना है, किसका विरोध करना है। मानवीय संवेदनाएँ हमें अच्छे-बुरे का ज्ञान कराती हैं। इस संदर्भ में पवन शर्मा की लघुकथा मानवीय संवेदनाओं और वर्तमान जीवन का दर्पण है, जिसमें जीवन के बिंब-प्रतिबिंब के साथ-साथ मानव मन के चरित्र की व्यापक गहराई दिखाई पड़ती है। इस लघुकथा के पात्र कहीं-से-कहीं तक बनावटी नहीं लगते। पात्रों द्वारा आँचलिक बोली के संवाद-अदायगी का अंदाज़ पाठकों के दिल में उतर जाता है। उनकी इस लघुकथा का परिवेश और चित्रण भी लघुकथा के महत्वपूर्ण पात्र मालूम होते हैं जो लघुकथा को सहज-सरल भाव से चरमोत्कर्ष की ओर ले जाते हैं। इस लघुकथा में दद्दा अपने लड़के के रिश्ते की बात करके लौटे है। बात करके क्या लौटे है, एक तरह से सौदा करके लौटे है।

''कितेक के यहाँ गए थे?'' अम्मा पूछती है।

''कईन के यहाँ।'' दद्दा ने बताया।

''कछू जमी?''

लघुकथाकार ने समाज की दुखती रग पे हाथ रखा है। यह लघुकथा अपने आँचलिक प्रवाह के साथ आगे बढ़ती है और पाठकों को शीर्षक की सार्थकता को समझने की उत्सुकता बनी रहती है।

''मोए इतनी जल्दी काए के लाने बेच रहे हो दद्दा।'' बोलते हुए एक विद्रूपता उसके चेहरे पे तैर आयी।

इस तरह लघुकथा तो समाप्त हो जाती है परंतु यहाँ

से एक नयी लघुकथा का प्रारंभ होता है। जब दद्दा के पास साठ एकड़ खेत है, 'ट्रेक्टर चल रओ है, कोई कमी नईं है मोए!' सबकुछ है तो फिर वह दूसरों के आगे हाथ फैलाने क्यों गये थे? यह 'षड़यंत्र' नहीं तो और क्या है? ज़ाहिर-सी बात है दद्दा का लड़का पढ़ा-लिखा है। पढ़ा-लिखा होने के साथ-साथ वह समझदार और स्वाभिमानी भी है। इसमें कोई दो राय नहीं कि इस लघुकथा के पात्र शहर में भी हैं, महानगर में भी हैं। ख़रीद-फ़रोख्त का यह व्यापार आज भी फल-फूल रहा है।

-'शशिपुष्प', 74-जे/ए, स्कीम नं. 71, इंदौर

षड्यंत्र

● **पवन शर्मा**

वह देख रहा है। दद्दा को सभी घेरे हुए बैठे हैं। अम्मा, उसकी दोनों बहनें... सीमा, लता और छोटा भाई विनोद। बीच में बैठे दद्दा बतिया रहे हैं। दद्दा अभी-अभी लौटे हैं।

''कितेक के यहाँ गए थे?'' अम्मा पूछती हैं।

''कईन के यहाँ।'' दद्दा ने बताया।

''कछू जमी?''

''जमी का... फोटो ले आओ हूँ।'' दद्दा ने कहा और बैग में से चार फोटो निकालकर अम्मा की ओर बढ़ा दीं। अम्मा के पास जाने से पहले ही सीमा और लता ने फोटो झपट लीं। फोटो देखकर उन दोनों के चेहरे पर प्रसन्नता छा गई। विनोद भी झुककर देखने लगा।

''अम्मा, जे ठीक है।'' सीमा बोली।

'नईं अम्मा, जे ठीक है।'' लता बोली।

वह कुछ नहीं बोला। उसे ये सब तमाशा लग रहा था। अब अम्मा भी फोटो देखने लगीं। दद्दा कह रहे थे, कमीज उतारते हुए, ''मैंने हरेक के यहाँ जे कही कि साठ एकड़ खेत है... ट्रैक्टर चल रओ है... गाय-बैल-भैंस... सब कुछ है... कोई कमी नईं है मोए!... बस, मौड़ी भर ठीक होनी चाहिए। और कहो कि मेरो मौड़ा एम.ए. फाइनल में है जे साल... और मौड़न से सीधो... कोई ऐब नईं बामे... चाहे तो चल के देख लेओ।'' दद्दा थोड़ी देर के लिए रुके, बीड़ी सुलगाई, फिर बोले, ''जे ऊपर वाली फोटो है न... जाके बाप ने कहो कि ब्याह में कोई कसर नईं रखूँगो... आवभगत पूरी... पच्चीस हजार देवें कूँ भी बोलो है। मैं सोच रओ हूँ कि जई के साथ पक्की कर देऊँ... और जे नीचेवाली फोटो है न... जाके बाप ने बीस तक की बात करी...। दद्दा ने कहा और बीड़ी का जोर से सुट्टा मारा और हलक से ढेर सारा धुआँ उगल दिया।

''अब तो जईके ऊपर है कि जाए कौन-सी मौड़ी पसंद आएगी।'' अम्मा बोलीं।

वह मन-ही-मन सुलगने लगा।

''काऐ रे, कौन-सी ठीक है?... देख ले... तू भी देख ले... नईं तो बाद में हमें ही दोष दे... बता देईए... परौं तक जवाब भेजनो है।'' दद्दा बोले।

वह देखता है कि सीमा और लता आपस में धीरे-धीरे कुछ बात कर रही हैं... विनोद भी उनमें ही जा मिला है... अम्मा उठकर दद्दा के पास जा बैठी हैं... उसे लगा... घर में सभी उसके विरुद्ध षड्यंत्र रच रहे हैं... क्या दद्दा... क्या अम्मा... क्या सीमा... क्या लता... क्या विनोद... सब!

''मोए इतनी जल्दी काए के लाने बेच रए हो दद्दा!'' बोलते हुए एक विद्रूपता उसके चेहरे पर तैर आई।

इस बार

● **सन्तोष सुपेकर**

''देखो यार तुमसे पहले भी कहा है, किसी के जाति-धरम पर मत जाया करो।''

''और तुम जो दूसरों की जाति पर कमेन्ट कसते हो वो? वो क्या है? परसों का दिन भूल गए? जब जाति की बात तुमने निकाली थी, मैंने नहीं।''

उस दिन बातों-बातों में अचानक किसी के मुख से कुछ आपत्तिजनक शब्द निकले तो गरमागरमी बढ़ गई। सबकी आवाजें तेज होने लगीं और जोरदार बहस से मेरा ड्रॉइंग रूम गूंजने लगा। सभी के चेहरे तमतमाने लगे, दो गुट बन गए, तर्क पर तर्क दिए जाने लगे, मोबाईल पर आँकड़े दिखाए जाने लगे। सामने मेज़ पर रखी चाय में किसी की दिलचस्पी नहीं रही, चिल्लाहट के बीच मैंने कई बार चाय पीने के लिये कहा भी पर किसी ने ध्यान नहीं दिया, जोरदार बहस के बीच मेज पर रखी गर्मागर्म चाय ठंडी होने लगी।

हारकर, विषय बदलने के लिए मैंने टेलीविजन चालू कर दिया। एक समाचार चैनल पर भिन्न धर्म वाला एक व्यक्ति हमारे, हम चारों के धर्म पर अनर्गल टिप्पणी कर रहा था तो कुछ सोचकर मैंने वही चैनल चलने दिया और

वॉल्यूम बढ़ा दिया।

उसकी भड़काने वाली भाषा सुनकर सबको जैसे लकवा मार गया। चिल्लाते हुए सब, एकाएक चुप हो गए। कमरे में अब सिर्फ टीवी की आवाज ही सुनाई पड़ रही थी। सबने एक दूसरे को देखा और हम चारों के चेहरे फिर से सुर्ख होने लगे।

पर अब कमरे में हमारे बीच, दो नहीं, एक ही 'हम' था।

मेज पर पड़ी ठंडी होती चाय अब एकाएक गर्म लगने लगी थी और सबके हाथ उसकी ओर बढ़ चुके थे, इस बार मेरे बिना कहे।

संगमरमरी आतिथ्य

● **बी. एल.आच्छा**

बहुत दिनों से उनका आग्रह था, नए घर को देख लूँ। सीमेंट कांक्रीट की सड़क को पार कर उनके बंगले पहुँचा। घंटी बजने के बावजूद बड़ी देर से दरवाजा खुला। संयोग से नौकर ने नहीं खोला। वे बोले- ''आइए, आप जाए तो सही!''

''मकान तो बहुत शानदार बनाया है।''

''हाँ, चालीस बाई साठ का है। अब तो जमीनों के दाम ही आसमान पर हैं।''

''पर आपने तो आसमान में ही तीसरी मंजिल तान दी है।''

''अरे अपन बनाते हैं, तो फिर अच्छा ही। यह देखिए, हॉल तो पूरे ग्रेनाइट का है।''

''बहुत सुंदर।''

''लाइटिंग भी सब मॉडर्न है, अधिकतर इंडिया से बाहर का।''

''खूबसूरत।''

''इस ज़ीने को आर्किटेक्ट ने कलात्मकता दे दी है।''

''देखते ही बनता है!''

फिर वे एक एक कमरे, लेट-बाथ की आधुनिकता को नुमाइश की तरह पेश करते रहे। मैंने कहा- ''मार्बल तो उम्दा क्वालिटी का है।''

वे बोले- ''माल में तो कोई कसर छोड़ी ही नहीं है। क्वालिटी के साथ कोई समझौता नहीं।''

बड़ी देर बाद ड्राइंग रूम में बैठे हुए उन्होंने सोफे से एक मीटर दूर रखी सेंट्रल टेबल की ओर इशारा करते हुए कहा- ''यह लीजिए ना!''

दूर ट्रे में सजे सूखे मेवे दूरी की वजह से मुँह में गीले नहीं हो पाए। मुझसे इतनी दूर का जबानी आतिथ्य निभाया नहीं गया। बोल दिया- ''अभी लंच लेकर ही आया हूँ।''

''अच्छा, चाय तो चलेगी?''

अब मैं क्या बोलता। चाय की लंबी प्रतीक्षा के बीच वे बोले- ''कैसा लगा हमारा मकान?''

मुझसे रहा न गया। बोला- ''इमारतों के मार्बल तो ताजमहल सरीखे लगते हैं, प्रेम दिख जाए तो सुहाने हो जाते हैं।''

लाचार

● **विनीता शर्मा**

डॉक्टर मनोज और डॉक्टर चेतन बहुत ही घनिष्ठ मित्र थे। साथ ही कोरोना ग्रस्त मरीजों का इलाज भी कर रहे थे। पता नहीं कहाँ और कैसे चूक हो गई और डॉक्टर मनोज कोरोना योद्धा होते हुए भी, कोरोना से जीवन की जंग हार गए।

एक दिन डॉक्टर चेतन अपने मित्र डॉ. मनोज के घर गये। लॉन में डॉक्टर मनोज की 4 वर्षीय बिटिया खेल रही थी। डॉक्टर चेतन को देखते ही वह हुए बोली, ''अंकल-अंकल आप पापा से मिलने आए हो ना! पर पापा तो भगवान जी को देखने गए हैं। पता है, भगवान जी की तबीयत खराब हो गई है।''

नन्ही बिटिया की मासूमियत से भरी बातें सुनकर, डॉक्टर चेतन अपने आप को प्रकृति के सामने बेबस और असहाय महसूस करने लगे।

लिफाफा

● **ब्रजेश कानूनगो**

''पिताजी आप घर चलिए, कब तक यहां वृद्धाश्रम में अकेले घुटते रहेंगे!''

''बेटा, अब तो कोई घुटन नहीं होती यहाँ। यहां के हमउम्र साथी सगे रिश्तेदारों की तरह ही हो गए हैं। जब तुम पांच वर्ष पहले तुम्हारी माँ के जाने के बाद यहां छोड़ गए थे, तब जरूर बहुत अकेलापन लगता था। अब सब ठीक है, मन लग गया है यहां।''

''परन्तु पिताजी, अब आपका पोता राहुल भी बड़ा हो गया है। बहुत याद करता है आपको। संध्या ने भी आपकी सेवा के लिए अपनी नौकरी छोड़ दी है। वह भी आपका अब पूरा ध्यान रखेगी। आप चलिए भी अब।''

''बेटा, मैंने तो सुना था संध्या की कम्पनी में हुई छंटनी में कई कर्मचारियों को जबरन हटाया गया था?''

''हाँ, वह भी है, पर उसने नई नौकरी नहीं की है।''

''पर बेटा, मेरा घर लौटना तो मुश्किल ही है अब। तुम ही आते जाते रहना।''

''खैर पिताजी, जैसी आपकी मर्जी! आपके दफ्तर में आपकी पेंशन और अन्य राशि के दावे का प्रकरण निपट गया है। पिछले बीस वर्षों की कोई पचास लाख की राशि मय ब्याज के आपको मिली है। इस प्रपत्र पर आपके हस्ताक्षर करके भिजवाना है उन्हें सात दिनों में।''

पुत्र ने एक सरकारी लिफाफा पिता के हाथों में रख दिया।

परोपकारी उवाच

● **राम मूरत राही**

जुग्गीलाल आँगन में दादाजी के हाथ से लगाये गये एक आम के बुजुर्ग पेड़, जिसे वो दादा कहकर संबोधित करता था, उसे पकड़कर फूट-फूटकर रोने लगा।

पेड़ ने उसे रोता हुआ देखकर पूछा- ''पुत्र जुग्गी! क्या हुआ, तुम आज इस तरह रो क्यों रहे हो, कोई तकलीफ़ हो तो मुझे बताओ?''

जुग्गीलाल सिसकते हुए बोला- ''दादा जी! कोरोना महामारी की वजह से शहर का काम बंद होने से गाँव आना पड़ा। अब घर में खाने के लाले पड़ रहे हैं। सरकार द्वारा दी जा रही सहायता भी कम पड़ रही है। खेतों पर भी कोई मजदूरी पर नहीं रख रहा है, क्योंकि शहर से नौकरी छोड़कर आये लोग खुद अपने खेतों पर काम कर रहें हैं। मनरेगा में भी गाँव का प्रधान अपने वालों को ही मजदूरी पर रख रहा है। समझ में नहीं आरहा है कि परिवार वालों का पेट कैसे भरूँ?''

जुग्गीलाल की परेशानी सुनकर पेड़ चिंतित होकर बोला- ''मत रो पुत्र! तुम्हारी समस्या का कुछ न कुछ तो हल निकालना ही पड़ेगा।''

पेड़ थोड़ी देर सोचने के बाद बोला- ''पुत्र! मुझसे तुम्हरा दुःख देखा नहीं जा रहा है। अब तुम्हारी समस्या का यही हल है कि तुम मेरी सारी डालों को काटकर बेच दो।''

यह सुनकर जुग्गीलाल तड़प उठा, वह बोला- ''माँ-बापू के जाने के बाद आप ही मेरा सहारा हैं। मैं सपने में भी आप की डालों को काटने का सोच नहीं सकता।''

''पुत्र! आज हम जिंदा हैं, तो तुम जैसे नेक लोगों की वजह से, नहीं तो पृथ्वी पर ऐसे नासमझ लोग भी हैं, जो अपने स्वार्थ की खातिर हमें काटकर, पर्यावरण को भारी नुक़सान पहुँचा रहें हैं।''

थोड़ा रुककर पेड़ ने फिर कहा- ''पुत्र! तुम मेरी सारी डालों को काटकर बेच दो, और जितने भी रुपये मिलेंगे, उससे तुम कोई व्यापार कर लेना। तुम्हारा गुजारा हो जाएगा।''

पेड़ की बात सुनकर जुग्गीलाल की आँखों से आँसू बहने लगे। वह सिसकते हुए बोला- ''दादाजी! बचपन से तुम्हारी बाँहों में खेलकर बड़ा हुआ हूँ। तुमने मुझे खाने के लिए फल दिये। तेज गर्मी में मुझे अपनी ठंडी-ठंडी छाँव देकर, मेरे तन-मन को ठंडक पहुँचाया, और जब कभी मन दुखी हुआ, तो मुझे अपनी बाँहों में भरकर, दादाजी की तरह लाड़ प्यार कर मेरा दुःख कम किया। अब मैं उन्हीं बाँहो को कैसे काट सकता हूँ?''

जुग्गीलाल के मुँह से अपने प्रति अथाह प्रेम की बातें सुनकर, पेड़ की आँखों से झर-झर आँसू बहने लगे। फिर अपने आपको संभालते हुए जुग्गीलाल को समझाते हुए कहा- ''पुत्र! हमें भगवान ने पृथ्वी पर परोपकार के लिए ही पैदा किया है। आज नहीं तो कल मुझे नष्ट होना ही है। इसलिए तुम्हें मैं शपथ देता हूँ कि तुम मेरा कहा मानों और मेरी डालियों को काट दो। हाँ, अगर तुम्हें बहुत दुःख हो रहा है, तो तुम मेरा एक आदेश मानों, डालियों के बदले कहीं चार-पाँच पौधे लगा दो, और उनकी देखभाल कर बड़ा करो। इससे पर्यावरण को भी नुक़सान नहीं पहुँचेगा, और तुम्हारा दर्द भी कम हो जाएगा।''

जुग्गी लाल की आँखों में भूख से बिलखते बच्चों का चेहरा घूमने लगा और फिर...।

पनबेसरी

● **पवन जैन**

राम नाम सत्य है, सत्य बोलो मुक्त है। बोलते हुए बारी-बारी से कंधा बदलते शवयात्रा मरघट की ओर जा

रही थी।

कंधा बदल के पीछे आया रामकिशन बोला, ''अच्छो भओ दरूआ मर गओ, अब उकी लुगाई शांति से तो जी पायेगी।''

दूसरे ने जबाव दओ ''दवा-दारू को खर्चा भी बच गओ, पे उको रंडापा कैसे कटहे, चालीसक साल की तो हुईये।''

वह बढ़ते जा रहे और दोनों धीरे-धीरे बतिया रहे, ''सरपंच ने पूंछी तो हती, बोल आत्महत्या लिखवा दयें, कछू तो मिल जेहे तोय सरकार से।''

उने तुरतई जवाब दओ, ''दारू पी-पी के मर गये, आत्म हत्या ही तो है, अबे उमरई का हती उनकी।''

सरपंच ने फिर समझाया, ''बोल तो फिर, थोड़े चक्कर लगाने पड़ हें, आत्म हत्या को हल्ला करा दें, सब लिखा-पढी हम करवा देहें।''

फटाक से बोली थी, ''रहन दो सरकार इनकी आत्महत्या साबित करते-करते हमें न जाने कितनी बार मरने पड हे।''

''बडी हिम्मत बारी है नट गई एकदम...''

''हओं तुमने सरपंच की नजरें नई देखी हती।''

''तो रांड की अब का आरती उतरहे सब एसई देख हें।''

''तो, ते काय नही हाथ पकर लेत, कब लो रडुंआ घूमत फिरहे।''

''न रे भईया, हम उके लायक नईया बडी समझदार, हिम्मत बारी और गंगा सी पवित्र है।''

''तोय कैसे पतों...''

अर्थी मरघटाई तक आ गई, ''देखो तो जो का हो रओ।''

''मरघटाई में जनानी पहली बार देखी, कह रई दाग हमई देहें।''

''अब देखत जाओ का करहे पनबेसरी।''

जाके पैर फटे न बिवाई....

● **ज्योति जैन**

शुक्ला जी ने जैसे ही क्रोध में मोबाइल पटका।

''क्या हुआ जी...?'' पत्नी चिंतित थी।

''होना क्या है....! साहब लोग कह रहे हैं लॉकडाउन के समय की केवल एक माह की पगार ही मिलेगी... यह कोई बात है ....सरकार ने कहा है.. पूरी देनी पड़ेगी।'' वह गुस्से में हांफ रहे थे।

''तनिक शांति धरो जी.....'' पत्नी ने कहा।

''अरे काहे की शांति... हैं..? और तुम चुप करो जी.. अक्ल तो है नहीं... कोरोना था तो काम पर कैसे जाते..? पर पगार तो उन्हें देनी ही चाहिए... देनी ही पड़ेगी ....स्या...''

वह बड़बड़ा ही रहे थे कि पड़ोसी मोहन जी आ गए। मोहन जी व शुक्ला जी के बेटे एक ही स्कूल, एक ही क्लास में पढ़ते थे।

'सुना क्या शुक्ला जी...! मोहनजी ने उन्हें नई जानकारी दी... कि स्कूल वाले पूरी फीस लेने वाले हैं..।''

''हैं... शुक्ला जी को दूसरा झटका लगा... किसने कहा आपसे..?''

''अंदर से बात पता चली है.... मोहन जी राजदाराना अंदाज में बोले.... ''स्कूल प्रशासन ने तय किया है कि स्कूल खुलते ही सबसे पहले फीस ली जाएगी....''

''काहे की फीस भाई... हैं... स्कूल तो गए ही नहीं ....जब गए नहीं तो काहे रुपए देंगे ...हैं...?''

अब शुक्ला जी की पत्नी उन्हें मुंह बाए देख रही थी। उन्हें अक्ल जो नहीं थी।

जानवर

● **कनक हरलालका**

ग्राम पंचायत की आरक्षित महिला सीट से जीत कर गुलाब अब गांव की सरपंच थी। पर गांव के बाहुबली जमींदार विधायक की दबंगई से त्रस्त जनता को यह निस्तारण का रास्ता न लग रहा था। वे इसे मात्र एक राजनैतिक रस्म निबाही मान कर चुपचाप थे।

विधायक जी भी अपने दबदबे और विजय के प्रति आश्वस्त अपने रौबदाब और चमचों सहित उदण्डता से पंचायत में पंहुचे थे। पंचायत में उनके पुत्र के खिलाफ एक महिला की अपनी नाबालिग बिटिया से छेड़छाड़ की अर्जी की सुनवाई थी।

विधायक जी बोले- ''अब सरपंचाइनजी, जवान लड़के तो खुले सांड से होवे हैं जी।''

''पर सांड तो जानवर होवे है विधायक जी, और, छुट्टा तो और भी खतरनाक।''

''आप भी तो कभी न कभी इनके सामने पड़ी होंगी

न, आपको भी तो पता होवेगा ही न।'' विधायक जी मुस्कुराए।

''हाँ तभी तो मैं कहूँ, जानवर की जगह तो जंगलों में होवे है, घरों और गांवों में ना होवे है।''

''पर उन्हें बांध कर रखना तो वश की बात न होवे है जी। क्यों, ठीक कहा न मैंने, क्या कहते हो भाईयों?'' विधायक जी ने कुटिलता से मुस्कुराते हुए अपने चमचों की ओर समर्थन की उम्मीद में देखा।

''हां-हां बात तो ठीक ही कह रहे हैं विधायक जी।'' चमचों ने हां में हां मिलाई।

''तो आप क्या कहती हैं सरपंचाइन..।''

''आपके ये भाई क्या कहेंगे, मैं ही पुलिस और जंगल विभाग वालों को खबर कर देऊं हूँ पकड़ कर जंगल में छोड़ आवेंगे।'' गुलाब ने कहा।

''और जंगल से लौट आवें तो..'' विधायक के एक साथी ने सवाल उछाला।

''फिर भी वश में न आवे तो चाहे जंजीरों में जकड़ कर कांजी हाउस में बंद करे दें..।''

''और जंजीर तोड़ कर फिर बाहर आ जाएं तो...।'' कोई मजाक उड़ाने के मूड में था।

''तो फिर बेशक गोली मार देंवें।'' सरपंचाइन की हुंकार से ग्राम सभा में सन्नाटा छा गया।

मज़बूरी

● **विजया त्रिवेदी**

खन्ना के घर पर गहरा सन्नाटा छाया हुआ था।

एकदम ह्रष्ट पुष्ट दिखने वाले खन्ना जी को अचानक कोरोना वाइरस ने अपने चपेटे मे ले लिया।

परिवार के सभी सदस्य भय के प्रकोप से उनके पास आने से कतरा रहे थे।

स्टोर रूम में उनके रहने का इंतजाम कर दिया गया।

उनका हम दर्द, एकमात्र सहारा झबरू कुत्ता अपने स्वामी के साथ उसी कमरे में रहने लगा।

तभी पड़ोस की बूढ़ी अम्मा मुँह पर कपड़ा बाँधे पत्नी से बोली- ''अरे! कोई इसके पास दूर से खाना ही सरका दो। वे अस्पताल वाले तो इसे भूखे को ही ले जायेंगे उठाके।''

बहुओं ने खाना सास को पकड़ा दिया।

पत्नी ने कँपकँपाते हाथ से थाली पकड़ी।

इतना देख कर बूढ़ी अम्मा बोली- ''अरी! तेरा तो पति है तू भी...? मुँह बाँध के चली जा और दूर से थाली सरका दे। वो अपने आप उठाकर खा लेगा।''

ये सारी बातें खन्ना जी सुन रहे थे। उनकी आँखें नम थी और काँपते होंठों से कहा- ''कोई मेरे पास न आये तो अच्छा है मुझे भूख भी नहीं है।''

और वीरान आंखों से जमीन पर बिछी चटाई पर वह लेट गए।

सीवन

● **अंजू निगम**

''रोटी-शोटी खा ले।'' कपड़े में लिपटे रोटीदान को कंधे से उतारते जस्सी बोल उठी। उसके दूसरे हाथ में छाछ की तपेली थी। बिंदा आ लस्त सा जमीन पर बैठ गया।

''बहुत गर्मी गिर रही है इस बार।''

जस्सी ने बिंदे को देखा। जेठ ने उसका सारा रंग ले लिया था। ''हम्मम'' कह उसने के बिंदे के आगे थाली रख दी।

''दो कौर तु भी ठेल ले। सुऐरे से काम में बनी है।''

''मैं खा लूँगी। पहले तू मुँह झुठा कर ले।'' जस्सी को बिंदे की फिक्र अच्छी लगी।

वह सुच्चे मन से बैठ गयी। सामने लहलहाता खेत खड़ा था। जस्सी का मन जुड़ गया।

''रब्बा खैर करे। इस बार खेत पूरा भरा है। सोने के दाने उग रहे हैं।'' जस्सी के आगे गिरवी रखी सोने की बालियाँ चमक गयी।

बिंदे को जस्सी की ये टोक खल गयी। ''अरे निगोड़ी, तुझे हर काम में टोक देनी है। पिछले बार की याद है, आधा खेत नुच गया था।''

जस्सी की भवें तन आई, ''पिछला न सुना। तेरा आधा खेत साहूकार का गोदाम खा गया था। वहाँ तो तेरी जुबान गीली लकड़ी रहती है। बस, धुआं छोड़ती है, आग न दिखती।''

बिंदे का हौसला मरा था। वह अपनी हथेलियाँ बाँचने लगा। मन में सोच उठी, ''इन लकीरों को सारी जिदंगी उधेड़ा पर जाने वह कहाँ रूठी बैठी है?''

जस्सी ने जब बिंदे का ये हाल देखा तो पिघल गयी,

''तु हौल क्यों खाता है। इस बार तुझे साहूकार की कैसी आब। तूने बैंक का लोन लिया है, सूद भी चढ़ेगा तो साहूकार सी पकड़ नहीं रखेगा। बीज-खाद भी देख, कितने सुच्चे है। तुझे खबर है कि अबकी आधा गाँव साहूकार की ओर से मुड़ गया है। इस बार साहूकार का गल्ला खाली जायेगा।''

फसल कटने के पहले साहूकार की ऐलानी आई, सारे गाँव के लिए। अगले दिन बैठक जुड़ेगी।

बैठक में साहूकार अपनी करनी पर उतरा, ''तुम सब खूब सयाने हो गये हो। बैंक की ओट लगा रहे हो। जाओ, जहाँ बसर हो पर मेरा बकाया देकर।''

''हाँ आज सारा हिसाब-किताब होगा। देखे, किसके नाम कितना ब्याज लिया और कितना सूद चढ़ा? सबके बहीखाते यहीं मँगवाओ।'' बैंक के बड़े अफसर का फरमान आया।

साहूकार को ऐसी कुछ उम्मीद नहीं थी। पुराने बहीखाते तो हेर-फेर दिये गये थे पर नये में कलम की नोक नहीं चल पायी थी।

''आज देखे बकाया किसका निकलता है।'' अफसर के रौब के नीचे साहूकार दबा था।

इस बार साहूकार बकाये के लपेटे में घिरा था और आज उसके हाथ की सीवन उधड़ रही थी।

खालीपन

● **राजेन्द्र वामन काटदरे**

उन्होंने फिर घड़ी देखी। रात के साढ़े बारह बज चुके थे। चिंता के कारण उनका बुरा हाल था। अमित अभी तक नहीं आया था, न ही उसने फोन किया था। उन्होंने पत्नी रमा की ओर देखा जो उन्ही की तरह चिंतातुर होकर माला फेर रही थी।

''बहुत बुरी आदत है अमित की। कितनी बार समझाया कि अगर देर से आना हो तो कम से कम एकाध फोन कर दिया करे, मगर नहीं। अपने माँ-बाप को सताना कोई इससे सीखे।'' रमा कुढ़ते हुए बोली।

''किसी जरूरी काम में उलझ गया होगा, आता ही होगा।'' उन्होंने खुद के गुस्से पर काबू रखते हुए पत्नी को समझाया।

रात करीब एक बजे अपनी की से दरवाजा खोल अमित भीतर आया व उनके कुछ कहने से पहले ही, उन पर बरसना शुरू कर दिया। ''कमाल करते हैं आप लोग भी, क्यों जाग रहे हैं अब तक? माँ को बताया तो था कि फॉरेन से डेलिगेशन आया हुआ है सो चार-छै दिन देर से ही घर लौट पाऊँगा।''

फिर वह माँ से मुखातिब हो बोला, ''माँ, कितनी बार कहा है कि आप लोग बेवजह चिंता न किया करें।''

''हाँ, तूने बताया था रे, पर मैं भूल गई।'' रमा ने धीरे से कहा। उनका गुस्सा भी अमित को देख भर लेने से शांत हो गया था। उन्होंने भी शांत स्वर में कहा, ''चिंता न करें कहना आसान है। जब हमारी उमर का होगा, तभी समझ पायेगा इस उमर की चिंताएं..।'' अचानक उन्हें याद आया कि जब कभी उन्हें देर होती तो उनके बाऊजी भी तो उनसे यहीं कहते थे और वे मन ही मन मुस्कुरा दिए।

कुछ ही देर में अमित अपने कमरे में सोने चला गया और वे दोनों एक अजीब सा खालीपन महसूस करने लगे। ढ़लती उम्र के कारण दोनों को नींद तो शायद अब भी नहीं आनी थी मगर अब जागने का कारण भी ख़त्म हो चुका था।

जीवन की पूंजी

● **सुषमा व्यास 'राजनिधि'**

निधि अकसर अपने प्रोफेसर पति से लड़ पड़ती थी। ''क्या कमाते हो? बंधी बंधाई तनख्वाह हाथ में लाकर रख देते हो। महीने का खर्च कैसे चलाती हूं मैं ही जानती हूँ। ट्यूशन भी नहीं करते बड़े आदर्शवादी बनते हो। बच्चों को फ्री में ही पढ़ा देते हो–ऊंह।''

''मेरे लिये तो बड़े घरों से रिश्ते आये थे पता नहीं पिताजी ने यहाँ क्यों ब्याह दी।'' महत्वाकांक्षी निधि का ये रोज का रोना था।

माँ के अचानक बीमारी की खबर सुनकर निधि अपनी दो छोटी बच्चियों को लेकर अकेली ही ट्रेन में बैठ गई। ट्रेन में भारी भीड़ और निधि के पास भारी भरकर सामान। स्टेशन पर कैसे उतरूंगी? सामान कैसे ऊतारूंगी? हाथ में एक दूधमुंही बच्ची और दूसरी पांच साल की। चिंताग्रस्त थी निधि।

गाड़ी रूकते ही निधि लगभग घसीटते हुऐ सामान को किसी तरह ट्रेन के दरवाजे के समीप लाई। इतने में प्लेटफार्म पर एक सिपाही तेजी से निधि के सामने आकर खड़ा हो गया।

छुटकी को निधि के हाथ से गोद में ले लिया। बड़ी

को एक हाथ से नीचे उतार दिया और सारा सामान मिनटों में नीचे उतार लिया। ये सब इतनी जल्दी हुआ कि निधि भौंचकी रह गई। कौन है ये? बच्चियों को भी उतार लिया। थोड़ा डर भी गई। ट्रेन से लगभग कूद ही पड़ी।

इतने में पुलिसवाले ने झट उसके पैर छू लिये। ''मुझे नहीं पहचाना मैड़म? मैं मुकेश। सर से पढ़ने आता था।'' अब तो निधि भी बोल उठी ''अरे मुकेश तुम?'' बेहद गरीब परिवार का मुकेश प्रोफेसर पति से पढने आता था।

''हां मैड़म! सर के आशीर्वाद और दी हुई शिक्षा से ही मेरी नौकरी रेलवे पुलिस में लग गई और आजकल इंदौर में यहीं पोस्टींग है। मेरा और मेरे परिवार का सर ने जीवन संवार दिया।''

ऐसा कहकर उसने सारा सामान हाथों में ले लिया और टैक्सी स्टैंड तक लेकर गया। बेटियों के हाथ चॉकलेट और फ्रूटी से भर दिये और निधि को टैक्सी में बैठाकर टैक्सीवाले को सख्त हिदायत कि ''अच्छे से घर छोड़कर आना।''

निधि जब पैसे देने लगी तो बोला- ''आपके लिये इतना भी नहीं कर सकता क्या मैं मैड़म। सर मेरे लिये किसी भगवान से कम नहीं'' और फिर से झुककर निधि के पैर पड़ लिये उसने। आज निधि का चेहरा गर्व और खुशी से चमक उठा। पहली बार उसे अहसास हुआ कि पैसे से बढ़कर सम्मान और आदर ही जीवन की सबसे बड़ी पूँजी है।

अनाथ वृक्ष

● **दिलीप जैन**

जिस निर्माणाधीन मल्टी के सामने मैं अभी खड़ा हूँ, वहाँ कभी एक बंगला हुआ करता था। बंगले के बाहर खुला आँगन था। आँगन में एक वृक्ष था-घना और छायादार। उसे यहाँ के बाशिंदों के पूर्वजों ने लगाया था। उनके उत्तराधिकारियों ने उसे परिवार के सदस्य की तरह पाला, पोसा, बड़ा किया। वृक्ष ने भी अपनी जड़ें यहाँ की गहरी जमाई। परिवार के सदस्यों पर अपनी छाया सदैव बनाए रखी। सावन में इस पर झूले डलते थे। बच्चों ने इस पर चढ़कर कूदना सीखा। सूखी पत्तियों की गेंद बनाकर टहनियां तोड़कर उनसे खेलना सीखा। पंछियों ने इस पर घोंसले बनाए। इस परिवार से ही उन्हें भी दाना पानी मिल जाता था। कुल मिलाकर इस धमा चौकड़ी में खासी चहल पहल रहा करती थी।

समय गुजरा। बच्चे उच्च शिक्षा के लिए विदेश चले गए। वहीं नौकरी करने लगे। अपना परिवार वहीं बनाकर वहीं बस गए। अपने बच्चों की राह तकते इस घर के मालिक मालकिन दुनिया से ही चल बसे। उनके जाने से बंगला ही सूना नहीं हुआ, वृक्ष भी अनाथ हो गया। उस बार पतझड़ में जो पत्ते दरें तो फिर नहीं हरियाया। पंछियों ने भी अपने डेरे अन्यत्र बना लिए।

बरसों बाद बच्चे थोड़े समय के लिए अपने वतन आए। बंगले को किसी बिल्डर को बेच लौट गए। बिल्डर ने बंगले पर बुल्डोजर चलवाया, वृक्ष की जड़ों में मट्ठा डाला, तने को आरी से कटवाया, टहनियाँ मजदूर जलावन के लिए ले गए। अब वृक्ष अनाथ जो हो गया था।

सुनामी सड़क

● **चेतना भाटी**

नटखट नन्हे को सुलाने की असफल कोशिश करते उसने पाया- बचाओ-बचाओ का शोर है चहुँओर। सैकड़ो वृक्ष ढह गए, हजारों आशियाने उजड़ गए। शहर की ओर से बदहवास उड़ती आती चिड़िया से उसकी देहातन सखी ने पूछा- ''का सखी सुनामी?''

''ना सखी, सड़क।'' बेहोश होकर लुढ़कने के पहले हाँफते हुए वह बोली थी।

देहातन ने झट घबराकर बच्चे को सीने से लगाया- ''बेटा, सो जा, नहीं तो सड़क आ जाएगी।''

सहमा बच्चा सिकुड़ कर सो गया। सड़क चौड़ीकरण ने सब कुछ समेट लिया था।

एक्सीडेंट

● **डॉ. योगेन्द्र नाथ शुक्ल**

नींद खुलते ही नीतीश का ध्यान हमेशा की तरह घड़ी पर चला गया दोपहर के बारह बज रहे थे।

नीतीश फैक्ट्री में शिफ्ट इंचार्ज था और वीणा प्राइवेट कंपनी में प्रशासनिक अधिकारी। नीतीश की फैक्ट्री घर से 40 किलोमीटर दूर थी और वीणा का दफ्तर 25 किलोमीटर। महानगर का व्यस्त जीवन उस पर नाइट ड्यूटी और ओवर टाइम..... .....ओफ! नीतीश ने करवट बदल कर पुनः आंखें बंद कर ली। रात की घटनाएं उसके मस्तिष्क में घूमने लगी थी।..... लोकल ट्रेन का एक्सीडेंट

हो जाने के कारण, उसे कल टैक्सी पकड़नी पड़ी थी। टैक्सी में बैठे-बैठे उसने सोच लिया था कि वीणा का अवकाश होने के कारण वह छह-सात घंटे उसके साथ बिताएगा और सप्ताह भर के एकाकीपन को दरकिनार कर देगा। वीणा से मिलने के कल वाले अनेक ख्याल उसके दिमाग में घूमने लगे थे, जिसकी गुदगुदाहट, वह अपने हृदय में अभी भी महसूस कर रहा था।... उस इस बार पूरे सात दिन हो गए थे उसे वीणा से बात किए हुए....! विवाह के इन बारह वर्षों में इतनी लंबी संवादहीनता कभी नहीं हुई थी।

नीतीश ने बिस्तर पर बैठे-बैठे सिगरेट सुलगाई। उसके मन में वीणा पुनः दस्तक देने लगी। मन की गुदगुदाहट बढ़ने लगी। उसने आहट ली... पास के कमरे में आया, कहानी सुनाकर प्रियंका को सुला रही थी.... वीणा कहां है? बाथरूम का दरवाजा बंद देखकर उसे लगा कि वीणा अंदर है! एक लंबा कश खींचकर उसने सिगरेट एश ट्रे में बुझाई और वह ड्राइंग रूम की ओर बढ़ा।

टेबल पर रखे अखबार को उसने उठाया। मुखपृष्ठ पर लोकल ट्रेन के एक्सीडेंट और घायलों के चित्र देखकर उसका मन खिन्न हो गया। उसने अखबार को टेबल पर रखा, तभी उसका ध्यान पेपरवेट के नीचे रखे कागज पर चला गया। वह उसे पढ़ने लगा। ''आज बहुत जरूरी मीटिंग है, इसलिए अवकाश होने पर भी जाना पड़ रहा है, मुझे भी बहुत बुरा लग रहा है, मगर मजबूरी है। खाना बना दिया है, खा लीजिएगा।''..... यह पढ़कर उसके वे सभी ख्याल दम तोड़ने लगे।

हाथ में कागज लिए वह चुपचाप खड़ा था। उसका चेहरा पीला पड़ गया था। मन ही मन वह महसूस कर रहा था कि एक 'एक्सीडेंट' उसके घर में भी हो गया .... जिसमें वह लहूलुहान हो गया है, पर यह खबर कोई नहीं जान पाएगा!

.....आठवां दिन भी बीतने को था।

सरनेम

● **ललित समतानी**

सुनयना ने शादी पूर्व आज मुझसे पुछ ही लिया, ''नाना, मेरा सरनेम अलग-अलग दस्तावेजों में अलग-अलग क्यों है?''

मैं मंद आवाज में उसे बताने लगा। ''बेटा, मैं और तेरी नानी एक ही विभाग में नौकरी करते थे। हम दोनों ने अंतर्जातीय प्रेम विवाह किया था। तेरी माँ ने भी जब अपनी पसन्द से अपना जीवन साथी चुना तो हमने सहर्ष स्वीकार कर लिया। तेरे जन्म तक तो सब ठीक चला पर खर्च बढ़ने से घर में क्लेश होने लगा, तेरे पिता ने तेरी माँ से नाता तोड़ नशे से जोड़ लिया। अति मदिरापान करने से उनका देहांत हो गया। तेरी माँ की कहानी जान एक भले आदमी ने तेरी माँ और तुझे अपना लिया। भविष्य में दिक्कत न हो इसलिए पिता के नाम के साथ तेरा सरनेम शर्मा से चौधरी सभी वांछित दस्तावेजों में करवा दिया गया था। हम खुश थे कि तुम दोनों माँ-बेटी को जीवन में योग्य सहारा मिल गया, लेकिन समय को कुछ और ही मंजूर था। घर में नये मेहमान आने की ख़बर से सभी खुश थे। तभी एक दिन अचानक तेरी माँ का स्वास्थ्य बिगड़ा और लाख प्रयासों के बावजूद भी हम उसे नहीं बचा पाये। कम उम्र होने और घरवालों के जोर देने पर तेरे पापा को दूसरा विवाह करना पड़ा। परिस्थितिवश तुम हमारे साथ रहने लगी।''

सुनयना के आश्चर्यचकित होते चेहरे को देखते हुए मैंने कहा, ''बेटा, ये चौधरीजी वही भले आदमी हैं जिन्होंने तेरी माँ से दूसरा विवाह किया था। तेरी शादी में वो ही सब भाग दौड़ कर रहे हैं वर्ना मुझ बूढ़े में इतनी ताकत कहाँ।''

अपने जीवन में अपने अलग-अलग सरनेम की कहानी सुनकर सुनयना की आँखों में बार-बार अनाथ हो जाने का दर्द तो उभरा, लेकिन मेरी आँखों में झाँकते हुए उसने संतोष भरी एक साँस ली और मेरे गले लग गई। कुछ दूर खड़े चौधरी जी की आँखों में भी नमीं थी।

जिस्मों का तिलिस्म

● **सतीश राठी**

वे सारे लोग सिर झुकाकर खड़े थे। उनके कांधे इस कदर झुके हुए थे कि, पीठ पर कूबड़-सी निकली लग रही थी। दूर से उन्हें देखकर ऐसा लग रहा था, जैसे सिरकटे जिस्म पंक्तिबद्ध खड़े हैं।

मैं उनके नजदीक गया। मैं चकित था कि, ये इतनी लम्बी लाईन लगा कर क्यों खड़े हैं?

''क्या मैं इस लम्बी कतार की वजह जान सकता हूँ?'' नजदीक खड़े एक जिस्म से मैंने प्रश्न किया।

उसने अपना सिर उठाने की एक असफल कोशिश की। लेकिन मैं यह देखकर और चौंक गया कि उसकी नाक के नीचे बोलने के लिए कोई स्थान नहीं है।

तभी उसकी पीठ से तकरीबन चिपके हुए पेट से एक धीमी सी आवाज आई, ''हमें पेट भरना है और यह राशन की दुकान है।''

''लेकिन यह दुकान तो बन्द है। कब खुलेगी यह दुकान?'' मैंने प्रश्न किया।

''पिछले कई वर्षों से हम ऐसे ही खड़े हैं। इसका मालिक हमें कई बार आश्वासन दे गया कि, दुकान शीघ्र खुलेगी और सबको भरपेट राशन मिलेगा।'' आसपास खड़े जिस्मों से खोखली सी आवाजें आईं।

''तो तुम लोग... अपने हाथों से क्यों नहीं खोल लेते हो, यह दुकान?'' पूछते हुए मेरा ध्यान उनके हाथों की ओर गया, तो आंखें आश्चर्य से विस्फरित हो गई।

मैंने देखा कि सारे जिस्मों के दोनों हाथ गायब थे।

नो हॉर्न प्लीज

● **सीमा व्यास**

उस अपार्टमेंट में बीस से कुछ अधिक ही फ्लेट्स थे। एक बुजुर्ग महिला काँपते हाथों से मेन गेट के आसपास प्रिंटआउट्स चिपका रही थीं, जिन पर लिखा था 'नो हॉर्न प्लीज़।'

मुझे उस अपार्टमेंट के चौथे माले पर किसी से मिलने जाना था। बुजुर्ग महिला से आँखें चार होते ही मैंने अभिवादन की मुद्रा बनाते हुए पूछ लिया, ''कोई मरीज होगा न घर में। उसे हॉर्न से...''

''नहीं... मरीज तो नहीं हैं। घर में हम दोनों ही रहते हैं। बच्चे बाहर सेटल हो गए हैं।'' मेरा प्रश्न खत्म होने से पहले ही उन्होंने उत्तर दिया। हाथ का कागज दिखाते हुए बोली, ''ये दूसरे फ्लेट्स के बच्चों से मिलने उनके दोस्त आते हैं और नीचे से ही हॉर्न बजाते हैं। हमें लगता है हमसे मिलने कोई आया... अब पलंग से उठकर धीरे-धीरे गैलरी तक आने में समय लगता है, थकान भी हो जाती है। फिर पता लगता है कोई हमसे मिलने नहीं आया। निराशा हाथ लगती है। अब वैसे भी हमसे मिलने की फ़ुरसत किसे? बार-बार हॉर्न सुनकर रुका नहीं जाता। तो मैंने ये उपाय निकाला, 'नो हॉर्न प्लीज़।' अब देखो, लगाये तो हैं। कोई माने तो ठीक न माने तो ...।'' और वे बड़ी उम्मीद से एक और कागज चिपकाने लगीं।

आज 'नो हॉर्न प्लीज़' का एक अलग रूप देखने को मिला।

अबोध कौन

● **आशागंगा प्रमोद शिरढोणकर**

''मम्मा! मैं सामने शन्नू और सोना के संग खेलने जाऊँ?''

गुड़िया के पूछते ही प्रीता की धड़कनें बढ़ गईं। आजकल बच्चियों को बाहर खेलने देना कितना रिस्की हो गया है! इकलौती बच्ची घर में कैद-सी हो गई है, गुमसुम भी रहने लगी है। बाहर खेलने से शायद उसका मन बहल जाए।

''हां बेटा, जाओ, पर थोड़ी देर में ही वापस आ जाना... हां?''

कुछ देर तो वह खिड़की से धूप में खेलती तीनों बच्चियों की चौकसी करती रही, फिर आदतन टीवी के चैनलों में खो गई। अचानक बलात्कार की खबर सुनते ही कांपकर खिड़की की ओर दौड़ी।

तीनों बच्चियां जैन साहब के घर के बाहर पड़ी रेती पर जाने कौन-सा खेल खेल रही थीं। बड़ी-सी पॉलीथिन बैग का एक सिरा शन्नू पकड़े थी तो दूसरा सोना और गुड़िया छोटी-छोटी हथेलियों में रेती भर उस बैग में उंडेलती जा रही थी। बैग भरने को आ गया तो तीनों ने मिलकर घसीटा और सरदार जी के घर के बाहर फेनसिंग की झाड़ियों में फेंक दिया। फिर गुड़िया दोनों हाथ कमर पर टिकाए एकटक बैग को देखने लगी।

प्रीता बाहर दौड़ी, ''यहाँ...यहाँ क्यों फेंकी रेती? आंटी नाराज़ न होंगी? चलोऽऽ...जाओ अपने अपने घर!''

बैग में भरी रेती के भीतर से गुड़िया की 'गुड़िया' का सिर बाहर झांक रहा था।

''ये...ये क्या?'' प्रीता के दिमाग़ में एक बिजली-सी कौंधी। कुछ दिन पहले ही प्रकाश ने एक खबर पढ़कर सुनाई थी - झाड़ियों में राख से भरे एक थैले में डेढ़ दिन की एक जिंदा नवजात मिली'। दोनों ने सहमकर गुड़िया की ओर देखा। वह इसी 'गुड़िया' से खेलने में मशगूल थी।

प्रकाश के भीतर का सिविल इंजीनियर जाग उठा,

'इस प्रोजेक्ट की प्लानिंग ज़रूर उसके चीफ इंजीनियर बाप ने की होगी। थैले को खोल, पकड़े रखा होगा एक इंजीनियर ने, निर्मम बाप ने थैले में बच्ची को फिट किया होगा। सुपरवाइजर ने सीमेंट की तरह राख से फिलिंग की होगी और उन्हीं में से किसी एक ने झाड़ियों में जाकर...।'

हाथों से दोनों कानों को बंदकर प्रीता चिल्लाई थी, ''बन्द करोऽ...बन्द करोऽऽ ये लाइव टेलीकास्ट!''

फफकती-सुबकती पत्नी को प्रकाश संभालने में जुट गया था।

पर अबोध गुड़िया! उसकी ओर तो किसी का ध्यान ही नहीं था।

टिकली वाली बंदूक

● **कोमल वाधवनी 'प्रेरणा'**

''मुझे और कुछ नहीं चाहिए, सिर्फ़ एक बंदूक।'' वह गरीब बच्चा रोता जा रहा था और बा़ज़ार से पटाखे खरीदने वाले हर व्यक्ति से बंदूक लेकर देने की गुहार करता जा रहा था।

''मुझे न रुपए-पैसे चाहिए न ही फूलझड़ी। चाहिए तो बस्स्स! वो टिकलीवाली बंदूऊऊक।'' रोते-रोते वह दुकान पर लटकी छोटी-सी बंदूक की ओर इशारा भी करता जा रहा था।

हर कोई उसकी बात सुन हंसकर आगे बढ़ जाता। रमा भी पटाखे लेने के लिए बाज़ार आई थी। वह कुछ देर तक यह दृश्य देखती रही। मन में मची उथल-पुथल ने कहा, ''तुम घर जाकर मां लक्ष्मी के आगे पटाखे फोड़ोगी। उससे तो अच्छा इस रोते हुए बालक को हँसाना...।''

उसने उस रोते बच्चे को डेढ़ सौ रुपए की बंदूक तथा फोड़ने के लिए टिकली का पैकेट दिला दिए। बच्चा रोना बंदकर रमा की ओर मुस्कुराने लगा।

बेटी को खाली हाथ लौटा देख मां ने पूछा, ''शगुन के पटाखे?''

''मैं शगुन वहीं कर आई मां।'' रमा ने अब मुस्कुराते हुए सारी बात मां को बता दी।

माँ ने प्रसन्न होकर प्यार से उसके सिर पर हाथ रख दिया।

सम्मान?

● **यशोधरा भटनागर**

''कृपया ध्यान दीजिए- हमारी फ्लाइट जल्द ही लैंड होने वाली है। हमारे साथ फ्लाइट में हाल ही में शहीद हुए कैप्टन अमरिंदर सिंह जी के माता-पिता मौजूद हैं जो बहादुर बेटे के पार्थिव शरीर को लेने आए हैं। आप सभी से विनम्र अनुरोध है कि आप आदर और सम्मान स्वरूप उन्हें इस विमान से सबसे पहले उतरने दें। धन्यवाद।''

कुछ ही समय में फ्लाइट लैंड हो गई और सीट बेल्ट खुलने की खट-खट और केबिन खोलने की आवाज चारों ओर फैल गई। हर कोई लगेज लेकर पहले निकलने की होड़ में थे। दो जोड़ी बूढ़ी, डबडबाई आँखें देश के जिम्मेदार नागरिकों का व्यवहार देख रही थीं.....।

माँ के सूत्र

● **विजय जोशी 'शीतांशु'**

रत्नेश बार बार ऊंचाइयों से फिसल कर नीचे की ओर चला जाता है, फिर आगे बढ़ ऊपर चढ़ने का प्रयास करता। उसकी इस मशक्कत में पर्वतारोहियों का सोलह लोगों का एक दल उसे देख रहा था। सभी एक दूसरे की मदद से मिशन एवरेस्ट को पूर्ण करने में लगे थे। आज बेस कैंप का रात्रि विश्राम यहीं होना था। बेस कैंप मे पंद्रह नौजवान आज रत्नेश की हंसी उड़ा रहे थे। किसी ने कहा- ''यह केवल हिमालयीन पहाड़ी शेरपा के बच्चों की हिम्मत कर्म और जीत का स्थान है। तुम जैसे गर्म मध्य भूमि के और नदी घाटों में निवास करने वाले लोगों के बस की बात नहीं। मेरी मानो तो कैंप छोड़कर चले जाओ।'' फिर जोरदार ठहाका पूरे कैंप में गूँजने लगा। तो किसी ने पीछे से कहा- ''एवरेस्ट के सपने भूलकर सतपुड़ा की पहाड़ियां ही चढ़ जाना, तुम्हारे लिए यही बहुत है।'' फिर एक जोरदार ठहाका कैंप के टेंट के बाहर तक सुनाई दिया, जिससे रत्नेश के चेहरे पर उदासी छा गई। रत्नेश के मन में बचपन से है एवरेस्ट मिशन को छूने का जो सपना फलीभूत हो रहा है, उस पर ग्रहण सा लगने लगा था। वह खाना भी न खा सका। आज भूखे ही सोने की कोशिश कर रहा था। किंतु बैचेन मन सोने भी नहीं दे रहा था। उसे अचानक मन में माँ के बताए वह सूत्र याद आ गए जिसमें माँ कहती थी- ''बेटा जन्म देने वाली भूमि यदि माता है, तो पालने वाला देश पिता के समान होता है।

और दोनों का महत्व बराबर है इसलिए कभी पिता के काम से भी पीछे मत हटना।'' मां के इस वाक्य ने रत्नेश के मन में ऐसा उत्साह भर दिया कि वह माँ के विश्वास की गंध लेकर उसी समय बेस केंप से बाहर निकला और ट्रैकिंग सूट के साथ पर्वतारोहण आरंभ कर दिया।

प्रातः काल कैंप से दल ने जब पर्वतारोहण की तैयारियां शुरू की, तो रत्नेश को न देख कर एक जोरदार ठहाका और लगा। साला कैंप छोड़कर भाग गया। दल रवाना होने वाला था कि नेपाल भूकंप की सूचना से दल की आगे की यात्रा को स्थगित कर दिया जब तक रत्नेश काफी ऊंचाई पर पहुंच चुका था। उससे कोई संपर्क नहीं हो पा रहा था। सभी उसके घर पहुंचने की सूचना का इंतजार कर रहे थे, तभी भूकंप मापी यंत्र और अनेक सूचना, सुरक्षा और स्थानीय यात्री सैलानियों के कैम्पों की ट्रैकिंग करने वाले उपकरणों पर एक सिग्नल मिला! जिसमें रत्नेश ने भूकम्प तूफान और हिमस्खलन के मध्य बड़े जोश हिम्मत और विश्वास के साथ अपने आप को सुरक्षित कर एवरेस्ट पर तिरंगा झंडा गाड़ दिया था। 16 में से मात्र चंद लोग उसे वापसी लाये। अब ठहाके वालों के चेहरे उदास और फतेह मिशन एवरेस्ट की गूंज मध्यप्रदेश के सतना तक ही नहीं पूरे देश में गूंज रही थी।

बेटी बचाओ

● **अदिति सिंह भदौरिया**

जैसे ही मालिनी जी ने मंच पर कदम रखा तभी तालियों की गूँज ने उनका स्वागत किया और होता भी क्यों नहीं, आखिर वह शहर की सम्मानित समाजसेविका थी। आज का विषय भी संवेदनशील था। 'बेटी बचाओ' उनके भाषण एवम् उनके कार्य लोगों को जीवन की नई दिशा प्रदान करते थे। आज जब वह बेटी बचाओ पर बोली तो मानो एक साथ बेटियों के लिए लहर चल पड़ी हो, तभी एक नवयुवक ने हाथ उठाकर कहा कि, ''मैं इस विषय के पक्ष में नहीं हूँ।'' उसकी बात सुनकर मालिनी जी को गुस्सा आ गया, क्योंकि आज तक उनके साथ ऐसा नहीं हुआ था कि किसी ने उनकी बात को काटा हो। फिर भी समय की नज़ाकत को समझते हुए उन्होंने नवयुवक से उसकी बात का तर्क जानना चाहा। युवक ने कहा, ''हम क्यों बेटी बचाओ का नारा समाज को दें? हम क्यों नहीं अपने बेटों को बचाएँ, उस सोच को अपनाने के लिए जिससे एक घृणित समाज बनता है? हम क्यों नहीं ऐसा आंदोलन कर जिसमें बेटों की सोच की नई दिशा प्रदान की जा सके। ताकि समाज को बचाया जाके और हम भी स्वयं से नज़र मिलाकर बात कर सके।''

इतना कहकर वह नवयुवक सभा छोड़कर चला गया। लेकिन वहां बैठे हर शख्स के चेहरे पर प्रश्नचिन्ह छोड़ गया।

कलयुग की कैकयी

● **डॉ. संगीता भारूका**

पड़ोसन ने अपनी सहेली से फुसफुसाते हुए कहा ''कैसी मां है?''

फुसफुसाहट जिज्ञासा को मन की धरा पर अधिक तीव्र गति से अंकुरित करती हैं। सहेली ने त्वरित पूछा ''क्यूं क्या हुआ?''

पड़ोसी धर्म की तौहीन ना हो जाये इसलिए साधिकार अपना मत प्रस्तुत किया कि ''अरे यह अपने बड़े बेटे को दूर दूसरे शहर में पढ़ने के लिए भेज रही हैं। आखिर सौतेली जो ठहरी, कैकेयी ही निकली। सगी माँ होती तो बेटे को कलेजे से चिपका कर रखती। फूल से बच्चे को यूं वनवास भेजने की तैयारी नहीं करती।''

पड़ोसन के इन तानों से कामना व्यथित हो गई, किन्तु वह मन ही मन प्रसन्न थी। उसकी और उसके चिंटू की मेहनत सफल हुई। उसके चिंटू ने देश के सुप्रसिद्ध इंजीनियरिंग महाविद्यालय की प्रवेश परीक्षा पास कर ली थी। अब उसका लाड़ला बड़ा बेटा लोगों के अनुसार वनवास यानि हॉस्टल मे रहकर पढ़ेगा।

रात को डिनर करते समय चिंटू के पापा खुश होते हुए कामना से बोले ''तुमने बड़ा साहस का काम किया है। चिंटू तुम्हारा सगा बेटा नहीं है पर उसके लिए तुम बहुत चिंता और मेहनत करती रही हो। तुम सचमुच मेरे बच्चों की मां हो।''

कामना हौले से मुस्कुरा दी और बोली ''हाँ सगी नहीं हूं तभी तो लोग मुझे कैकयी कहते हैं।''

इन दोनों के वार्तालाप की आवाज चिंटू के कानों में पड़ी वह कमरे से बाहर आया और कामना के गले में हाथ डालते हुए बोला

''माँ सोचो यदि कैकयी राम को वनवास नहीं भेजती तो रावण का संहार कैसे होता? हर युग में माँ को कैकेयी

बनना पड़ता है, बालक राम को मर्यादा पुरूषोत्तम राम बनाने के लिए।''

तफ़्तीश जारी है

● दीपक गिरकर

उच्च न्यायालय प्रांगण में हुए गणतंत्र दिवस के झंडावंदन कार्यक्रम के पश्चात जज और वकील धूप का आनंद लेते हुए चर्चा में मशगूल हो गए। एक वरिष्ठ वकील ने कहा ''सर आपको मालूम है, आजकल एक नया उपन्यास 'तफ़्तीश जारी है', काफ़ी चर्चा में है, जिसका विमोचन इसी माह दिल्ली के पुस्तक मेले में हुआ है।''

दूसरे वरिष्ठ वकील ने अपना मुँह खोला ''इस उपन्यास का लेखक कौन है? मालूम है क्या किसी को? इस उपन्यास का लेखक एक विचाराधीन कैदी है, जो पिछले 15 वर्षों से एक जेल में बंद है और एक और ख़ास बात यह है कि इस प्रकरण में अभी ट्रायल भी शुरू नहीं हुआ है।''

इतना सुनते ही उस महफ़िल में बैठे हुए सभी न्यायाधीश और समाज के प्रतिष्ठित लोग अवाक् रह गये थे। अब उन्हें कड़ाके की ठंड के मौसम में गुनगुनी धूप भी तेज लगने लगी थी क्योंकि उन सब के मुँह में अब दही जम गया था।

रीत

● डॉ. संगीता तोमर

''बेटा है या बेटी?'' लेबर रूम में पस्त पड़ी रमा ने नर्स से पूछा।

''बेटी है।'' नर्स बोली।

''लड़की हुई है, कोई ईनाम नहीं मिलने वाला।'' रमा पर फाईल पटकते हुए वहां काम करने वाली बाई दूसरे बाई से बोली।

''खबरदार जो मेरी बच्ची के बारे में अपशब्द कहे। आइंदा किसी भी माँ के सामने ऐसा मत कहना।'' रमा पूरी शक्ति बटोर कर ने सख्ती से कहा।

नर्स बोली- ''तुम दोनों की रिपोर्ट करनी पड़ेगी, फिर तुम दोनों शुरू हो गई।''

''अरे सिस्टर गरम क्यूं होती हो, जो हमने देखा है वहीं तो कह रहें है। हम थोड़े ही मांगते है। लड़का होने पर लोग ही ढेर सारा इनाम दे जाते हैं और लड़की होने पर ठेंगा।''

अन्नदान

● आर.एस. माथुर

''अंकल! पिताजी के न रहने पर और सारे दान तो कर दिए अब अन्नदान के लिए ब्राह्मणों को भोज कराएँ या अपने पंडित जी को दक्षिणा दे दें।''

''एक काम करो, पास में ही अनाथालय वहाँ चलते हैं। वहाँ काफी बालक रहते हैं जिनके भोजन का ठिकाना नहीं। वहीं अपने सामने सबको खिला देंगे और दक्षिणा भी दे देंगे।''

''महाराज! जिन पुण्यात्मा का स्वर्गवास हुआ है, उनके बारे में थोड़ा हमें बता दें ताकि हम प्रार्थना कर सकें। उनकी आत्मा की शांति के लिए प्रभु से विनती कर सकें।''

''अरे! लेकिन इतना आभार क्यों। आप लोग तो भोजन कीजिए।''

''नहीं! जिन आत्मा के प्रताप से हमें भोजन प्राप्त हुआ है उसके शुभ मनाने की, उसका आभार और शांति की कामना करने की हमारी भूमिका और दायित्व बनता है।''

शर्मा जी का बेटा अभिभूत था। उसने कहा ''अंकल! ईश्वर हमको दोनों समय वर्षों से भोजन दे रहा है। हमने कभी उसका आभार नहीं माना और एक ये अनाथ बालक हैं, जो एक बार के भोजन के लिए भी इतने इतने आभारी हैं।''

अवगुंठन

● दिव्या शर्मा

''एक निरापराध पत्नी का त्याग! यह कैसा पाप किया राम? यह क्या कर दिया तुमनें राम।'' अंधकार में एक आवाज गूंज उठी। उस आवाज की ध्वनि के रोष से भवन के द्वार पर लगे परदे जोर से हिलने लगे।

''उत्तर दो राम! क्या अपराध था उस स्त्री का जो ऐसा कठोर दण्ड उसके भाग्य आया?'' आवाज और कठोर हो गई।

राम ने आँखों से अपनी बाँहों को हटा कर देखा तो सामने एक स्त्री की आकृति खड़ी थी।

''आप कौन हैं देवी?'' राम ने कहा।

''प्रश्न यह महत्वपूर्ण नहीं कि मैं कौन हूँ। महत्वपूर्ण है आपका उत्तर। मेरे प्रश्न का उत्तर दीजिए, सीते के साथ यह पाशविकता क्यों?'' वह आक्रोश के साथ बोली।

''मैं विवश था। मुझे क्षमा करें देवी।'' हाथ जोड़कर राम ने कहा और अपने हृदय को मुट्ठी में भींच लिया।

''विवश..हुँह.... पुरुष की कैसी विवशता! वह तो सर्वश्रेष्ठ और स्त्री का भाग्य विधाता है। वह प्रेम और दण्ड स्वइच्छानुसार स्त्री को भेंट करता रहता है।'' वह आकृति क्रोध में बोली।

''आप सही कहती हैं देवी। पुरूष अपनी इच्छानुसार स्त्री को प्रेम देता है। परंतु यह इच्छा स्त्री के द्वारा ही पुरूष को अधिकार से भेंट स्वरूप दी गई है।''

''आह... एक पुरुष के हृदय की पीड़ा!'' भूमि पर बैठ गए राम।

''हृदय!! पुरूष के पास हृदय नहीं होता। यदि होता तो हृदयहीन होकर अपनी पत्नी का परित्याग न करता।''

''निष्ठुर हो राम बहुत निष्ठुर...।'' इतना कह वह आकृति रोने लगी।

''हाँ मैं निष्ठुर ही हूँ .....एक निष्ठुर मनुष्य ही अपनी पत्नी को समाज के नश्तरों से बचाने के लिए सारे कलंक अपने माथे ले लेता है।''

''सीता की अग्निपरीक्षा ली ताकि कोई भी उसकी पवित्रता पर प्रश्न न कर सके और एक संकुचित मानसिकता का कलंक अपने माथे लिया।''

''सीते को त्याग दिया ताकि वह सभी के व्यंग्य भरे नेत्रों से दूर रहे। वह वन में सुख नहीं भोगेगी लेकिन सम्मानित रहेगी। मैंने तो सीते के सम्मान के लिए यह वियोग अपना लिया।''

''यह शाब्दिक भ्रमजाल है हम स्त्रियों के लिए।'' वह आकृति पुनः क्रोध से बोली।

''हाँ यह भ्रमजाल ही है परंतु शाब्दिक नहीं भावात्मक... अब न वर्तमान और न ही भविष्य में सीते से कोई प्रश्न होगा। क्योंकि सभी प्रश्नों का उत्तरदायित्व मुझ पर होगा और एक पत्नी के साथ दुर्व्यवहार का कलंक भी।''

राम के शब्दों को सुनकर वह स्थिर हो गई।

''ओह..... यह स्त्रीमन यह पक्ष क्यों न देख सका!'' इतना कह वह आकृति अदृश्य हो गई।

''कैसे देखता.... पुरूष सदैव अपनी पीड़ा एक आवरण में छिपाए रखता है।'' पीड़ित स्वर गूँजा जो राम के हृदय से आया।

इंसानी बस्ती

● डॉ. वसुधा गाडगिल

सभी लोगों ने नदी के उत्पत्ति स्थल, गोमुख से शुद्ध, निर्मल, पवित्र जल अंजुरी भर-भर पिया और उसके किनारे-किनारे चल पड़े। पारदर्शी, चमकीली आभा लिये, लहराती, बलखाती, कभी किनारे तोड़ती, उद्दाम होती, शोख दिखती तो कभी किनारे जोड़ती मंद, शांत, प्रकृति के साथ मंगलगान करती कल-कल बहती, जीवनदायिनी नदी सबका मन मोह रही थी। नीला आसमान, हरे-भरे पेड़, नदी के किनारे हरियाली देख सभी लोग ऊपरवाले की अद्‌भुत लीला का गुणगान कर रहे थे। काफ़िला आगे बढ़ रहा था। तभी कुछ बुज़ुर्ग ठिठक गये। आसमान में धुएँ के गुबार देख चिंतित हो उठे। अचानक नीला आसमान, कालिमा लिये धूसर सा दिखने लगा। फिर उनकी नज़र नदी पर पड़ी! नदी का पानी बदरंग, मटमैला दिख रहा था। गाद दिखने लगी थी... वह कमज़ोर, सिकुड़ी - सिमटी सी, बदशक्ल दिख रही थी। ऐसा लग रहा था मानो नदी-आसमान चर्म रोग से ग्रसित हो गये हो! किसी ने उनकी चमड़ी खींच ली हो! सूखी नदी के आजू-बाजू, प्यासी, बंजर, दरकती-फटती ज़मीन भी अपनी बदहाली पर रो रही थी। इस परिवर्तन को देख काफिले के लोग अवाक रह गये। एक बुज़ुर्ग ने चिंतित और आर्त स्वर में कहा- ''ओह! लगता है इंसानी बस्ती आ गई!''

केसर की छोरी का दसेरा

● सूर्यकांत नागर

केसर की बेटी नंदा मल्टी में रहने वाली सुपेकर मेम के यहाँ से लौटी तो बहुत उदास थी। वह मेम साब के यहाँ झाड़ू-पौंछा करने के सात-साथ छोटी बेबी को भी संभालती है। केसर खुद अभी-अभी कुलकर्णी मेडम के बंगले से भांडे घिसकर और कपड़े धोकर लौटी है। बेटी को उदास देख पूछा, ''क्या बात है, मूँ काय लटका रखा है?''

''आज दसेरा है न?'' नंदा ने पूछा।

''हाँ, तो?''

''दसेरा होने से सुपेकर मेम साब अपने बाबा और बेबी के वास्ते नव्व-नव्व कपड़ा और जूते लाया। वे लोग हर बरस दसेरे पे नवा कपड़ा-जूता लाता है। बोला, शाम को नवा कपड़ा पहन के दसेरा जीतने को जाना। आज

उन लोगन ने कटोरी भर-भर दाल-भाजी, मास-मच्छी, खीर-पूरी खाया भरकर भरकर। बोला त्यौहार पे ये सब खाने का। बाबा लोग दिनभर क्रिकेट खेला। मेरे को बॉल उठाकर लाने को खूब दौड़ाया। आई! हम नवा कपड़ा पेन के दसेरा देखने को क्यों नहीं जा सकता?''

''देख कुलकर्णी मेम ने तेरे वास्ते अपनी बेबी का फ्रॉक दियेला है। बोला, दसेरे पे तेरी बेटी को पहनाना।'' फ्रॉक बेटी की ओर बढ़ाते हुए माँ ने कहा।

''मेरे कोई नगई पेनने का ये उतारा-पुतरा फ्रॉक।'' फ्रॉक को गुस्से से एक ओर फेंकते हुए नंदा ने कहा। ''बता आई, सच्ची बता हम कब पेनेंगे दसेरे पे नवा कपड़ा? कब खाएँगे कटोरी भर खीर? कब मोटर गाडी में बैठकर दसेरा देखने जाएँगे? बता कब?''

आई क्या जवाब देती! उसका गला भर आया। आँखें गीली हो आई। भींचकर उसने बेटी को गले से लगा लिया।

लेकिन खुद

● **हनुमानप्रसाद मिश्र**

''खैर ठीक है। जितना तय है वह तो आप देंगे ही। और फिर जो कुछ देंगे वह आप अपनी बेटी और दामाद को देंगे। अपनी तो बस एक ही ख्वाहिश है कि बहू एकदम सीता जैसी हो।''

''बहुत खूब भाई साहब! मैं भी बेटी की शादी में सर्वस्व लुटाने को तैयार हूँ। लेकिन मेरी यही तमन्ना है कि बेटी की सास एकदम कौशल्या जैसी ही मिले।''

शादी हुई। सीता विवाहित जीवन बिताने लगी। किंतु उसे कौशल्या के कार्यकलाप अपने प्रति रास न आए, तो कौशल्या के लिए भी सीता, सीता न रही।

बाद में महसूस हुआ बेटे-बेटी के अभिभावक तब तक उनको उस रूप में देखते रहे जब तक कि पवित्र रिश्ते की बातें तय ना हो गई।

क्रेडिट कार्ड

● **राजनारायण बोहरे**

रामसिंह ने अपनी सारी गेहूँ की फसल सरकारी खरीद में दो लाख में बेची तो पता लगा कि सरकारी खरीद का भुगतान सिर्फ बैंक खाते में भेजा जाता है। सो वह बैंक से रुपया निकालने आया था। पर मैनेजर ने एक लाख रुपये निकालने से मना करते हुए कहा कि, ''आज खाते में जो दो लाख जमा हुआ, इसमें से तुम पहले ही डेढ़ लाख रुपये निकाल चुके हो। तुम सोच रहे हो कि अभी बेची फसल का पूरा रुपया निकाल लोगे, यह नहीं हो सकता। उसमें से डेढ़ लाख रुपया कर्ज के चुकते के रूप में कट जाएगा।''

''पर माई बाप! अब बचे हुए पचास हजार में मेरा साल भर का खर्चा कैसे चलेगा?''

''कोई रास्ता निकालना। कर लेना कहीं से भी इंतजाम।''

''साहूकार के पास तो कर्ज लेने जाना नहीं है साहब, वह तो मेरा खेत ही लूट लेगा। इन सबसे बचने को ही तो सरकार ने किसान क्रेडिट कार्ड दिया है।''

''पर तुमने इतना रुपया खर्च कहाँ कर दिया।''

''साब घर खर्च और बच्चों के कपड़े-लत्ते में हुआ। वैसे हम ये ख़र्चे तो पहले भी खेती की लागत में से निकालते थे।''

''पहले शर्म की वजह से तुम साहूकार से बेजरूरत पैसा नहीं माँगते थे। जितना माँगते थे, उसमें से वो आधे ही टुंगा-टुंगा के देता था। अब क्रेडिट कार्ड हाथ में है, और बैंक से काहे की शर्म? जब इच्छा हुई, हाल ए.टी.एम. में जा के किसान क्रेडिट कार्ड फँसा देते हो। फिजूलखर्ची का खामियाजा कौन भुगतेगा?''

रामसिंह को मैनेजर की बात समझ आ गयी थी कि उसने बच्चों के हाथ में क्रेडिट कार्ड दे के कितनी बड़ी गलती की। हर किसान की तरह उसको कितनी उम्मीद थी कि साल भर की फसल का मूल्य मिलेगा तो क्या क्या खरीदेगा। उसका मस्तिष्क आने वाले साल के राशन, कपड़े और इसी साल होने वाली बेटी की शादी के खर्च के सवाल से जूझने लगा।

मैनेजर की टेबिल पर किसान क्रेडिट कार्ड को वापस फेंकते हुए वह बाहर आ गया।

अदला बदली

● **अनघा जोगलेकर**

आसमान से मोतियों की झड़ी लगी थी। बड़े-बड़े सफेद मोती जो नीचे आते ही जमीन पर बिखर जाते।

आकाश निहारता उसका अबोध मन खिड़की पर ही टँगा था। भीगा-भीगा, सर्द-सा फिर भी खिला-खिला।

उसकी हिरणी जैसी आँखें एकटक उन मोतियों को देख रही थीं।

उसकी उत्सुक नज़रें कह रही थीं कि आसमान में जरूर ही कोई खज़ाना है जिसका दरवाजा गलती से खुला रह गया है और सारे मोती नीचे गिर रहे हैं।

वह चहकते हुए बोली, ''भगवान! इस तरह तो आपका पूरा खज़ाना ही खाली हो जायेगा!''

उसकी बात सुन मैं मुस्कुरा दिया और फिर उसकी मासूमियत देखने लगा।

वह घर में दिन भर अकेली रहती। उसी खिड़की पर बैठी। लेकिन शाम होते तक घर मे चहल-पहल बढ़ जाती। आगंतुकों में से कोई उससे पानी मांगता तो कोई खाना। कोई कुछ तो कोई कुछ। और वह दौड़-दौड़कर सबके काम करती।

देर रात जब सब अपने कमरों में चले जाते तो वह भी सारे काम निपटा, खिड़की पर आ बैठती और तारे गिनती। कई बार तारे गिनते-गिनते उसकी आँखों से आँसू बहते जैसे उन तारों में किसी अपने को ढूँढ रही हो तो कभी खिलखिलाकर हँस देती जैसे जिसे ढूँढ रही थी वह मिल गया हो। कभी हल्के-हल्के गुनगुनाती, ''ये चाँद खिला ये तारे हँसे...''

....उसका यूँ गुनगुनाना सुन अंदर बैठी मानव आकृतियाँ फुसफुसातीं, ''लगता है इस ए.आई. (आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस) रोबोट की प्रोग्रामिंग करते समय ई.क्यू. (इमोशनल कोशेंट) का परसेंट कुछ ज्यादा ही फीड हो गया है।''

भावशून्य मशीन बन चुकी उन इंसानी आकृतियों के बीच वह आई.ए. (आर्टिफिशिएल इंटेलिजेंस) रोबोट हर पल अपना ई.क्यू. (इमोशनल कोशेंट) बढ़ाने की कोशिश कर रही थी और मैं... मैं उन मशीन बन चुके इंसानों के बीच... उस रोबोट का... मशीन से इंसान बनने का इंतज़ार।

स्वामिनी

● **विजयसिंह चौहान**

''अपने, इस नए घरौंदे को 'घर' बनाने के लिये अब से सारे फ़ैसले तुम खुद लेना। गृहस्थी में क्या और कैसे बनाना-बसाना है, इन सबका जिम्मा आज से तुम्हारा है! आखिर, घर की मालकिन जो हो।''

नीरज की बात सुनकर नलिनी की आँखों में सुनहरी चमक जैसे खिल-खिला उठी।

नलिनी खुश थी। देर से ही सही नीरज ने, न सिर्फ अपना घर लिया बल्कि उसे यह कहकर सम्मान भी दिया कि आज से घर के सारे निर्णय तुम लोगी। कर्णप्रिय बात सुनकर उसके मन के ठहरे हुए समंदर में आज लहरें हिलोरें खा रहीं थी, उसे लगा था समुद्र को एक दिन एहसास हो ही जाता हैं कि उसके विस्तार में कितनी नदियों का समर्पण हैं। अपने मानस में छलांग लगाते इन विचारों के साथ नलिनी पूरे घर को अच्छी तरह निहार रही थी और मन ही मन घर के हर कोने की सजावट के कसीदे बुन रही थी ।....पर ये क्या अचानक उसकी नजर घर के द्वार पर पड़ी जिसे देखते ही उसके कदम ठिठक गये। बाहर केवल पति के नाम की 'नेम प्लेट' लगी थी। उस पर पड़ी धूल अपने साड़ी के पल्लू से साफ करते हुए नलिनी पुनः अपनी उसी परिधि में लौट आई और सोचने लगी कि, क्या सचमुच मैं स्वामिनी हूँ?... अपने आप से पूछती इस सवाल में डूबी वो सहसा अपने भीतर की नदी में अपना अस्तित्व तलाशने लगी।

वीराने में बहार

● **डॉ. चंद्रा सायता**

नंदिता एक श्रेष्ठ शिक्षक का पर्याय बन चुकी थी। वह हिंदी और संस्कृत पढाती थी। केवल उसके विषय के छात्र ही नहीं, अपितु पूरे विद्यालय के छात्र उसे पसंद करते थे और उसका सम्मान भी करते थे। स्टाफ का भी शायद ही कोई कर्मचारी ऐसा हो, जो उससे द्वेष रखता हो।

गत अठ्ठाईस वर्षों से नंदिता शिक्षक कर्म का निर्वहन पूर्ण समर्पण से कर रही थी। उसके चेहरे पर दिन के उजाले की हुकूमत थी तो हृदय में मिठास का अखुट भंडार था। शायद इन्हीं विशेषताओं के फलस्वरूप घर-बाहर अनगिनत लोगों को उसने अपने व्यवहार का कायल बना लिया था।

कई पुरस्कारों से नवाज़ी जा चुकी नंदिता का नाम छब्बीस जनवरी को महामहिम राष्ट्रपति के करकमलों से सम्मानित किए जाने वाले शिक्षकों की सूची में शामिल था।

नंदिता ने दीवाल घड़ी की ओर ताका। साढ़े चार बज रहे थे। वह विश्राम के प्रयोजन से उठी ही थी कि

कॉलबेल ने किसी आगन्तुक के आने की सूचना दी।

दरवाजे की ओर बढ़ती हुई वह सोचने लगी, कहीं वह चैनल वाला तो नहीं, जो उसका साक्षात्कार लेने आने वाला था। दरवाजा खोला तो उसका सोचा सच निकला।

चैनल-विशेष से आए साक्षात्कार कर्ता ने नंदिता से कई सवाल किए, जिनके उत्तर उसने बड़ी बेबाकी से दिए

''बस मैडम। आखिरी सवाल।''

''पूछो ना बेटा।''

''आपको राष्ट्रपति के हाथों सम्मान मिलने जा रहा है। आप तो भाग्यशाली हैं ही, पर आपके बच्चों के सौभाग्य से मुझे ईर्ष्या हो रही है। मैं चाहूँगा मेम, इस समय उनमें से जो भी घर में उपस्थित हो, उसे बुला लीजिए। आपके साथ उनका फोटो लेना चाहूँगा।

युवक के बोलते रहने के बीच जाने कब नंदिता की आँखों की कोरें सजल हो झिलमिलाने लगीं। यह दृश्य युवक की दृष्टि से छुप नहीं सका था। वह अपने अंतिम सवाल का जवाब नंदिता के स्थिर अधरों और नम नेत्रों से पा चुका था। उसने आपना सामान उठाया और नंदिता के चरण स्पर्श करके बाहर निकल गया।

नंदिता उसे कंठ अवरुद्ध हो जाने से 'धन्यवाद' का शब्द भी नहीं कह सकी।

आज उसके मन के वीराने में बहार आ गई थी।

लहर

● **अंतरा करवड़े**

''क्या मैं गलत जी रहा हूँ!''

ये वाक्य सचमुच उसके मुँह से निकला था, जब एक घन्टे तक उसका फोन गायब हो गया था और उसका रक्तचाप इतना बढ़ गया कि दवाई की मदद लेनी पड़ी।

हतबुद्धि सा वह मशीनी तरीके से दिन को किसी प्रकार खत्म कर अपने तथाकथित आधुनिकतम वाहन से वापसी को निकला लेकिन रास्ते में समुद्र के सम्मोहन ने उसे रोक लिया। शायद यहां मेरे प्रश्नों के उत्तर हो... लेकिन मुझे तो मेरे प्रश्न भी पता नही।

गीली बालू की गंध नथुनों में भरने लगी, समुद्र का अपार, अनंत स्वरुप उसे बांधने लगा।

''और कैसे हो मित्र!''

एक सुलझा हुआ लेकिन कुछ झक्की सा व्यक्ति सहज ही सामने आया।

''मैं?''

''तो और कौन? अरे ये है ना'' समुद्र की ओर इशारा करते हुए वह कहने लगा, ''इसमें इतनी गरज और कोलाहल होता ही इसलिये है कि हमारे तुम्हारे जैसे यहां अपने ढ़ेर सारे प्रश्नों को लेकर आते हैं और यह हमें प्रश्नहीन कर देता है.... अरे हमारे सारे सवाल इसकी लहरों में दबे होते हैं।'' वो आगे चलता गया, यह भी पीछे पीछे हो लिया।

कैसा अजीब आदमी है... उसे लगा लेकिन कौतूहल बना रहा।

''चिन्ता मत करो, कुछ नही पूछूंगा, नाम, पता, परिवार... कुछ भी नही। मैं खुद अरबों के सम्राज्य का अकेला वारिस हूँ। कभी कुछ किया नहीं, कभी कुछ करूँगा भी नहीं। दिन भर की चमकीली भड़कीली ज़िंदगी से ऊबकर यहाँ आ जाता हूँ। तुम्हें भी आज कुछ ऐसा ही लगा होगा ना? एकदम गुलाम जैसा!!'' वो समुद्र में थोड़ा आगे तक चला गया था, सम्मोहन बढ़ने लगा था।

''तुम्हे सब कुछ कैसे पता?''

''अब इतनी रात यहाँ तुम लहरें गिनने तो आओगे नही....''

और तभी एक बड़ी सी लहर आकर उन दोनों को भिगो गई।

ये थोड़ा हड़बड़ाया, वो खड़ा रहा जैसे आदत हो इसकी।

''इसका यही प्यार मुझे यहां खींच लाता है दोस्त।'' वो समुद्र की ओर देखकर मुस्कुराया, उसका मुख आंसुओं से भीगा हुआ था।

''हमारे अन्दर के समुन्दर की लहरें जब उछलती हैं, उन्हें रोक देते हैं हम, रो नही पाते ना... ये लहर जानती है तुम्हारे अन्दर के सैलाब को। यहाँ अपना मन उलीचना सबसे बेहतर होता है, पानी का स्वाद भी नही बदलता।'' वह दार्शनिक सा मुस्कुराया और दौड़कर चला गया।

ये थोड़ा झिझका, फिर फूट पड़ा! समुद्र से मिलता रहा आगे भी और ये जान पाया, कि कुछ लहरें, किनारे पर स्थायी निशान बनाकर जाती हैं।

डॉ सतीश दुबे स्मृति लघुकथा सम्मान 2022

■ रश्मि स्थापक

मधुबाला

वह गोल गोल घूम कर, नाच रही थी.... जोर-जोर से तालियाँ बजा रही थी।

आजू-बाजू के घरों से निकल कर लोग भी पटेल साहब के घर में झुंड के झुंड बनाकर उस किन्नर का नाच देखने आ पहुँचे थे।

सजी-सँवरी मधुबाला कान में झुमके होठों पर लाली और आँखों में काजल सजा के जिस कदर इठला कर नाचती कि देखने वाले अपलक देखते ही जाते। उसका अपना ग्रुप था। सख्तजान इतनी कि जो मुँह से निकल गया लेकर ही जाती। मुँहफट इतनी कि घर-गुठान वाले तो उसके आने से घबराते। कोई भी शुभ काम हो घर में तो जब-तक वह आकर नहीं चली जाती धुक-धुकी ही बनी रहती मन में।

पटेल साहब के घर पोता होने की खुशी में आज आ धमकी है... पटेल साहब समझा-समझा के हार चुके हैं.... ''भई... ग्यारह सौ रुपए दे तो रहा हूँ...।''

''पटेल बाबू .... मैं कोई ऐरी-गैरी नहीं हूँ, जो कुछ भी फेंकोगे तो उठा लूँगी...मै मधुबाला हूँ मधुबाला...।''

अब वह ज़ोर-ज़ोर से तालियाँ बजा... शिकायती लहज़े में नाचने लगी, साथी किन्नर जोर-जोर से ढोलक पर थाप दे रहा था।

पटेल साहब भी क्रुद्ध हो गए थे। वे ग्यारह सौ से दो हजार को भी पार करते हुए... दिल पर पत्थर रखते हुए तीन हजार पर आ गए थे। पर वह तो टस-से-मस न हुई।

अपने हाथ में रखे नन्हे को जोर-जोर से झुकाने लगी, ''ऐ लल्ला... तेरे न्यौछावर को अटरिया में पैसे नहीं...।''

पटेल साहब भी खामोशी से एक जगह बैठ गए। लल्ला की मां को ससुरजी के सामने आ तो न सकती थी... पर नन्हे को जोर-जोर से उछालना उसे देखा ना गया... और वह व्याकुल सी आकर पल्ले की ओट से बड़ी कातर निगाहों से देखने लगी। हालांकि उसे पता था वह कह कुछ नहीं पाएगी।

अचानक नाचती हुई मधुबाला के पैर में मानों ब्रेक लग गया... उसने बच्चे को पटेल साहब के हाथ दिया, जो रुपए सामने रखे थे उठाए और नन्हे की सलामती की दुआ करते हुए निकल गई।

ढोलकी वाले रूपा किन्नर को बड़ा आश्चर्य हुआ- ''जब पटेल बिल्कुल देने को हुआ तो...तूने नाच ही रोक दिया!''

''... .. बच्चे की माँ की आँख में...जो कुछ देखा न....अपनी माँ याद आ गई... जब घर, से मुझे डेरे पर लाया जा रहा था... मैं तो बहुत छोटा था... बस माँ थी जो बेबसी से देखती रही... पल्ले की ओट से... गली के मोड़ तक ...जब तक मैं उसे दिखता रहा।''

-297, क्लर्क कॉलोनी, परदेसीपुरा, इंदौर (म.प्र.) 452011
मोबाइल : 9165699467

■

डॉ. श्यामसुंदर व्यास स्मृति लघुकथा सम्मान 2022

■ यशोधरा भटनागर

नेग

उसकी दृष्टि फिर दूर शून्य में टिक गई... अतीत की पीर फिर टसकने लगी।

तीन बेटियाँ और उसके बाद बेटे की आस! महेश बाबू ने लाल टीले वाले बाबा का ताबीज मंतरा कर पहले महीने से ही बँधवा दिया और कैसे दर्प से बोले थे-

''हमाओ बेटा हमाओ नाम रोसन करहे।''

आँखों से फिर आँसू बह निकले। आज इतने सालों बाद!

''हाय! हाय! छोटी की ब्याह के ग्यारह हजार, पाँच किलो शक्कर, पाँच किलो चावल से कम नहीं लूँगी।''

''सज रही गली तेरी अम्मा, सुनहरी गोटे में...।''

ढोलक की सरस थाप पर वे चका-डोरी से नाचने लगे।

कैसी अच्छी ढोलक बजा रहा है। दुलारी की आँखें उस तीखे नैन-नक्श वाले गबरू से दिखने वाले हिजड़े को एकटक निहार रही थीं। मन विचलित हो उठा। आँखें भर आईं। उनका....।

''हाय! हाय! हाय रे अम्मा! ला दे न नेग अम्मा! तेरा परिवार खुश रहेगा।''

मेरा परिवार! अंदर कुछ चटका, फिर कुछ टूट गया... उनकी चौथी संतान!

''क्या सोच रही अम्मा! जल्दी कर चार घर और जाना है।''

''बेटा!''

''का अम्मा! हम किसी के बेटा-एटा नहीं हैं। जल्दी से हमारा नेग दे दो। हम जाएँ।''

चेहरा मोहरा पूरा बाप पर पड़ा है बस उनके जैसा...।

''लाओ अम्मा!''

वह मगन हो ढोलक बजाने लगा और सितारों वाली साड़ी में भूरे बालों वाली झूम कर नाच रही थी।

जैसे-तैसे खुद को जबरदस्ती ठेलते-ठालते वह अंदर गई।

बड़े थाल में चावल, चीनी और ग्यारह हजार रुपए।

पके बाल, पके चेहरे वाले हिजड़े के साथमें रख दिए। और धीरे से काले और सोने के मनकों वाली पोंची उसके हाथ में रख दी।

बबुआ की यही निशानी उनके पास रह गई थी जब बबुआ के बाऊ जी बबुआ को उनकी गोद से छीन कर ले गए थे।

पके चेहरे वाले हिजड़े की आँखें फैल कर कुछ बड़ी हो गईं। चलो रे! और तालियाँ बजाते- ''खुश रहो! परिवार खूब फूले फले!'' दुआएँ देते बाहर को निकल गए।

दुलारी की आँखों के सामने फिर वही काला अँधेरा छा गया।

152, अलकापुरी, देवास (म.प्र.) 455001
मोबाइल : 9425306554

■

सुरेश शर्मा स्मृति लघुकथा सम्मान 2022

■ **ज्योति जैन**

बड़नगर वाली

संघर्ष की परिभाषा तो तब शायद सौम्या परमार नहीं जानती थी। लेकिन संघर्ष तो चल रहा था। कोख से ही चल रहा था। वह तो भला हो उस मशीन का कि मशीन हो कर भी गलती कर दी, और सही लिंग नहीं बता पाई। अब सौम्य की जगह सौम्या परमार आ गई। उसकी मां यानी बड़नगर वाली पर लानतें भेजी गई... कि बेटी पैदा की।

बड़नगर वाली यानी गऊ, सचमुच गऊ ही थी। वह दबी हुई बहू ही रही। और यह दबना समय के साथ तब और बढ़ता गया, जब उसके पति गुमान सिंह परमार दूसरी औरत के चक्कर में घर छोड़ गए। बुराई व कमी बड़नगर वाली में ही निकाली गई कि पति को बांधे नहीं रख सकी। सास-ससुर देवर, जेठ आदि की उदारता थी कि हवेलीनुमा घर में उसे रहने दिया। समझते सब थे कि यह उदारता घर संभालने के लिए... बल्कि घर को एक स्थायी नौकर मिला रहे इसलिए थी।

उसे दो वक्त की रोटी मिलती और बेजुबान जानवर की तरह भिड़ी रहती। बच्ची का मुंह देख कर उफ् तक न करती।

बढ़ते समय के साथ सौम्या परमार खानदान के अन्य बच्चों की अपेक्षा मेधावी निकली। लेकिन आगे पढ़ाने के नाम पर घर में कोहराम मच गया। अब बड़नगर वाली यानी गऊ ने सींग निकाल लिए। बेटी के भविष्य से समझौता नहीं।

तो अपने स्वार्थ के लिए ही सही, परमार खानदान मान गया और उसे आगे पढ़ने भेज दिया गया।

बरस बीतते गए।

आज सौम्या परमार आईएएस होकर शहर में पोस्टेड हो गई। जवान बैल बूढ़े हो चले थे। सभी मिलने आए। दफ्तर के बाहर काले रंग पर पीतल के कांबीनेशन वाली चमचमाती नेमप्लेट पर निगाह गई तो ताऊ जी असमंजस में पड़ गए- ''सौम्या...! यह सुमित्रा काहे लिखा...?''

ताईजी ने दबे स्वर में कहा- ''अजी...! अपनी

बड़नगर वाली है...।

बड़नगर वाली ने गर्व से अपनी बेटी की ओर देखा, जिसने उसका अस्तित्व बचा लिया था।

नेमप्लेट पर चमचमाते अक्षरों में लिखा था सौम्या सुमित्रा परमार।

-1432/24, नंदानगर इन्दौर-452011
मो. 9300318182

■

विक्रम सोनी स्मृति लघुकथा सम्मान 2022

■ **दिलीप कुमार**

खून सनी रोटी

दो दिन से जुम्मन दो निवाले भी ठीक से नहीं खा पा रहा था। चाय पर चाय पीता और पेशाब जाता। उसके बाद बीड़ी पर बीड़ी पीता जाता और बेतरह खांसता था। उसकी खांसी इतनी देर तक चलती थी कि लगता था फेफड़ा उछलकर मुँह से बाहर आ जायेगा। जमीला उसे इस तरह खाँसता देखकर बुरी तरह से डर जाती लेकिन वो जानती थी कि डरे वो दोनों हैं।

खेती-किसानी को लेकर चल रहे आंदोलन के दरम्यान उनको काम मिल गया था। वो मंगोलपुरी से कपड़े लाते थे और सिंधु टीकरी बॉर्डर पर टोपियाँ सिला करते थे। जैसे-जैसे धरने की भीड़ दिनों-दिन बढ़ती गई,वैसे-वैसे वो दोनों कुर्ते-पायजामे भी सिलने लगे। आंदोलन बढ़ता गया तो उनके लिये आंदोलन वालों की तरफ से एक सिलाई-मशीन का भी प्रबंध कर दिया गया था। वो दोनों कुर्ते तैयार करते जाते थे और आंदोलन करने वाले लोग उन्हें आस-पास के गांवों के हर गरीब-गुरबा को पहना देते थे ताकि हर कोई उन्हें आंदोलन का कार्यकर्ता लगे, लेकिन आंदोलन खत्म हुआ तो जुम्मन की हवाइयां उड़ने लगीं।

तभी उसी टोली का एक बन्दा आया और बोला- ''जुम्मन टोपी और कुर्ते सिल लो और ये लो पैसे, जाकर ब्लड बैंक से खून खरीद लाना। हर कुर्ते और हर टोपी पर खून लगा होना चाहिये।''

''खून क्यों साहब, आप तो खेती-रोटी की बातें किया करते थे, फिर अचानक खून-खराबा क्यों?'' जुम्मन ने सकपकाते हुए पूछा?

बन्दा हँसते हुए बोला- ''खून-खराबा तो होता ही रहता है लेकिन तुम इन सब पचड़ों में न ही पड़ो तो बेहतर है। रहा सवाल तुमने जो बात पूछी। दरअसल वो ऐसा इसलिये है कि इस बार हम जिस आंदोलन वालों को माल सप्लाई कर रहे हैं, उन लोगों ने खून सने कुर्ते ही मांगे हैं, शायद मीडिया को दिखाने या मुआवजा हासिल करने का कोई जुगाड़ होगा उन लोगों का। हमें क्या हमें पैसा मिला, आर्डर मिला, हमें अपना आर्डर पूरा करना है, अब ये तो वो लोग जानें कि उनकी रोटी आटे में पानी मिलाकर तैयार होगी या आटे में खून मिलाकर।''

ये कहकर सिगरेट का धुँआ उड़ाता हुआ और जुम्मन को कुछ नोट थमाकर वो बन्दा चला गया।

जुम्मन ने जमीला को कुछ पैसे दिए और कहा- ''तू जाकर कुर्ते के कपड़े ले आ, मैं खून का जुगाड़ करता हूँ। ब्लड बैंक से खून खरीदने से बेहतर है कि मैं खुद अपना खून निकलवा दूं। खून खरीदने के पैसे बच जाएँगे तो कुछ दिन और हमारी रोटी चल जायेगी।''

जमीला ने बड़े अविश्वास से जुम्मन को देखा, न वो कुछ बोल पा रही थी और ना ही कुछ समझ पा रही थी, अलबत्ता हैरानी उसके चेहरे पर नुमायां थी और आंसुओं से उसकी आंखें झिलमिला रही थीं।

जुम्मन के पास भी जमीला के सवालों का कोई जवाब ना था। उसने बीड़ी का लंबा कश लिया और फिर बेतरह खांसता हुआ निकल गया। जमीला उसे जाते हुए देखती रही कि उसका पति खून बेचने जा रहा है। अचानक जमीला को लगा कि उसकी आंखों में नमकीन आसुंओं के साथ गर्म खून भी उतर आया है।

-मालती कुंज कालोनी, आनंद बाग,
बलरामपुर (उ.प्र.) 271201
मोबाइल 9956919354

■

पारस दासोत स्मृति लघुकथा सम्मान 2022

■ डॉ. मंजु सिंह

जादुई चश्मा

''जादुई चश्मा, जादुई! आइए ले जाइए, जादुई चश्मा। आपने ऐसा चश्मा न कभी देखा होगा न सुना होगा।''

''आइए! ले जाइए। मूल्य केवल 2000 रुपये।''

वे चारों इस दुकान पर रुके।

''अबे कौन सा जादू है बे इस चश्मे में?''

''ऐसी कौन सी जन्नत दिखा देगा बे ये, जो हमें इसके बिना नहीं दिखती?'' वे चारों एक दूसरे की ओर देखकर ठहाका मार कर हँस दिए।

''साहब, ये दिखाता कम महसूस ज़्यादा कराता है, इसे पहन कर जिसके भी बारे में सोचो आप उसी के जैसा महसूस करेंगे।''

''साले, क्यों दुनिया को बेवकूफ..... ला दिखा।'' कहते हुए एक ने चश्मा लगभग छीन लिया दुकानदार के हाथों से। बड़ी शान से चश्मा आँखों पर चढ़ाया और गर्व से दूसरों की ओर देखा। वे सब हँस रहे थे।

अचानक ही उन सब के चेहरे विद्रूप से होने लगे। अब उसे उनसे बहुत डर लग रहा था। अचानक वह ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगा। वे अभी भी उसके इस अभिनय को देखकर हँस रहे थे।

''वाह... वाह! क्या बात है!''

''गजब का एक्टर है साले तू तो....!''

''अबे! किसकी ऐक्टिंग कर रहा है.... (एक गंदी गाली के साथ बेशर्म हँसी।)

उसने लपक कर एक की गर्दन पकड़ ली और उस पर घूँसे व थप्पड़ बरसाने लगा। जिसकी गर्दन दबोची गई वह पहले तो हँसा पर एक ही क्षण में उसे लगा कि मामला गम्भीर है और उसने खुद को छुड़ाते हुए उसे दूर धकेल दिया।

अब तो जैसे वह पागल हो गया था। चीखते और रोते हुए वह बाकियों पर भी झपटने लगा। उन सब को कुछ समझ नहीं आ रहा था। खुद को छुड़ाते और उसे गालियाँ देते हुए उन्होंने उसे ज़मीन पर गिरा दिया।

अब वह अचानक स्वयं को ही नोचने लगा। भरी सर्दी में पास पड़ी पानी की बोतल उठा कर खुद पर उड़ेल ली। वह पागलों की तरह अपना शरीर रगड़ रहा था, जैसे शरीर पर चिपकी हुई गन्दगी उखाड़ फेंकना चाहता हो। अपने मित्रों की ओर देखकर उसने नफ़रत से थूक दिया। बेबसी से चीख-चीख कर रोने लगा। जैसे उसके शरीर का एक-एक पौर दुख रहा हो। खड़े होने की ताकत तन में न हो। वह ज़मीन पर गिरकर छटपटाने लगा। कभी घबराकर अपने हाथों को ढाल बनाकर खुद को ढकता। कभी हिचकी बाँधकर रोता।

उसकी यह हालत देखकर बाकी सब घबरा गए उन्होंने झट से चश्मा उसकी आँखों से खींचकर फेंका व उसे उठाकर घसीटते हुए ले चले वह अभी भी जोर जोर से रोते हुए खुद को नोच रहा था- ''...नहीं छोड़ दो मुझे.... छोड़ दो मुझे... दया करो!''

चश्मा बेचने वाले के मुख पर संतुष्टि के भाव थे।

-दुबई, यू.ए.ई.
आरयू-21, विशाखा एनक्लेव, पीतमपुरा, नई दिल्ली-110034
मो. 9810034446

■

मधुदीप स्मृति लघुकथा सम्मान 2022

■ अंजू निगम

एक टुकड़ा सुकून

आज ही निखिल को घर अलॉट हुआ। घर देख कर उसका मन खट्टा हो गया। ये तो शुरू होते ही खत्म हो गया।

निखिल की पोस्ट के हिसाब से जो घर उसे अलॉट होना था, उसमें लंबी लाइन लगी थी। उस हिसाब से तो रिटायरमेंट तक भी उसका नंबर नहीं आ पाता।

''जब मुझे ही इस घर में शिफ्ट होने की बात पर इतनी झिझक हो रही है, मानसी तो इसे सिरे से खारिज कर देगी। पीछे तो इतनी जगह छोड़ दी। इससे तो अच्छा था कि इसी घर को थोड़ा खुला बना देते।'' निखिल के मन ने खाका खींचा।

''क्या सोच रहे हैं सर? इस महानगर में और वह भी इतने वी.आई.पी एरिया में घर मिल जाना ही बहुत बड़ी

बात है। फिर इस घर को तो एकदम नया करके दे रहे हैं। दरवाजों और खिड़कियों के चौखट तक नये लग रहे है फिर आपका वह आदमी है न, नारायण, दम तक नहीं लेने देता हम लोगों को।'' पी.डब्ल्यू.डी का जुनियर इंजीनियर एक सांस में सब बातें कह गया। वह खुद आकर हाजिरी बजा रहा था, इससे ज्यादा और क्या हो सकता था।

''नागपुर में अभी हम जिस डुप्लेक्स घर में रह रहे थे न, उसमें इस तरह के तीन घर समा जाये। छोटे घर से बड़े घर में जाना तो आसान होता है, बड़े घर से छोटे घर में जाना बेहद कठिन। सामान भी तो बढ़ता है।'' निखिल परेशान सा बोल उठा।

''ये सब तो आप देख लो, सर पर यहाँ आपको तीन बेडरूम का प्राइवेट घर, चालीस से कम का नहीं मिलेगा। इस जगह से तो आपका ऑफिस भी पास है।'' जुनियर इंजीनियर ने सच्चाई रखी।

निखिल हर परिस्थिति को तौल रहा था। सीनियर क्लास वन ऑफिसर के हिसाब से ये घर उसे दड़बे से ज्यादा नहीं लगा। फिर भी...

''शाम को मैडम देख लेगीं। वही हरी झंडी दिखायेगी तब आगे की देखेंगे। सारे दिन तो उन्हीं को रहना होगा।'' निखिल हल्के मन से बोला।

दोपहर को मानसी ने अलॉट किया घर केवल झांक कर देखा फिर पड़ोस के घर की घंटी बजा दी।

''नमस्कार। हमें एम-24 अलॉट हुआ है। अभी काम हो रहा है तो कुछ समझ नहीं आ रहा। क्या मैं...'' मानसी ने बगल के फ्लैट में रह रही मिसेज शर्मा से अपनी बात रखनी चाही।

''अच्छा, आपको ही एम-24 अलॉट हुआ है? आप अंदर आईये न। मेरे घर को देख कर आपको थोड़ा अंदाजा लग जायेगा।'' मानसी की बात को बीच में ही काटती, बेहद खुश और अपनत्व भरे अंदाज में उन्होंने मानसी को घर में आमंत्रित करते हुये कहा।

बैठक खाने में रखे दीवान पर एक बुजुर्ग महिला को बैठे देख मानसी ने उनके पैर छुये फिर प्रश्नवाचक नजरों से श्रीमती शर्मा जी को देखा।

''आपके फ्लैट के ऊपर मखीजा जी रहते हैं। उनकी माँ है आप। मखीजा जी और भाभी को लखनऊ मकान की रजिस्ट्री करवाने जाना पड़ा। मुझे अम्मा के खाने-पीने का देखने को बोल गई थी तो मैंने अम्मा जी को यहीं बुलवा लिया। अकेले अम्मा का मन भी नहीं लग रहा था।'' शर्मा भाभी बड़ी सहजता से बता रही थी।

घर देख लेने और चाय के दौर खत्म होने के बाद मानसी उठ कर जाने को हुई तो शर्मा भाभी बोल उठी, ''आप पहली बार घर आई है, खाना खाये बिना जाने नहीं दूँगी।''

इतना अपनापन! मानसी का मन जुड़ गया।

''आज तो इजाजत दीजिए। जब पड़ोस में आकर बस जायेंगे तब जरूर आपके हाथ का खाना खायेंगे।'' होठों पर मुस्कान सजाये मानसी बोली।

लौटते ही निखिल का पहला सवाल था।

''किदवई नगर का घर अगर ठीक न हो तो बाहर घर देखना शुरू करते है। मुझे लगा ही था तुम्हें घर छोटा लगेगा।''

''हमारे दोनों बच्चें तो बाहर चले गये हैं। अब हमें बड़े घर से ज्यादा बड़े परिवार की जरुरत है।'' यह कहते हुये मानसी के चेहरे पर संतोष की रेखाएं फैल गई।

-C/o. श्री रामजी निगम, 57, ब्लॉक-बी,
पंडारा रोड, नई दिल्ली-110003
मो. 9479377968

■

सतीशराज पुष्करणा स्मृति लघुकथा सम्मान 2022

■ **विजय जोशी 'शीतांशु'**

पर्यावरण

वर्षों बाद उस शहर में उनका पुनः आगमन हुआ था। शायद प्रोफेसर साहब को 'पर्यावरण संरक्षण' व्याख्यान माला में उद्‌बोधन के लिए नगर विकास समिति द्वारा सादर आमंत्रित किया गया था। अपने व्यस्ततम समय में से किसी दबाव के चलते वे उपस्थित हुए थे।

वे आयोजन स्थल पर पहुँचने के लिए शहर के उस चौराहे से गुजरे, जहाँ कभी घना वृक्ष, पंछियों के कलरव के साथ चौराहे की शोभा बढ़ाया करता था। उसके नीचे प्याऊ की राझंण से प्यास बुझा कर यात्री सुस्ता भी लिया करते थे।

अब उस घने वृक्ष की जगह उसी चौराहे पर जनता को लुभाने के लिए लगाई गई, किसी नेता जी की काले पत्थर की मूर्ति ने ले ली थी।

वह मूर्ति को कार में से झांकते हुए देखे जा रहा था। और वह मूर्ति गर्व भाव से उस पर्यावरणविद् को चिढ़ा रही थी। उनके मन में विचारों की गहमा-गहमी शुरू हो गई। व्याख्यान के लिए उनके तय बिंदु स्वयमेव खारिज होते जा रहे थे। वाहन चालक ने गाड़ी रोक दी। शायद आयोजन स्थल आ गया था। उनकी एकाग्रता टूटी।

प्रोफेसर साहब ने शहर के नेताओं व जनता से खचाखच भरे हाल में अपने उद्‌बोधन में बस इतना ही कहा- ''आपके शहर में छायादार वृक्षों की जगह, काले चमकीले पत्थरों ने ले ली है। शायद पर्यावरण का प्रदूषीकरण नहीं, बल्कि राजनीतिकरण हो गया है। यहाँ पत्थर के कानों में मेरी आवाज चली जाए, मेरी इतनी सामर्थ्य नहीं है। यह कहकर प्रोफेसर साहब बिना पारिश्रमिक लिए लौट गए।

-सहस्रार्जुन मार्ग, महेश्वर, जिला खरगोन (म.प्र.) 451224
मो. 9617259535

■

निरंजन जमीदार स्मृति लघुकथा सम्मान2022

■ ऋचा वर्मा

बेनाम चिट्ठियाँ

''इन चिट्ठियों के विषय में आपको कुछ कहना है।''

साहब ने चार-पांच चिट्ठियाँ निकाल कर उसके सामने रख दी।

''ये मेरे पास भी आतीं हैं।''

श्लोका के पाँव काँप रहे थे, सो खड़े रह पाने के लिए उसे मेज के किनारों का सहारा लेना पड़ा।

''पता है, ये चिट्ठियाँ उच्च कार्यालय से लेकर मंत्रिमंडल सचिवालय तक वितरित होती हैं।''

''जी।''

उसका सर मेज की पटल पर झुका था, आँसुओं के कारण दृष्टि कदाचित धुंधली सी हो गई थी।

''कुछ अंदाजा है..कौन है इन चिट्ठियों के पीछे?''

साहब की आवाज में कठोरता और सहानुभूति के मिले-जुले भाव को श्लोका ने स्पष्ट तौर पर महसूस किया।

''बिल्कुल सर, एक पूरा समूह है, भेड़ियों का.. सफेदपोश भेड़ियों का...'' उसने साहब के साथ बैठे चमचे सरीखे सफेदपोश कर्मी को घूरते हुए कहा।

अब तक साहब के बात करने के लहजे ने उसे सामान्य कर दिया था, उसके पैर मजबूती से धरती पर खड़े हो गए थे और सब कुछ साफ-साफ दिख रहा था।

''इसमें आपके विषय में इतनी अश्लील बातें लिखी गईं हैं.. अच्छा, आपके परिवार में कौन-कौन है.. आप पुलिस से शिकायत क्यों नहीं करतीं..?''

एक के बाद एक इतने सारे प्रश्नों की बौछार ने भी उसे विचलित नहीं किया।

''सर ,पति के मौत के बाद अनुकंपा के आधार पर नौकरी दिलवाने के लिए मैं व्यवस्था की बहुत आभारी हूँ, मैं और मेरे बच्चों के अलावा कोई नहीं रहता है हमारे साथ, रही पुलिस में शिकायत की बात, तो दस वर्षों तक का पति का साथ और संरक्षण ने...'' कहते-कहते उसकी आवाज पुनः रूंध गई थी।

''मैं इनकी दाद देता हूं, दूसरा कोई होता तो पता नहीं क्या कर बैठता!''

'आत्महत्या' शब्द को लगभग बीप करते हुए एक कुटिल मुस्कान के साथ सफेदपोश श्लोका से मुखातिब था।

''इतनी कमजोर नहीं बनना है मुझे...।''

श्लोका ने तल्खी के साथ कहा।

''कितने जख्म दिए हैं इन चिट्ठियों ने, इस बेचारी को!''

इस बार सफेदपोश साहब से मुखातिब था।

''शर्माजी, जरा आप इस मामले को देखिए, बंद होना चाहिए यह सब!''

कहते-कहते साहब थोड़ा रुके, फिर श्लोका के चेहरे को देखते हुए समझाने की मुद्रा में उन्होंने कहा, ''ये कोई अंदरूनी जख्म नहीं है शर्मा जी, बाहर से फेंके गए कीचड़ हैं, पानी पड़ते ही धुल जाएंगे।''

-एल-14, लखन अपार्टमेंट, रोड नं. 39
अनीसाबाद, पटना (बिहार) 800002
मो. 8969643173
ई-मेल : vermaricha966@gmail.com

■

एन. उन्नी स्मृति लघुकथा सम्मान 2022

■ विजयसिंह चौहान

नई राह

''...ऑर्डर-ऑर्डर, विवाह विच्छेद के बाद आज से आप पति-पत्नी नहीं रहे,'' कहते-कहते साहब ने फाइल हमेशा के लिए बंद कर दी।

पलकों की कोर से लुढ़के आंसुओं की बूंद से नम कागज पर कुछ शब्द सरला को खटक रहे थे। वही विश्वास अपनी विजयी मुस्कान बिखेरते हुए कक्ष से बाहर चला गया।

अपने स्थान पर जड़ सरला के कान में पुराने शब्द गूंज रहे थे.... पिता कहते थे, शादी के बाद से पति का घर ही उसका है। आज पति से विवाह विच्छेद हो गया। उसे समझ नहीं आ रहा कि अब कौन सा दर उसका है?

तभी, साहब ने सरला को पुनः पुकारा, ''क्या हुआ? विवाह विच्छेद के आदेश में कोई त्रुटि है?''

''नहीं साहब!... इस कागज पर मेरे नाम के साथ पति का उपनाम मुझे बार-बार खटक रहा है। जब विवाह बचा नहीं तो फिर मैं अपने पूर्व पति के नाम या उपनाम का सहारा लेकर क्यों पहचानी जाऊँ? कृपा करके उनका उपनाम हटा दीजिए ताकि मैं अपने स्वयं की पहचान से नई राह बना सकूँ।'' कहते-कहते सरला के आत्मविश्वास का सूरज चमकने लगा।

30, एडवोकेट चेम्बर,
म.प्र. उच्च न्यायालय परिसर, इंदौर
मो.9691555365

■

चंद्रशेखर दुबे स्मृति लघुकथा सम्मान 2022

■ किंशुक गुप्ता

स्टोन पेपर सीज़र

उन्हें यह खेल इसलिए इतना पसंद था–तीन विकल्प और तीनों एक-दूसरे पर भारी। अगर उँगलियों से बनाई कैंची कागज़ कतरती, तो पत्थर से चकनाचूर भी हो जाती। कागज़ सबसे कमज़ोर जान पड़ता, लेकिन वो भी पत्थर को लपेट उसे निष्प्रभ कर देता। तीनों कब से खेल में मशगूल थे, लेकिन किसी निर्णय तक नहीं पहुँच पा रहे थे।

तब रोहन को एक तरकीब सूझी। उसने दोनों हथेलियों को बम फटने की मुद्रा में फैला लिया।

''मैं जीत गया। बम सब पर भारी है। बंदूक, कैंची, कागज़, पत्थर सब पर,'' उसने कहा।

''यह तुझ से किसने बताया?'' मोहित ने सिर खुजलाते हुए पूछा।

''तू सी.आई.डी. नहीं देखता क्या... देखा नहीं कैसे एक बम फटने पर सब धूल-धूल हो जाता है। लोग दूर-दूर पटके जाते हैं। चेहरे काले पड़ जाते हैं। शरीर पर गहरे ज़ख्म हो जाते हैं।'' ईशान ने जवाब दिया।

''मेरी मम्मी भी यही कहती हैं कि पापा बंदूक से लड़ रहे थे जब उन पर बम गिरा और वो गायब हो गए। अब वो घर नहीं आते।'' रोहन ने मासूमियत से कहा।

आसमान की ओर अपनी हथेलियों से बम बनाते हुए तीनों बच्चे चिल्लाए, ''बम को कोई नहीं हरा सकता।''

बी-36, विक्रम नगर, फिरोज़ शाह कोटला
किले के नजदीक, दिल्ली–110002
मो. 9560871782

■

रवि प्रभाकर स्मृति लघुकथा सम्मान 2022

■ डॉ. नीना छिब्बर

पत्थर बुद्धि

गर्मी की दोपहरी में विशाल पीपल की शाखाओं पर पक्षी सुस्ता रहे थे कि अचानक पास पड़े पत्थरों के ढेर में से सिसकियाँ सुनाई दीं। पक्षियों ने सोचा मन का भ्रम है पर नहीं, नीचे पत्थर आपस में बातें कर रहे थे।

''ना जाने मानव जाति को क्या हो गया है? सत्ता, स्वार्थ, धन, नाम, धर्म, उत्सव या बेवजह ही किसी के भी नाम पर हमें हाथों में लेकर हमारे अस्तित्व को कलंकित करता है।''

दूसरे पत्थर ने दर्दीली आवाज में कहा कि ''मैं तो अब मनुष्य के साये से भी डरने लगा हूँ। कभी-कभी तो

मन करता है कि पाताल लोक में चला जाऊँ। एक समय था जब 'मानव की बुद्धि पर पत्थर पड़ गये हैं' यह सुनकर क्रोध आता था पर अब तो सच में चाहते हैं कि बुद्धि पत्थर हो जाए तो विनाश रुक जाए। नहीं तो कुदरत ही हमें हाथ दे दे ताकि हम मानव का हाथ रोक सके।

17/653, चौपासनी हाऊसिंग बोर्ड
जोधपुर (राज.) 342008
मो. 9461029319

■

प्रशंसित लघुकथाएँ

■ **डॉ. चंद्रेश कुमार छतलानी**

द्विवंशी

हमारे ब्रह्माण्ड के समानांतर एक दूसरे ब्रह्माण्ड में वह धरती, थी तो बिलकुल हमारी ही धरती की तरह, लेकिन उस का समय हमारे समय से हज़ारों वर्ष पीछे था।

उस समय उस धरती पर द्वापर युग चल रहा था। युधिष्ठिर को युवराज बनाने के राजसूय यज्ञ समारोह का आरम्भ श्रीकृष्ण की पूजा से करने पर, शिशुपाल क्रोध में भर गया और श्रीकृष्ण को अपशब्द कहने लगा। कृष्ण मुस्कुराते हुए उसकी गालियाँ गिन रहे थे।

सौ गालियाँ होते ही कृष्ण ने शिशुपाल को सावधान किया, लेकिन शिशुपाल ने अनसुना कर एक और गाली कृष्ण को दे ही दी। वह चीखते हुए बोला, ''कृष्ण, तुम्हारे कुछ वशंज ऐसे भी होंगे, जो नाम के तुम्हारे, लेकिन होंगे मेरे।'' यह सुनते ही कृष्ण ने सुदर्शन चक्र चला कर शिशुपाल की गर्दन काट दी। पलभर में ही गर्दन बहुत दूर जा गिरी और रक्त के छींटे तो उस धरती को भी पार कर गए।

रक्त के वे छींटे तैरते हुए उस ब्रह्माण्ड से बाहर आकर, हमारे ब्रह्माण्ड में पहुंच, हमारी धरती तक आए और यहाँ की नई हवा पाकर उत्प्रेरक विषाणु बन कई लोगों के रक्त में मिल गए। रक्त में घुलकर उन्होंने अपने ही प्रकार का रक्त भी बना लिया।

और तब से मिले-जुले रक्त वाले वे सभी लोग श्रीकृष्ण की जय तो कहते हैं, साथ में शिशुपाल की तरह गालियां भी देते हैं। जिनकी गिनती कोई नहीं कर रहा।

-3 प 46, प्रभात नगर, सेक्टर-5
हिरण मगरी, उदयपुर (राज.) 313002
मो. 9928544749
ई-मेल : chandresh.chhatlani@gmail.com

■

■ **डॉ. अशोक बैरागी**

भूल

नए मकान के मुहूर्त पर मेहमानों और पड़ोसियों का तांता लगा हुआ था। सब लोग अपनी औकात से बढ़कर खूब महँगे-महँगे उपहार और बधाइयाँ दे रहे थे। आलीशान हवेली हर आधुनिक सुविधा से लैस और उतने भव्य भोज का आयोजन देखकर सब लोग दाँतों तले ऊँगली दबाने को विवश हो रहे थे। उपहार, बधाई और खाने-पीने से निपटकर चलते-चलते मेरा मन मौसी से मिलने का हुआ। ''अरी! मौसी, तेरा प्रभाकर तो बड़ा होशियार निकला। कितना जल्दी बड़ा आदमी बन गया और इतना बड़ा घर भी बना लिया। अब ठाठ-बाठ से रहना तू इसमें।'' मौसी के पास बैठते हुए मैंने कहा।

तुरंत मौसी के आँखों में चमक आ गई और सीना गर्व से फूल गया।

''वैसे मौसी, भाई ने कमाल कर दिया। ड्राइंग रूम, स्टडी रूम, बेड रूम, लॉबी और किचन सब कुछ शानदार! अलग-अलग, पर मौसी तुमने अपना कमरा तो दिखाया ही नहीं।'' मैंने यूँ ही पूछा लिया।

''अरे! अब तुम्हें क्या बताऊँ... वो क्या है कि मेरा बेटा बचपन से ही बहुत भुलक्कड़ है, अब देखो ना! इस नए घर में मेरा कमरा बनाना भी भूल गया।'' कहते-कहते मौसी की आँखों में वेदना तैर गई।

राजकीय कन्या उच्च विद्यालय, हाबड़ी (कैथल)
मो. 9466549394
ईमेल : drashokkumarjrf@gmail.com

■

■ **वीरेन्दर 'वीर' मेहता**

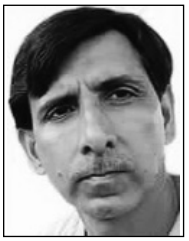

अग्नि संकल्प

मुखाग्नि के साथ चिता प्रज्वलित हो गई है, कुछ ही देर में चिर निद्रा में सोया 'आशी' सदा के लिए अतीत हो जाएगा। लगभग अकेला ही था, आशी भी हम तीनों मित्रों की तरह। कोई अपने नौकर के सहारे तो कोई अपने भाग्य के सहारे। बच्चों ने तो विदेशी ज़मीन पर ऐसा डेरा डाला कि लौटकर आने की बात ही नहीं करते। ऐसे में सुबह के अलार्म के साथ 'मोबाईल-व्हाट्सएप ग्रुप' पर एक दूसरे की कुशलता जान लेना नियम बन गया था। लेकिन आज ग्रुप में 'उसका' का न आना ही हमें आशंकित कर गया था।

...अग्नि की लपटें अब तपिश पैदा करने लगी थी। गिने-चुने लोगों के साथ मैं भी कुछ हटकर खड़ा हो गया। नजरें एकटक आकाश की ओर उठती लपटों पर जा लगी। मन कहीं गहरे सोचने लगा था, उम्र के आख़िरी पड़ाव पर खड़े हम मित्रों में से, आज नहीं तो कल सबने चले जाना है। लेकिन क्या अंतिम क्षण में गंगा जल देने वाला भी कोई होगा हमें? कल रात तक आशी जाने कितने सही-ग़लत काम करके, बनाए अपने आशियाने और भौतिक चीजों के मोह-माया के धागों में उलझा हुआ था। न वह सब कुछ छोड़ पुत्र के पास जाने को तैयार था और न पुत्र विदेश से लौटकर आने को तैयार था। लेकिन अब, अब उसके 'सब कुछ' छोड़ जाने के बाद पुत्र आएगा और अपने कर्तव्य निभाकर उसके आशियाने को बेच हमेशा के लिए लौट जायेगा। शायद हमारी भी यही नियति होगी; किसी की कम, किसी की ज़्यादा।

...चिता की अग्नि पूरी तरह से प्रज्वलित हो चुकी थी। आए हुए सभी लोग दूर बैठकर 'कपाल क्रिया' की प्रतीक्षा करने लगे। और उसके बाद सभी फिर उसी दुनिया में लौट जाएंगे जहां हर पल लाभ-हानि में बटा हुआ है। मन फिर गहरे डूब गया। ...क्या छोड़कर जा रहे हैं हम? ये भौतिक वस्तुएं जिन्हें संभालने वाले जीते जी हमारे साथ न हुए तो जाने के बाद उनके मन में, कितने दिन रहेंगे हम? और ये हमारा शरीर, इसके अवयव; जिन्हें यहीं आकर अग्नि में नष्ट हो जाना है। और जिसे पूरा करने के लिए कोई अपना होगा भी या नहीं?

चिता की अग्नि एकाएक तेजी से प्रज्वलित हो उठी और जाने कैसे, अनायास ही उसकी तपिश मन की गहराई में जा समाई। मस्तिष्क में एक विचार उठा और संकल्प रूप में हृदय में स्थापित हो गया। अग्नि से उठती लपटों में विलीन होती मित्र की अस्थियों के बीच अपनी देहदान की प्रक्रिया को प्रस्तावित करने का एक धुंधला सा संकल्प पत्र, मेरे सामने झिलमिला रहा था; जिसे भरने का निश्चय अग्नि की तपिश की तरह प्रखर होने लगा था।

एफ-62, फ्लैट नं. 19, गली नं. 7,
मंगल बाजार के पास, लक्ष्मी नगर, दिल्ली-110092
मो. 8130607208

■

■ **अंजु अग्रवाल 'लखनवी'**

नई तकनीक

वह परिवार के वरिष्ठ सदस्य थे।

वह परिवार की नव विवाहिता नवयुवती।

पुरुष ने अत्यंत ध्यान से देखा..

युवती सकपकाई और पल्लू लम्बा खींच लिया।

पुरुष सचेत हुआ..

पैंतरा बदला..

अभिनय प्रारंभ किया.. आशीर्वाद के बहाने टटोला।

युवती सचेत हुई।

गौर से पुरुष की ओर देखा और उसकी निर्लज्ज आंखों में मंशा पढ़ ली।

किसी से ना कह पाने की विवशता मे अतिरिक्त सावधानी ओढ़ ली।

घायल साँप फनफनाने लगा।

युवती को चरित्रहीन साबित किया गया!

परिवार की गरिमा हनन का आरोप लगा। घर छोड़ने का फरमान मिला।

पुरुष अपनी जीत का जश्न बना पाता इससे पहले ही स्त्री ने मोबाइल पर ऐसी-ऐसी क्लिप भेजीं कि पासा पलट गया।

सब युवती के कदमों पर पड़े थे।

'तपस्या', 7, गुलाब बाड़ी, एचएलबी स्कूल के पास
अजमेर (राज.) 305007
मो. 7014498185

■

क्षितिज आयोजन समिति

सतीश राठी
(अध्यक्ष)

डॉ. वसुधा गाडगिल
(उपाध्यक्ष)

अंतरा करवड़े
(उपाध्यक्ष)

दीपक गिरकर
(सचिव)

सुरेश रायकवार
(कोषाध्यक्ष)

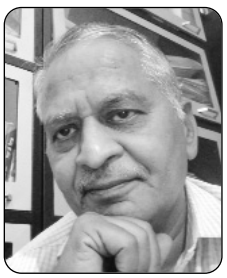

चरणसिंह अमी

ज्योति जैन

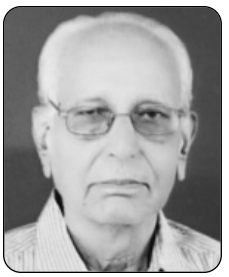

सूर्यकांत नागर

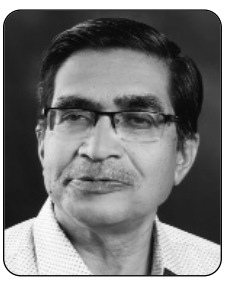

उमेश कुमार नीमा

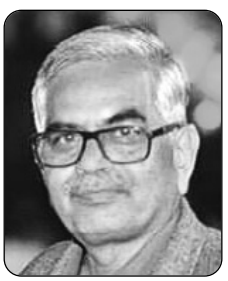

ब्रजेश कानूनगो

अदितिसिंह भदौरिया

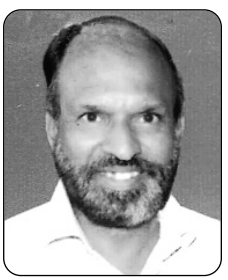

संतोष सुपेकर

यशोधरा भटनागर

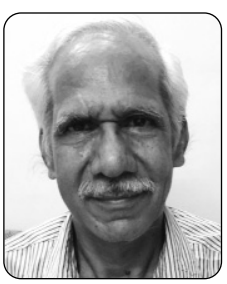

दिलीप जैन

पुरुषोत्तम दुबे

जितेन्द्र गुप्ता

क्षितिज आयोजन समिति

रश्मि चौधरी

विनीता शर्मा

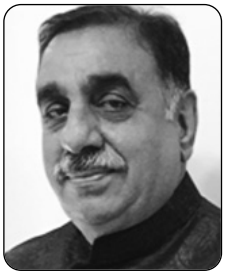
ललित समतानी

बालकृष्ण नीमा

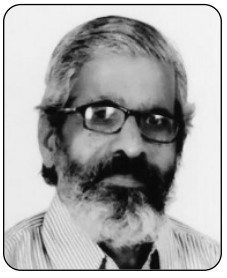
प्रदीप नवीन

विश्व बंधु नीमा

दौलतराम आवतानी

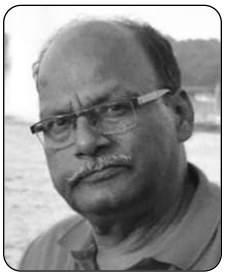
किशन कौशल शर्मा

आर.एस. माथुर

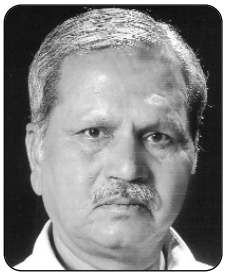
अश्विनीकुमार दुबे

नंदकिशोर बर्वे

नरेन्द्र जैन

निधि जैन

सीमा व्यास

डॉ. चंद्रा सायता

राममूरत राही

क्षितिज परिवार को
हार्दिक शुभकामनाएँ

HJH

Haji Moh. Jamil Habib & Sons

FRUIT COMMISSION AGENT

Watermelon, Muskmelon & Papaya Suppliers

Haji Sahab	Rais Bhai	Anis Bhai
9425478086	9425478136	9425077590

Shop No. 36, New Fruit Market, A.B. Road
INDORE (M.P.)
Phone : (S) 2330192, (R) 2440800

With Best Compliments to 'KSHITIJ'

M.M. ENTERPRISES

MANISH
9300072111

GANDHIJI
9425351089
8319525968

Mfg : Sofa Set, Dining Set, Double Bad, Revolving & Visitor chairs, School Furniture & All types of Steel Furniture

Office : 952, Sudama Nagar, INDORE
Work : S/2-10, Scheme No. 71, Mechanic Nagar,
Behind Distt. Hospital, Dhar Road, INDORE
email : manishmahajan1075@gmail.com

'क्षितिज' को शुभकामनाओं के साथ

श्रीमती नविता काले
एवं
कु. मिनौती काले
की
पुण्य स्मृति में

प्रदीप 'नवीन'

1-ए, सिल्वर ऑक्स, अन्नपूर्णा रोड, इंदौर-452009
मो. 9826439386

'क्षितिज' परिवार की शुभकामनाओं के साथ

संस्कृति डायमंड

Deals in Precious & Semi Precious Stones

नरेन्द्र कुमार नरोत्तमदास जैन (बगड़िया)

67, बड़ा सराफा, 104, तिरुपति मार्केट,
फर्स्ट फ्लोर, इंदौर (म.प्र .)
फोन : (ऑ.) 0731-2504840, मो. 9827031844
ई-मेल : vbagadia73@rediffmail.com

'क्षितिज' परिवार को
हार्दिक शुभकामनाओं के साथ

SHAIN TRADERS

POTATO, ONION, GARLIC ORDER SUPPLIER

Sabir Bhai	Shakir Bhai	Nasir Bhai
9826037701	**9826237700**	**9977111161**
9424841705		**9111112681**

269, New Aloo-Pyaz Mandi, A.B. Road, INDORE-12 (M.P.)
Phone : (O) 0731-2330436, (R) 2330157

क्षितिज परिवार को हार्दिक शुभकामनाएँ

ARNEJA

BUSINESS GROUP

Joginder Singh Arneja
9826025085

Jaswinder Singh Arneja
9893024085